Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारिका

कहानियों और कथा जगत की संपूर्ण पत्रिका

वर्ष : 28, अंक : 437, सितंबर, 1988

The Times of India — One Hundred and Fifty Years

प्रकाशक :
रमेश चंद्र

संपादक :
अवधनारायण मुद्गल

उपसंपादक :
सुरेश उनियाल
महेश दर्पण
वीरेंद्र जैन

विभागीय सहयोगी :
बिमला रानी
ज्ञान सिंह

प्रोडक्शन :
हरेंद्र सिंह नेगी
सुनील चौहान

सज्जा प्रबंधक :
लोकेश भार्गव

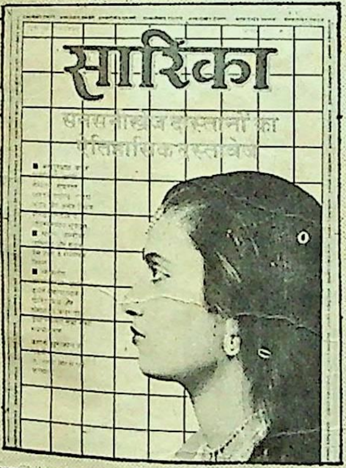

आवरण पारदर्शी : धर्मवीर जयनर
आवरण सज्जा : सुधीर गुप्ता
अंक सज्जा : हरिप्रकाश त्यागी

सनसनीखेज दास्तानों का ऐतिहासिक दस्तावेज

कथा रचनाएं

9. सती : **प्रणव कुमार बंद्योपाध्याय**
16. त्यों-त्यों प्रकट होत... **गोविंद मिश्र**
37. सबक : **गौरीशंकर कपूर**
48. आखेट : **कमल कुमार**
64. रूपहली रातें : **फ्योदार दोस्तोयेव्स्की**

सनसनीखेज दास्तान खंड

23. न्याय के साथ खिलवाड़
26. अमरीकी राष्ट्रपति पर मुकद्दमा
28. आस्ट्रिया की अदालत में
30. हत्या स्याम के लोकप्रिय राजा की
32. चार्ली चैप्लिन पर साहित्यिक चोरी का मुकद्दमा
43. गैलीलियो, एजरा पाउंड, सुकरात और आस्कर वाइल्ड पर चलाये गये मुकद्दमे.

160वीं जयंती पर विशेष

34. लेव ताल्सतोय की लघुकथाएं

साक्षात्कार

54. कहानी खुराफात की जड़ है : **नामवर सिंह के साथ उदय प्रकाश और सुधीश पचौरी की बातचीत**

अन्य आकर्षण

8. आपकी बात
20. दास्ताने अलफ-लैला
41. रहस्य रोमांच
46. फाइल पढ़ि-पढ़ि जग मुआ **गोपाल चतुर्वेदी**
51. प्रहसन : **महाराज कृष्ण काव**
58. अनजानी प्रेम कथाएं : **बाला दुबे**
60. अपराध कथाएं
69. कृतियां
72. भाषा : अस्मिता की पहचान : **डा० नारायण दत्त पालीवाल**
73. सारिका कथा पहेली
74. धारा के विरुद्ध
75. हलचल

कापीराइट © 1988. बैनेट, कोलमैन एंड कंपनी लि., विश्वभर में सर्वाधिकार सुरक्षित, बिना पूर्वानुमति के सामग्री का किसी भी रूप में पुनर्प्रस्तुतीकरण वर्जित.

संपादकीय कार्यालय :
10 दरियागंज,
नयी दिल्ली-110002
दूरभाष : 271911

विज्ञापन व प्रसार
7, बहादुरशाह जफर मार्ग
नयी दिल्ली-110002
दूरभाष : 3312277

अन्य कार्यालय

डा. दादाभाई नौरोजी मार्ग
बंबई-400 001

फ्रेजर रोड, पटना

अनुपम चैंबर्स, टांक रोड
जयपुर

139 आश्रम रोड
अहमदाबाद-1

13-1-2 गवर्नमेंट प्लेस ईस्ट
कलकत्ता-700062

''गंगा गृह'' तीसरी मंजिल
6-डी, नंगामबक्कम हाई रोड
मद्रास-600034

88, महात्मा गांधी रोड,
बंगलूर

407-1, तीरथभवन, क्वार्टर गेट,
पुणे-411 002

326, स्टेशन एप्रोच, सडबरी
वैम्बले मिडिलसेक्स, लंदन यू.के.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपकी बात

सच कहूं तो

सारिका के माह जून एवं जुलाई 88 के विषकन्या अंक-1 और 2 आद्योपांत पढ़े सच मानिये यदि बेहद स्पष्ट शब्दों में कहूं तो पिछले दो वर्षों में इन दोनों अंकों के मुकाबले एक भी अंक नहीं निकला.

दोनों अंकों की किसी भी एक रचना को उत्कृष्ट कहना दूसरी के साथ अन्याय करना है.

□ सुलभा जैन, दमोह (म.प्र.)

कोबरा बनाम विषकन्याएं

श्याम शर्मा की 'अंतःपुर की कुंआरी', जेड.ए. बुखारी की 'हनीफा' काफी अच्छी रचनाएं रहीं, बधाई.

अंक के विशिष्ट लेख के रूप में 'अमृत में घुला जहर' में लेखक ने विषकन्याओं के यथार्थ स्वरूप को प्रकट करने का सार्थक प्रयत्न किया है. बधाई.

प्राचीन काल में नवजात कन्या को विष देना प्रारंभ कर दिया जाता था. विषकन्या निर्माण केंद्र गुप्त स्थान में अवस्थित हुआ करता था. जिसमें राजा के अत्यंत विश्वस्तों को ही प्रवेश की अनुमति हुआ करती थी. सामान्यतः यह महत्वपूर्ण प्रयोग किसी गुफा में होता था. कन्याओं के जिह्वा पर विषधरों का विषदंश कराकर संपूर्ण शरीर को विषमय कर दिया जाता था. सर्वाधिक आश्चर्यजनक बात तो यह है कि विषकन्या को जब सर्पदंश कराया जाता था तो अत्यंत प्राणघाती विषधर (संभवतः व्हाइट स्पाइटिंग कोबरा) भी इस क्रिया के उपरांत घंटों अचेत हो जाते थे. यह कोबरा अपनी फुत्कार से ही दुश्मनों का अंत कर देता है. इसका प्रक्षेप मैं स्वयं कैमूर के जंगली गांव में देख चुका हूं. जहां कोबरा के फुत्कार मात्र से करीब बीस मुर्गियों तथा उनके पचास पचपन चूजों का अंत हो गया.

कुछ विषकन्याएं तो अपनी वाक्‌बल से लक्षित शत्रुओं का अहित कर देती थीं. शिवानी की बहुचर्चित कृति 'विषकन्या' की कथा नायिका द्वारा बहुत खूब या सहजतापूर्णक अच्छा शब्द शत्रु को विनाश के अंधगर्त में ढकेल देता था. कुछ विद्वान तो इंद्र द्वारा कर्ण का प्रदत्त एकाग्नि की संभावना विषकन्या से करते हैं. इसका अर्थ यह होता है कि ये मात्र एक बार विषवमन करती थीं.

यह अंक निश्चय ही शोधप्रज्ञों के लिए अत्यंत सहायक सिद्ध होगा. सारिका से इसी तरह के अंकों एवं संयोजन की अपेक्षा है.

□ अमरेंद्र किशोर, सासाराम, (बिहार)

देश गया भाड़ में

मुख्य रूप से श्री अंसारी की 'पत्थर की अप्सरा', श्री परसाई की 'सर्वे और सुंदरी', श्री योगेश की 'घर-गमला' और हरि मोहन की 'सुकन्या' अच्छी लगी. धन्यवाद. 'सर्वे और सुंदरी' में जो स्थिति परसाई जी ने बताई है कि दो पाकिस्तानी स्त्रियां अपने देश में आकर आराम से देश के नक्शे ले जाती हैं और हमारा देशभक्त कहता है कि "कुछ नये नक्शे बन रहे हैं. मैं खबर दूंगा तो लेने तो आ जाओगी न" और यही वास्तविक स्थिति भी है. हमारे देश के नक्शे तो वे साहब ऐसे दे रहे हैं मानो उन्हें देश से कुछ लेना-देना ही न हो. सामने दो स्त्रियां क्या आ गयीं देश गया भाड़ में.

मुख प्रष्ठ काफी कलात्मक व लुभावना है. यह एक अच्छी बात है. वास्तव में मुखपृष्ठ ऐसा तो होना ही चाहिए कि पत्रिका के हस्तगत होने के पश्चात पाठक कुछ देर तो वहीं अटका रहे और फिर जब मूड के साथ पन्ने पलटे जाएंगे तो सब शुभ ही होगा. खैर, मैंने भी पन्ने पलटे. 'सर्वे और सुंदरी', 'विलक्षणा', 'सोने के घूंट' व 'सुकन्या' आदि कथा रचनाएं बहुत ही पसंद आयीं. गवेषणात्मक शैली में लिखे तीनों विशेष लेख भी पसंद आए.

□ रमाकांत, कालाकांकर (उ.प्र.)

और विषपुत्रों पर?

सारिका के विषकन्या अंक (जून-जुलाई) मिले. क्या होती है विषकन्या और अमृतकन्या? साहित्य हो या समाज कन्यायों का अपना रूप है ही कहां, उसके तो हर रूप को गढ़ा है अमृतपुत्रों ने, दूसरे शब्दों में कन्या किसी भी युग में सिर्फ इस्तेमाल हुई है कभी विषकन्या के रूप में कभी अमृतकन्या के रूप में, कभी नाक की प्रतीक बनकर कभी उपभोग की वस्तु और कभी सियायत सत्ता प्राप्त करने या बनाये रखने के हथियार के रूप में. उनमें से कुछ रूपों की झलक आपने दिखाई जरूर है. पर किसी दूसरे शब्द या अर्थ में— "जिन्होंने लोगों को अपने रूप जाल में फंसाकर विलक्षण कार्य किया." इस रूप जाल की फंतासी को बुना किसने? इसका जवाब है आपके पास? बस एक शब्द छाप दिया—विषकन्या. जिसका आधार बना कर आपने दो-दो अंक जाया भी कर दिये. इसी तरह के विकृत शब्द से उपजी है कुछ विकट शब्द शब्दावली. एक स्त्री जो तथाकथित पत्नी होती है अपने तथाकथित पति को एक स्त्री से दूर रखना चाहती है कहीं वह चुड़ैल अपने रूप जाल में फंसा न ले, तथाकथित साधक के लिए वह पुण्य पथ और साधना में बाधक पापिष्ठ, 'मायाविनी' तो किसी ऐयूयाश के लिए सुरा की प्याला या कंचन की चमक-सी 'उपभोग्या' चीज होती है. यह सभी शब्दावली अमृत संतान पुरुषों के लिए नहीं उसके लिए गढ़ा गया है जिसे समाज के ठेकेदार, सनातन पवित्र अमृत पुत्र पुरुष जब चाहे घर की चारदीवारी में बांधकर अमृतकन्या और चारदीवारी से बाहर धक्के देकर विषकन्या से विभूषित कर सके.

एक कैथरीन या किल्योपेट्रा जिनकी कहानियां सत्य कम किंवदंती अधिक हैं हालांकि सत्य तो अच्छे बुरे व्यक्ति चरित्र के सूचि पत्र में दाखिल होनी चाहिए न कि 'विषकन्या' कहकर हजारों करोड़ों ज्यूस, इंद्र, इदी अमीन, मुहम्मदशाह रंगीले या अतिशयोक्ति नहीं होगी, अगर कहा जाय आमद से आज तक किसी भी अमृत पुत्र का चेहरा बेदाग नहीं है तो बताइए कितने विशेषांक निकालेंगे आप विषपुत्रों पर?

□ रानी सिंह, परगना (पं. बंगाल)

मीठा जहर

मैं सारिका के 'विश्व साहित्य में विषकन्याएं' एक और दो पढ़ गया हूं. यह दोनों अंक पूर्ण रूपेण पढ़ जाने के बाद मुझे ज्ञात हुआ कि विश्व के सभी देशों में विष कन्याओं का प्रभाव किसी न किसी रूप में जरूर विद्यमान है. विषकन्याएं क्या होती हैं? इस प्रश्न का उत्तर मैं अब अच्छी तरह से समझ गया हूं. मुझे लगता है कि हमारे जैसे बहुत से पाठक इसका अर्थ विस्तृत रूप से जानने में सहायक हुए होंगे.

प्राचीन काल से ही भारतीय साहित्य में विषकन्याओं का स्थान है. पहले अप्सरा, फिर विषकन्या और अब वेश्या (काल गर्ल) के रूप में हमारे सामने विद्यमान है. विषकन्याओं को मैं 'मीठा जहर' कह सकता हूं. क्योंकि इसका प्रभाव मीठा जहर के रूप में ही किसी के अंदर प्रवेश करता है. जिस प्रकार मीठे जहर को पीने का तो बड़ा आनंद आता है ठीक इसी प्रकार विषकन्याएं भी हैं. मीठी-मीठी बातें करके धीरे-धीरे अपने आगोश में ले लेती हैं और अंततः अंत होता है बड़ा कष्टदायक. इनका अलग-अलग रूप में पूरे विश्व में एक छत्र राज्य है. दुनिया का कोई कोना 'मीठा जहर' से अछूता नहीं रह गया है.

□ रमेश प्रसाद सिंह 'नीरज', भोजपुर

खूंटा और खूंटे

धारा के विरुद्ध में 'खूंटा और खूंटे' के अंतर्गत अपनी कहानी 'खूंटे' (धर्मयुग-12 मई 85 अंक) की दिलचस्पी टिप्पणी पढ़ी. सिक्के का दूसरा पहलू बहुत ही सटीक और यथार्थ लिए हुए है. राजेंद्र राव की साफगोई ने मुझे सोचने पर मजबूर कर दिया कि लघु पत्रिकाओं के विषय में—दूसरी तस्वीर भी काफी अहमियत रखती है. अगर मेरा सोच उनकी तरह का होता तो शायद कहानी का एक दूसरा स्वरूप बन जाता. बहरहाल उनके स्पष्ट विवेचन व दो टूक बात करने को मैं नमन करता हूं. वे मेरी ओर से निश्चय ही बधाई के पात्र हैं.

□ आनंद अस्थाना, दरदोई (उ.प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

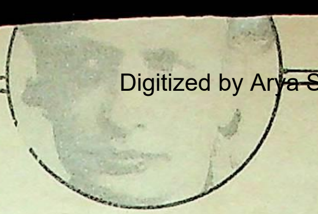

'खबर', 'गोपी गंज संवाद' जैसे उपन्यास और ''बारूद की सृष्टिकथा' व 'कस्बे का आदमी' जैसी क़हानियों के सुपरिचित रचनाकार.
संपर्क : डी-240, सर्वोदय एन्क्लेव, नई दिल्ली-110017

प्रणव कुमार वंद्योपाध्याय

यह समझ लेने के बावजूद कि उसकी इतने दिनों की कोशिश अब नाकाम नहीं जायेगी... वह कहीं यह भी समझ बैठी थी कि जिस शख्स के साथ वह घरौंदा बनाने का सपना देख रही है, वह एक बाजारू औरत के साथ बंधा हुआ है. कैसी अबूझ पहेली थी यह... क्या चारु समझ सकी?

सती

सुबह होने में बहुत वक्त बाकी नहीं था. दिवाकर लौटा तो देखा, चारु जाग रही है. वैसे आंखें बंद थीं. वे बंद ही रहीं. पहले जब भी दिवाकर लौटता, चारु को उठकर दरवाज़ा खोलना पड़ता था. हर बार वह झुंझलाती और दिवाकर एकदम खामोश हो जाता. अब कोई साल भर से कम से कम दिवाकर के लिए चारु को उठना नहीं पड़ता. पुराना दरवाज़ा बदल गया और 'लैच की' से दिवाकर खुद ही बाहर से दरवाज़ा खोल लेता है.

ज़ाहिर था, इतनी रात तक चारु सोयी नहीं. बात खासी हैरानगी पैदा करने वाली थी. शुरू-शुरू में चारु एक अदद बीवी की तरह लड़ पड़ती थी. लेकिन अब अमूमन रात के ऐसे वक्त निगाहों में तल्खी के बावजूद गले की आवाज़ बहुत ऊंचाई तक नहीं जाती.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिवाकर को अब यह सब [illegible] आदत पड़ गयी है. इसके अलावा चारु पर उसकी शिकायत भी नहीं है. एक दफा उसने कह भी दिया था, "शिकवा-शिकायत के लिए एक खास किस्म के रिश्ते को कबूल करना पड़ता है. मैं तुम्हारे और अपने बारे में गौर करता हूं तो एक खालीपन के अलावा कुछ और महसूस नहीं कर पाता."

इतनी बड़ी चपत खाकर भी चारु शेरनी की तरह उछल नहीं पड़ी थी. थोड़ी देर में दिवाकर उठकर बाहर निकल गया तो वह एकदम से फफक पड़ी थी. लेकिन एक दिन बीत गया तो उसने अपने आप को नये सिरे से तैयार कर लिया. समझ गयी थी, जिंदगी आंसूओं पर नावें छोड़कर पतवार चलाने के लिए थोड़े ही हैं! उसने दिवाकर से साफ कह दिया, "खालीपन का जिक्र तुमने किया था न! लेकिन वह तुम्हारे और मेरे बीच नहीं, सिर्फ तुम्हारे अंदर एक जहरीले नासूर की तरह पल रहा है. इस वजह से तुम बीवी को कभी बीवी नहीं कबूल कर पाये. असली बात तो यह है कि तुम अपने आपसे इस तरह हार गये हो कि हकीकत का सामना करने लायक हिम्मत तुम्हारे अंदर अब कतई नहीं रही."

दिवाकर ने एक सिगरेट जला ली थी. उस वक्त जवाब में महज यही किया जा सकता था. देर तक फिर चुप्पी तैरती रही. इतनी चुप्पी कि सिगरेट के धुएं के छल्लों के साथ समूचे कमरे में एक जबरदस्त घुटन उतर आयी थी.

दिवाकर की आंखें बंद थीं. चारु को उम्मीद थी, थोड़ी देर में यह शख्स कुछ उकसाने लायक जरूर बोल देगा. लेकिन फिर घंटा भर गुजर गया और बीच-बीच में सिगरेट सुलगाने के लिए माचिस की खच्चस के अलावा बाकी सिर्फ सन्नाटा था. इत्तफाक है कि अड़ोस-पड़ोस में भी कोई शोर-शराबा नहीं हुआ. उससे कम से कम माहौल का एक भारीपन जरूर टूटता. उस वक्त उतनी चुप्पी में से गुजरना चारु को अपने लिए बहुत मुश्किल लगा था. आखिर में जब माहौल बरदाश्त के बाहर हो गया, वह एकदम से उठी और दरवाजे को झटके के साथ खोलकर बाहर चली गयी.

इसके बावजूद दिवाकर खामोश था. दरवाजे को पूरी ताकत लगाकर खोलते ही खासी आवाज हुई थी. बंद आंखों और उंगलियों में फंसी सिगरेट के साथ यह शख्स फिर भी बुत-सा बैठा रहा.

घंटा भर और गुजर गया तो दिवाकर उठा. आलमारी में आधी बोतल विहस्की पड़ी थी. पता नहीं चारु की निगाहें वहां तक पहुंची नहीं थीं या उसने जान बूझकर नजरअंदाज कर दिया था. जब भी विहस्की की बोतल लेकर दिवाकर बैठता, चारु उस पर झपट्टा-सा मारती और बोतल को किचन तक ले जाकर उड़ेल देती. उस वक्त उसकी सांस फूल रही होती और गले की आवाज में खासी बदहवासी उतर आती. बहुत मजबूती न हो तो दिवाकर घर में बैठकर नहीं पीता. अपनी मजबूरी के लिए कई दफा वह चारु से भिन्नतें भी करता रहा है लेकिन उसका असर अमूमन नहीं ही हुआ. खास तौर पर पिछले डेढ़ेक सालों में.

चारु के सामने कभी-कभी दिवाकर खुद को इतना बेगाना महसूस करता कि दिमाग की नसों में बिजली गिरने का-सा एहसास होने लगता. यह एक ऐसा मामला है कि अकेले खामोशी में सह लेने के अलावा दिवाकर को कभी कोई और रास्ता नहीं नजर आया.

लेकिन शुरू के दिनों में ऐसा नहीं होता था. दिवाकर गिलास और बोतल लेकर बैठता तो कई बार चारु पकौड़े भी तलकर के

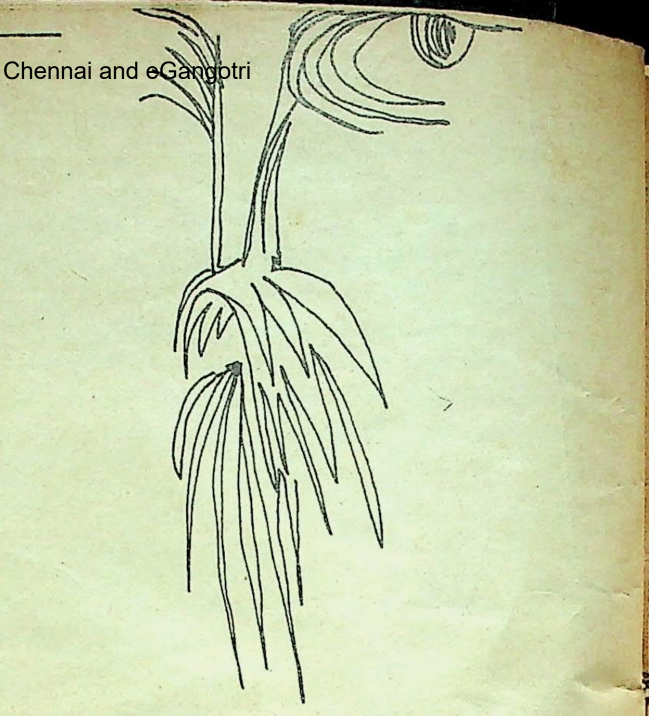

देती. दिवाकर समझ गया था, इस दरियादिली के पीछे चारु के अपने इरादे बिल्कुल साफ हैं. दिवाकर को हैरानी होती रही कि इस औरत में नासमझी की हद इस कदर बढ़ कैसे गयी जब कि वह होशियारी में कभी किसी से उन्नीस नहीं रही! चारु तब यकीन कर बैठी थी कि उसका पत्नीत्व थोड़ी देर से सही, रंग जरूर लायेगा. उसे लगता रहा, बात चंद दिनों की है, लिहाजा उल्टा-सीधा बोलकर रिश्ते में जहर की बेल बोने में उसे अक्लमंदी नहीं नजर आयी. लेकिन थोड़े अरसे में आहिस्ते-आहिस्ते सब कुछ बदलने लगा. चारु घर में बोतल लेकर बैठने पर फिर ऐतराज करने लगी. दिवाकर की मजबूरी इतनी थी कि चारु की बातों पर गौर करना उसके लिए मुमकिन नहीं रह गया था.

इसके बाद चारु खूंखार हो उठी थी. फिर से गिलास और बोतल के टुकड़ों से दिवाकर के तलवे लहूलुहान होने लगे. अपने खून से नज़र हटाकर हर बार यह शख्स चारु की आंखों को बहुत गौर से देखता और दार्शनिक की तरह बोल पड़ता, "तुम शायद यकीन न करो, फर्श पर फैले खून के ये दाग ही मेरा वजूद हैं. इनके साथ मैं इत्मीनान से इतनी उम्र तक जिंदा हूं और मैं मरूंगा भी इन्हीं के दरम्यान."

यह सब सुनकर चारु होंठ बिचका लेती. ज़ाहिर कर देती, इस तरह की सस्ती दार्शनिकता से प्रभावित होनेवालों में कम से कम वह नहीं है.

थोड़ी देर पहले चारु पूरी ताकत से दरवाजा खोलकर बाहर गयी तो दिवाकर को लगा, बाहर बरामदे पर मोढ़ा लेकर वह थोड़ा वक्त तो गुजार ही लेगी. फिर यह पता लगते ही कि अंदर का शख्स बोतल लेकर बैठा है, उसी रफ्तार से भीतर आएगी, जितनी तेजी से वह बाहर गयी थी. लेकिन ऐसा कुछ भी नहीं हुआ. दिवाकर खासा हैरान हो रहा था. थोड़ी देर बाद चारु अंदर आयी, शेल्फ में से एक किताब निकाली और दोबारा बाहर चली गयी. न चेहरे पर कोई आवेश नज़र आया न चाल में. उस दिन दिवाकर को यही लगा था कि अगर विहस्की के बजाय वह गिलास में संखिया का घोल उड़ेलकर भी पीना शुरू करता, चारु नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोकती. आखिर में अंजाम यह हुआ कि वह तीन महीने के लिए बिल्कुल खामोश हो गयी. दिवाकर अपने आप पर हैरान होता रहा कि चारु के इस सलूक के बावजूद अंदर से उसे कोई फर्क क्यों नहीं पड़ा!

अंदर घुसते हुए दिवाकर को लगा था कि बिल्कुल अभी अगर वह कभी लौटता, शायद बेहतर रहता. सुबह होने में बहुत बाकी रह भी नहीं गया था. लिहाजा वह तीनेक घंटे बाद ही अगर वापस आता तो दिन के उजाले की वजह से पूरे माहौल में एक फर्क जरूर नजर आ जाता. चारु शायद तब उनींदी आंखों से चाय की चुस्कियां ले रही होती. ऐसे मौकों पर बहुत मासूम लगती है वह. दिवाकर को यही लगता है. इस आदमी को अपनी मजबूरियों का सिलसिला हमेशा ही ऐसा लगता कि वक्त की परवाह करना कई बार उसके लिए नामुमकिन हो जाता. आज भी ऐसा ही हुआ. दो अखबारों के लिए स्तंभ की सामग्री पूरी की. शाम से वह कमला के पास रहा. लगातार पीते हुए उसने दो कविताएं लिखीं, अपने को टटोलता, अच्छी तरह ज़ाहिर हो जाता, इस औरत के सहारे के बिना उसका कोई मतलब कुल मिलाकर नहीं ही निकलता.

कमला के पास पहली बार जब एक खरीदार की तरह दिवाकर आया था, लानेवाला एक पुराना अजीज था. उसे शायद एक होनहार कवि के अंदर एक वीरानगी नजर आयी थी. आखिर में उसे लगा होगा कि यह वीरानगी इस कवि को थोड़े ही अरसे में खत्म कर देगी. बात पूरी तरह सच थी या नहीं, कहना मुश्किल होगा. लेकिन इतना आखिर कहा ही जा सकता है, दिवाकर के दोस्त का खयाल पूरी तरह गलत भी नहीं था.

उस दिन दिवाकर के पांव कांपे थे. शर्मीला वह पहले से ही था, अब बोलती भी बंद-सी हो गयी.

फिर बहुत वक्त नहीं लगा था. दिवाकर को जैसे खड़े होने लायक एक पक्की बुनियाद मिल गयी थी. कोठे पर बैठनेवाली बहुत मामूली शक्ल-सूरत की एक सांवली औरत की आंखों में कवि ने खुद का आविष्कार किया था. बस, इसके बाद बहुत जल्द कमला उसका आधार-सा बन गयी थी. यह सब कैसे हो गया, पूछा जाये तो दिवाकर खासा हैरान हो जायेगा. फिर आवेश में आकर शायद यही कहेगा, "कैसे हुआ; इस सवाल की कोई अहमियत नहीं है. अहमियत तो इस बात की है कि मैंने एक औरत में उसका पूरा का पूरा औरतपन देखा और उसके साथ खुद को जोड़ने के लिए मजबूर हो गया. जिस तरह अंदर की एक गहरी मजबूरी से कविताएं लिखता हूं, बिल्कुल उसी तरह इस अदद औरत के साथ प्यार भी करता हूं. यह मजबूरी न हो तो दिवाकर न तो कवि है, और न आदमी."

अभी कमला के पास से आने के बाद दिवाकर को लगा, एक दिन लौटने के बाद यह देखेगा, चारु एक लाश के रूप में बिस्तर या फर्श पर पड़ी हुई है. लेकिन उसे पूरा यकीन है, तमाम कोशिशों के बाद चारु उससे प्रेम नहीं कर पायी. इसलिए अगर वह खुदकशी करती है, उसकी वजह होगी अहम का एक पहाड़. दिवाकर को बखूबी मालूम है, वह चारु नहीं रह जायेगी. बल्कि कहना यह चाहिए कि इस अहम् के बगैर यह लड़की जिंदा ही नहीं रह पायेगी.

दिवाकर आहिस्ता से स्टूल पर बैठा गया. बिस्तर से थोड़े फासले पर.

अब चारु उठ गयी. चद्दर को कमर तक खिसकाकर दीवार पर पीठ टिकाए बैठ गयी.

दिवाकर को खासा सुरूर चढ़ा था. इसके बावजूद गले की आवाज नहीं लड़खड़ायी. पूछा, "इतनी रात गये जाग रही हो. तुम्हारी तबीयत शायद ठीक नहीं है."

चारु कुछ नहीं बोली.

कोने में टेबल लैंप जल रहा था. दिवाकर को उसकी रोशनी जरूरत से ज्यादा पीली और बीमार लगी.

फिर एक चुप्पी तैरती रही.

दिवाकर को जबरदस्त थकान महसूस हो रही थी. उसने दीवार पर पीठ टिकायी और आंखें बंद कर लीं. समझ गया था, चारु अब उसे देर तक घूरती रहेगी.

कोई आधे घंटे तक सन्नाटा फैलाता रहा. फिर चारु ने अपने को तैयार कर लिया. बोली, "तुम अपनी मर्जी से घर पर भी पी सकते हो."

दिवाकर को अचानक अगर बिजली का खुला तार भी छू जाता, इतनी हैरानी नहीं होती. उसने आंखें खोलीं और सीधी कर लीं.

चारु हड़बड़ा-सी रही थी.

"तुम्हारा खयाल है कि मेरा कोई घर है?" कोई खास जरूरत तो नहीं थी लेकिन दिवाकर तल्ख हो गया था.

चारु एकदम चुप. लगा, सामने बैठे इस शख्स से वाकई उसका कोई रिश्ता नहीं है.

"सवाल न तो घर का है, और न पीने का ही." दिवाकर बोला, "सवाल है मेरी मजबूरी का. मुझे चलने के लिए दो पांव चाहिए. और उन पांवों को अपने नीचे जमीन चाहिए. तुम जानती ही हो, वह जमीन मेरी बीवी बनकर तुम नहीं दे सकीं. लेकिन तुमसे यह मेरी शिकायत नहीं है. शादी से पहले ही मैं जानता था, तुम्हारी तरह की लड़कियां वह जमीन मुझे हर्गिज नहीं दे सकतीं, जिसकी मुझे जरूरत है.

चारु को आगे कुछ सूझ नहीं रहा था. लगा, उसका बोलना एकदम बेतुका हो गया है.

दिवाकर का नशा उतर गया था. मुमकिन है, नशे की वजह से ही वह अपनी गहराई की तलहटी तक पहुंच गया था.

इससे मिलते-जुलते जुमले चारु पहले भी कई बार सुन चुकी है. हर बार उसे शुरू में अपने से नफरत-सी होती लेकिन थोड़ी देर बाद वही नफरत गुस्से में तब्दील हो जाती. कई दफा वह दिवाकर के ऊपर तेंदुए की तरह झपट्टा भी मारती रही है. अंजाम में दिवाकर के कपड़े कई बार फटते रहे हैं. लेकिन यह शख्स अपने बारे में इतना नहीं मालूम कर पाया कि चारु के इतने खूंखारपन के बावजूद वह कोई जवाब क्यों नही दे सका! जवाब में जिस्म की ताकत का इस्तेमाल आखिर हो ही सकता था. लेकिन हर बार हमले के वक्त चारु उसे एकदम नासमझ और बेवकूफ लगती रही है. इस खयाल की वजह से सामने की इस औरत के खिलाफ उसने जेहन में कभी हिंसा जागी ही नहीं.

इस दफा चारु ने अपना संयम नहीं खोया. उसने एक गहरी सांस ली और टेबल लैंप की तरफ कुछ मुआयना-सा करने लगी. थोड़ी देर बाद बोली, "चाय पियोगे? या कॉफी?"

दिवाकर ठहाका मारकर हंस पड़ा, "सोच रही होगी, नशे की वजह से मैं बैलेंस में नहीं हूं और कॉफी पिलाकर मुझे होश में ला दोगी!"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चारु हैरान हुई. दिवाकर के शब्दों के लिए नहीं, उसके ठहाका मरने की वजह से. कई बार वह कहती भी रही है, "तुम कभी दिल खोलकर हंस क्यों नहीं लेते? तुम शायद कबूल न करो, लेकिन कोई भी साइकियाट्रिस्ट बता देगा, तंदुरुस्ती के लिए यह बहुत जरूरी है."

फिर एकदम सन्नाटा तैरता रहा. थोड़ी देर बाद बाहर एक कुत्ता भौंका. चारु को लगा उसे थोड़ा सही, एक सहारा जरूर मिल गया इससे. उसने खुद को संभाल लिया और दिवाकर की तरफ गर्दन मोड़ ली, "कई दिनों से एक बात कहने की सोच रही थी."

दिवाकर को लगा, चारु को कुछ हो गया है. इससे पहले कुछ भी कहने के लिए उसे कभी किसी भूमिका की जरूरत नहीं पड़ी थी.

"मेरी बात को बहुत गहराई तक गये बगैर तुम शायद समझ नहीं पाओगे." चारु बोली, बोलते हुए शब्द अटक रहे थे.

दिवाकर ने एक नयी सिगरेट सुलगायी, "मेरा ख्याल है, मेरे तौर-तरीकों से कभी यह जाहिर नहीं हुआ कि मैं शेर या चीता जैसा कुछ हूं. तुम बिना किसी तरह की घबराहट के अपनी बात कह सकती हो."

"मैं कमला से मिलना चाहती हूं." किसी तरह तमाम ताकत जुटाकर चारु बोल पायी. बोलने के बाद गला अकड़ने-सा लगा था.

"व्हाट!" दिवाकर दहाड़-सा उठा. उत्तेजना के मारे उसका समूचा जिस्म कांप रहा था. उंगली में फंसी सिगरेट को उसने पहले तो ऐश्ट्रे में फेंका फिर शायद कुछ याद आने के बाद उसे मसल दिया.

"मैं जानती थी, तुम बुरी तरह रिएक्ट कर जाओगे." चारु बोली.

दिवाकर एकदम से संयत हो गया. बोला, "तुम्हारे इतने स्टूपिड प्रॉपोजल के बावजूद मैंने उस तरह से रिएक्ट नहीं किया, जो बहुत स्वाभाविक था. खैर, इतना मैं आसानी से समझ सकता हूं कि यह मेरे बजूद को खत्म करने की तुम्हारी एक बहुत गहरी साजिश है." दिवाकर की आवाज में संजीदगी थी.

चारु एकदम चुप.

दिवाकर ने एक नयी सिगरेट सुलगायी, "मेरा खयाल है, मेरे कम्प्लीट वुमन. उसी से मैं जान पाया कि जिंदगी के सही मायने क्या होते हैं. यह दूसरी बात है कि वह न तो तुम्हारी तरह खूबसूरत है और न पढ़ी-लिखी ही. लेकिन मुझे जो चाहिए, सिर्फ वही दे पायी है. तुम्हें मालूम है कि यह कोई चार दिनों की बात नहीं है, बहुत लंबा सिलसिला है यह."

अब चारु ने थोड़ी हिम्मत जुटा ली, "मैं तुम्हारे वजूद के खिलाफ कोई साज़िश नहीं कर रही हूं. इस बात पर तुम चाहे यकीन न भी करो लेकिन हकीकत यही है. तुम्हारी तरह मैं भी अगर अपने लिए जिंदगी के मायने जानना चाहूं तो इसमें तुम्हें ऐतराज नहीं करना चाहिए."

"तुम सच बोल रही हो?" दिवाकर को समझने में थोड़ी दिक्कत हो रही थी.

"अगर कहूं हां, तुम्हें यकीन आयेगा?" चारु बोली.

"लेकिन हरेक का रास्ता अलग होना है. जिस रास्ते से मैं कुछ ढूंढ सकता हूं, उस पर तुम चलोगी तो मुंह के बल गिरोगी. हरेक का रास्ता बहुत निजी होता है."

"ठीक है, नहीं मिलूंगी," चारु बोली, "लेकिन मेरे एक सवाल का जवाब तुम्हें देना होगा. तुम्हें जिंदगी का आधार हासिल कराने के लिए कमला है. लेकिन मुझे कहां से यह हासिल होगा?"

"इसका जवाब मैं कहां से दे सकता हूं? यह बहुत निजी मामला है. इंसान को खुद ही अपने को टटोलकर इसका जवाब ढूंढना पड़ता है. दिवाकर ने सिगरेट का एक गहरा कश खींचा और नये सिरे से दीवार पर पीठ टिका ली."

"मैं तुम्हारी तरह कवि नहीं हूं..." चारु को झटका खाकर रुकना पड़ा.

किसी की तरह होने की कोई जरूरत नहीं है." दिवाकर की आवाज में तल्खी थी, "अपने आप में रहने की सोचो, बल्कि कोशिश करो."

"चलो, वही सही. मेरे पास चूंकि भाषा नहीं है, कई बार कुछ ऐसा बोल जाती हूं जिसका कुछ और ही मतलब निकल आता खैर, अपने को टटोलती हूं. तो लगता है, मैं एकदम खाली हूं... रेगिस्तान की तरह."

दिवाकर ने रोक दिया, "हमारी शादी कोई दो साल पहले हुई थी. शादी से पहले भी तुम यही कहती थी. तब भी मैंने तुम्हें आगाह किया था कि तुम्हारा यह खालीपन शादी का रिश्ता नहीं भर पायेगा. बल्कि मेरा तो तब भी खयाल यही था कि कोई भी रिश्ता इस खालीपन को पाटने के लिए नाकाफी साबित होगा."

"हां, कहा था तुमने," चारु बोली, "लेकिन इतना तुम शायद कबूल करोगे कि शादी जिंदगी का एक अहम पड़ाव है. उसके जरिए लोगों के जज्बात के बहुत सारे मसले हल भी तो होते रहे हैं."

दिवाकर ने सिगरेट को एशट्रे में मसल कर बुझा दिया. थोड़ी देर तक चुप्पी छायी रही. फिर बोला, " कुछ लोगों के मसले शादी के जरिए हल होते होंगे लेकिन तुम या मैं उन कुछ लोगों में से नहीं है."

चारु को लगा, अब आगे बात बढ़ाने से कोई मतलब नहीं निकलेगा. दिवाकर पहले भी उसे पहेली लगता रहा है, आज की ही तरह. इस पहेली की ही वजह से वह खुद प्रॉपोज कर बैठी थी.

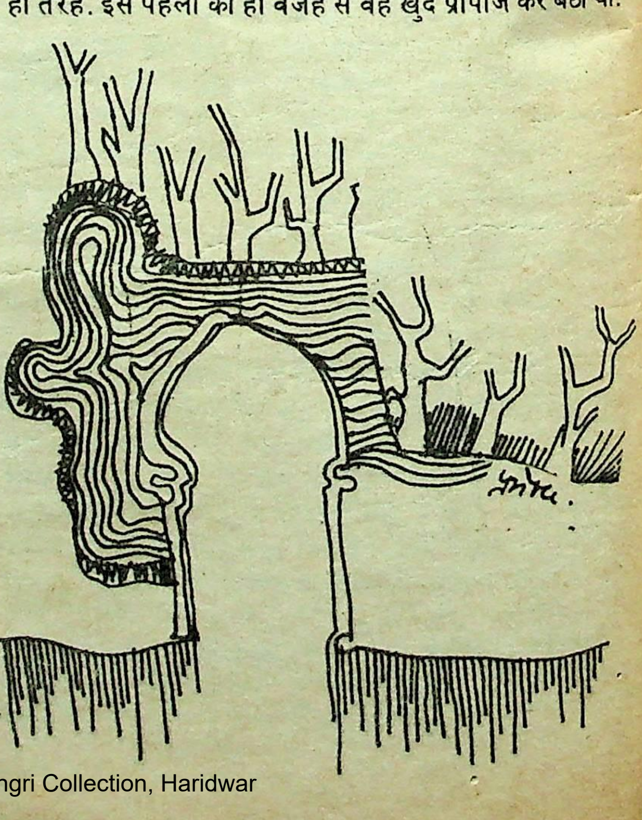

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह एक बहुत बड़ा फैसला था. लेकिन उसकी वजह कितनी छोटी थी—इस पर सोचकर चारु इधर एक अरसे से जैसे चक्रव्यूह में फंसती रही.

बाहर खासी रोशनी फैल गयी थी. उसका थोड़ा हिस्सा खिड़की के शीशों से छनकर अंदर तक पहुंचा जरूर लेकिन उस पर किसी ने नहीं गौर किया. कमरे के अंदर टेबल लैंप उसी तरह जल रहा था. एकदम पीली रोशनी बिखेरते हुए.

दिवाकर और चारु का रिश्ता जब शुरू हुआ था, ठीक उसके पहले चारु मंझधार में डूब-सी रही थी. उस हादसे में कोई नाटकीयता नहीं थी. चारु चार बरस तक जिसके साथ प्रेम कर अपने भीतर एक और जीव को ले आयी थी, अचानक पता लगा, वह शादी-शुदा है. चार बरस के लमहे कम तो नहीं होते लेकिन चारु इसलिए नहीं पल-दर-पल टूटती रही कि उस शख्स से अब शादी होना मुमकिन नहीं था, बल्कि इसलिए कि उसके अपने जज्बात ही उसे धोखा दे गये थे. वर्ना एक आदमी को समझने में इतना वक्त नहीं गुजर जाता.

वह रिश्ता फिर अपने आप ही खत्म हो गया था. शुरू में चारु को लगा था कि इस समाप्ति के लिए कुछ तो कोशिश करनी ही पड़ेगी. लेकिन उसने नहीं की थी फिर भी एक दिन सब कुछ खत्म हो ही गया.

कुछ लोग सांप की तरह जाने कैसे सूंघ ही लेते हैं. हादसे के बारे में कुछ लोगों को शक पड़ गया था. आखिर में जाने किस जासूसी रास्ते से उन लोगों ने हकीकत का खासा हिस्सा मालूम भी कर लिया था. बहुत बदनामी हुई थी फिर. उन दिनों चारु कई बार खुदकुशी की भी सोचती रही. लेकिन आखिर में उसने खुद को संभाल लिया था. इसके बाद एक जानपहचान की नर्स की मदद से उसने एबॉर्शन कर लिया था.

उन्हीं दिनों दिवाकर से मुलाकात हुई थी. चारु के स्कूल में कविता-पाठ के एक कार्यक्रम में दिवाकर आया था. चारु की दिलचस्पी साहित्य में कभी नहीं रही. कविता में तो बिल्कुल ही नहीं. स्कूल में केमिस्ट्री पढ़ाते हुए इतना अरसा गुजर गया कि अब ललित चीजें कोई खास असर नहीं छोड़तीं. आए दिन स्कूल में कुछ न कुछ कार्यक्रम होता ही रहता है. लेकिन चारु उनमें कम ही शरीक हुई है. शुरू-शुरू में स्कूल की दूसरी शिक्षिकाएं जिद करती थीं कि वह रुक जाये. लेकिन लगभग हर बार वह किसी न किसी बहाने कन्नी काटकर खिसकती ही रही है. फिर लोगों ने आग्रह करना छोड़ दिया था.

इस बार किसी ने कुछ कहा तो नहीं था लेकिन चारु कविता-पाठ सुनने के लिए रुक गयी. डायस पर तमाम कवि बैठे थे. हम उम्र के. उस जमघट में ऐसी कोई खास बात नहीं थी कि दिवाकर पर एक विशेष अंदाज में गौर किया जाये. लेकिन स्कूल की लड़कियां और कई शिक्षिकाओं की नजरें एक विशेष तरीके से कुछ कवियों पर थीं, इतना चारु को मालूम है. ये बातें अब उसे एकदम फालतू लगती हैं.

दिवाकर की बारी पांचवें नंबर पर आयी थी. तभी चारु की नजर पहली बार उस पर पड़ी. लंबा-सा नयी उम्र का एक मामूली शक्ल-सूरत वाला आदमी डायस पर खड़ा हो तो ललचाकर देखने जैसी कोई बात नहीं होती. लेकिन लोग खुसर-पुसर कर रहे थे कि आजकल कवियों में इसकी बड़ी धाक है.

दिवाकर ने अपनी कविता पढ़ी तो समूचा हॉल एकदम खामोश हो गया था. चारु ने भी यकीन किया, कवि में जबरदस्त गहराई है और उसका बात कहने का ढंग बहुत निराला है.

कार्यक्रम चारेक घंटे तक चला था. फिर स्कूल की लड़कियां 'ऑटोग्राफ' लेने एक-एक कवि पर टूट-सी पड़ीं. चारु एक कोने में खड़ी हो गयी थी. दिवाकर सामने से होकर गुजरने लगा तो उसने रोक दिया, "आपको बधाइयां तो बहुत मिली हैं लेकिन मेरी तरफ से कृतज्ञता स्वीकार कीजिए."

दिवाकर को कुछ भी समझ में नहीं आया था. वह अचकचा-सा रहा था.

"कृतज्ञ मैं इसलिए हुई थी कि पहली बार कविता सुनने आयी और लगा, आप सिर्फ मेरी ही कहानी सुना रहे हैं." चारु बोली.

दिवाकर थोड़ा-बहुत घबरा ही गया था. सामने खड़ी एक बेहद खूबसूरत लड़की इस तरह नाटकीयता के साथ बोले तो घबराहट होना मामूली बात है.

"मैं इस स्कूल में केमिस्ट्री पढ़ाती हूं." चारु शायद थोड़ा रुककर कोई और सिलसिला शुरू करती लेकिन दिवाकर को और ज्यादा ठहरना मुनासिब नहीं लगता था.

इसके कोई तीनेक दिन बाद चारु पता ढूंढकर दिवाकर के दफ्तर में जा पहुंची थी. उस वक्त वह अखबार के चंद पन्नों का आखिरी प्रूफ देख रहा था. वक्त पर पन्ने तैयार करके न भेजो तो मशीन रूम वाले चिल्लाते हैं. वक्त नहीं था लेकिन चारु को अखबार के इस दफ्तर में देखकर दिवाकर को कबूल करना पड़ा. वक्त का अपना ही हिसाब होता है. उस हिसाब मशीन रूम वालों की खास गुंजायश नहीं है.

पूरा दफ्तर उस दिन चारु पर आंखें गड़ाए था. लोग चटखारे ले रहे थे. अखबार के दफ्तर के उस नीरस माहौल में जैसे एकदम से फागुन आ गया था.

दिवाकर बतौर कवि बहुत मशहूर तो खैर था ही, एक पत्रकार की हैसियत से भी बहुत छोटा-मोटा नहीं था. कई लोगों का कहना है—आग बरसती है उसकी कलम से. लेकिन कवि या पत्रकार होने के साथ-साथ एक और भूमिका का निर्वाह उसने बखूबी निभाया था—एक जुझारू नेता का. फुटपाथ पर बैठकर तिजारत करनेवालों के खिलाफ पुलिसी जुल्म को शुरू में तो उसने मंत्री वगैरह से मिलकर खत्म करने की कोशिश की फिर अनशन पर बैठ गया. पूरे तैंतीस दिन अनशन चलने के बाद जब उसकी हालत कमल के पत्ते के ऊपर थरांते पानी की तरह हो गया, पुलिस के डी.आई.जी., कमिश्नर, मंत्री वगैरह दौड़े हुए आये और दिवाकर की मांग कबूल कर ली कि फुटपाथी व्यापारियों पर पुलिस का जुल्म और रिश्वतखोरी पर कड़ी नजर रखी जायेगी. उस वक्त कोई ग्यारह पुलिस के सिपाही और इंस्पेक्टर एक साथ ससपेंड कर दिये गये थे. इसके बाद ही दिवाकर ने अनशन तोड़ा था.

दिवाकर फिर कवि होने के साथ एक जुझारू नेता जरूर हो गया था लेकिन नौकरी से छुट्टी हो गयी थी. अखबार के मालिक को यह नेतागिरी बहुत मतलब की नहीं लगी थी. नौकरी के कांट्रेक्ट में यह पहले ही से एक शर्त थी कि किसी तरह की राजनैतिक या सार्वजनिक कार्य-कलापों में प्रत्यक्ष हिस्सेदारी से पहले अनुमति लेनी पड़ेगी. दिवाकर इतने आवेश में था कि अनुमति लेने की बात उस वक्त दिमाग में आयी ही नहीं. संपादक से उसका अच्छा रिश्ता था लेकिन इस मामले में कुछ करने में उसने अपनी मजबूरी जाहिर की. दिवाकर इस मुअत्तिली के खिलाफ खासा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हंगामा खड़ा कर सकता था लेकिन नौकरी में रहने की वजह से वह अपने आप को किसी हद तक बासी महसूस करने लगा था. बस, अखबारी नौकरी से रिश्ता फिर उसी मुकाम पर खत्म हो गया.

इसके बाद गुजारे की समस्या आयी तो इससे पहले कि वह गहराई से सोचकर कोई रास्ता निकालता, दोस्तों की मदद से दिल्ली, कलकत्ता और बंबई के अखबारों में उसे राजनैतिक और सामाजिक मुद्दों पर स्तंभ लिखने के अनुबंध मिल गये. उसने कबूल कर लिया.

उन्हीं दिनों चारु ने एक दिन शादी का प्रस्ताव रख दिया. दिवाकर हंस पड़ा था, "एक बेकार आदमी की आजादी इस मामले में बहुत नहीं होती."

चारु ने सब्र से काम लिया था. किसी हद तक वह समझ भी गयी थी कि इस शख्स से यह प्रस्ताव कबूल करवाना, दूसरा महायुद्ध जीतने जैसा ही कुछ होगा. इस बीच आहिस्ते-आहिस्ते उसने अपने अतीत के बारे में सब कुछ बता दिया था.

पूरी कहानी सुन चुकने के बाद दिवाकर ने एक गहरी सांस ली थी.

चारु समझ गयी थी, उसकी इतने दिनों की कोशिश अब शायद नाकाम नहीं जाएगी. और तब तक वह जान गयी थी कि जिस शख्स के साथ वह घरौंदा बनाने का सपना देख रही है, कोई तीस बरस से उसकी जिंदगी एक बाजारू औरत के साथ बंधी हुई है. इस पहेली को चारु समझ नहीं पायी. बात कुछ ऐसी लगी कि जैसे कोई सामने की भरी-पूरी थाली छोड़कर कूड़ेदान में निकालकर जूठा पत्तल चाट रहा हो!

दिवाकर मुस्कराया था, "यह मसला आदमी की बुनियाद से रिश्ता रखता है. चंद लफ्जों में समझाने लायक बात यह नहीं है. इसके बावजूद यह जरूर बताना चाहूंगा कि कमला हर तरह से एक पूरी औरत है. अपने आधार के लिए मुझे सिर्फ उसी की तलाश थी. उससे रिश्ता जोड़ने के बाद मैं समझता हूं, मेरी भटकन काफी हद तक खत्म हो गयी."

चारु को ये बातें खास कुछ समझ में नहीं आयीं. इसके बावजूद उसे लगा, दिवाकर के लिए उसके अंदर एक कमजोरी-सी है, हालांकि चारु को गलतफहमी नहीं हुई कि इस कमजोरी को प्रेम कहा जाना चाहिए.

इसके बाद की घटना बहुत नाटकीय है. कमला के यहां से आधी रात के बाद लौटते हुए दिवाकर पर जबरदस्त हमला हो गया. सर पर लाठी जैसी किसी चीज़ का वार होते ही वह बेहोश हो गया था. अगले दिन सुबह जब होश आया खुद को हॉस्पिटल में देखकर उसे हैरानी हो रही थी. थोड़ी हैरानी इस बात पर भी हुई कि समूचे जिस्म में बहुत सारे जख्म थे.

इसी हादसे का चूंकि कोई चश्मदीद गवाह नहीं था, पुलिस में शिकायत दर्ज करने के बावजूद किसी को गिरफ्तार नहीं किया जा सका. वैसे जब इस घटना की खबर अखबारों में छपीं, चंद रोज बाद एक गुमनाम पत्र-लेखक का खत इस आशय में प्रकाशित हुआ कि यह पुलिस की ही साजिश थी. दिवाकर ने उसके खिलाफ जो जिहाद छेड़ा है, उसके जवाब में.

उस दरमियान चारु ने दिवाकर की बहुत तिमारदारी की थी. हॉस्पिटल में कोई बीसेक दिन, फिर महीना भर तक घर आने के बाद. दिवाकर की टूटी हुई हड्डियों के जुड़ने में खासा वक्त लगा था. तब एक दिन चारु के नये सिरे से आग्रह को उसने कबूल कर लिया था. आखिर तक इस स्वीकार को दिवाकर ने अपनी कमजोरी के अलावा कुछ और नहीं माना.

इसके तीन महीने बाद दिवाकर ने चारु के साथ शादी कर ली. दोस्तों में से कुछ सोचते रहे, दिवाकर अब एक और दिवाकर में तब्दील हो गया. और कुछ लोगों का खयाल था, यह रिश्ता चंद महीने से आगे नहीं जायेगा. इतना सिर्फ शायद कमला ही समझ पायी थी कि दोनों ही खयालात गलत हैं.

चारु के पास एक आम लड़की की तरह तमाम उम्मीदें थीं. इसके अलावा सतरंगी सपने तो खैर थे ही. उसे यकीन था, किसी न किसी रास्ते दिवाकर को वह अपने आगे समर्पित कर ही लेगी. रास्ते उसने बहुत अपनाये लेकिन नतीजे में दिवाकर जैसे दूर होता चला गया. चारु समझ गयी थी, दो दमड़ी की कमला उसके सामने एक बहुत ऊंचे आसन पर इत्मीनान से बैठी हुई है. चारु को जाने क्यों लगता है, वह औरत उस पर लगातार रहम किये जा रही है. यही एक जज्बा है, जिसे वह कतई सह नहीं पायी. अतीत में धोखा खाकर जब वह मुंह के बल गिरी थी, तब भी नहीं. शादी से पहले दिवाकर ने साफ समझा जरूर दिया था कि कमला के साथ जो कुछ भी रिश्ता है, उसका कोई विकल्प नहीं है, चारु को उम्मीद थी, आखिर में मंजिल उसी को हासिल होगी.

आहिस्ता-आहिस्ता फिर चारु को लगता रहा, यह वह दिवाकर नहीं है, जिसकी कविता सुनने के बाद उसने बगैर किसी शर्त के खुद को समर्पित कर देने का प्रस्ताव रखा था. अपना तूफानी अतीत उसे परेशान करता तो है लेकिन इतना हरगिज़ नहीं कि अपने को वह अर्थहीन समझने लगे. शीशे के सामने खड़ी हुए बगैर ही वह बखूबी जानती है, उसके पास एक बेहद खूबसूरत चेहरा है. इस चेहरे की कीमत समझने वाले एक छोड़ हजार मिल सकते थे. लेकिन बस जाने क्यों वह दिवाकर की तरफ खिंची चली आयी थी. अपनी कमजोरी पर उसे पछतावा शायद नहीं हुआ लेकिन हैरानी जरूर होती रही.

दिवाकर फिर विहस्की पीने लगा था. पहले कभी इसकी जरूरत महसूस नहीं हुई थी. अब पिये बगैर कई दफा वक्त नहीं कटता! पीने के इस मामले को लेकर चारु ने शुरू में कोई तूफान नहीं उठाया था. यह सोचकर साथ देती थी कि इस सहयोग की वजह से दिवाकर आखिर में अपनी हार मानकर चारु के प्रति समर्पित हो जायेगा. लेकिन काफी इंतजार के बावजूद ऐसा कुछ नहीं हुआ. दिवाकर जैसे अपने ही भीतर उफनता रहा. आखिर में चारु समझ गयी, इस शख्स के जेहन या दिल में अब वह कतई मौजूद नहीं है. अपनी हस्ती को इस कदर मामूली देखकर वह जैसे गहरे तालाब में बगैर किसी गवाह के डूबती चली गयी.

उस मुकाम से फिर तूफान उठते रहे लगातार. चारु इसके बाद बोतल, गिलास से लेकर बहुत कुछ उठाकर रहे. इस तरह फर्श पर पटकती रही कि दो कमरों का यह मकान फिर घर तो खैर नहीं ही, सराय जैसा भी कुछ नहीं रह गया था.

हर बार दिवाकर आंखें बंद किये बुत-सा बैठा रहता. यह दूसरी बात है कि दिमाग के अंदर की नसें तब फट रही होतीं. ऐसे हादसों के बाद हर बार उसे लगता रहा है, चारु की असली लड़ाई कमला के वजूद से है, शराब या बोतल या गिलास से नहीं. कई बार दिवाकर को ऐसे तजुर्बात के बाद महसूस-सा होता, इस घर से चारु के निकलने के अब बस चंद दिन ही रह गये हैं. लेकिन आखिर मे ऐसा सोचना गलत ही साबित हुआ. अब वह अच्छी तरह समझ गया है, चारु पत्नीत्व के इस दर्जे को किसी भी कीमत पर छोड़ नहीं सकती!

वक्त अब बहुत बदल गया. महीनों गुजर जाते हैं, दिवाकर को

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगता ही नहीं कि उसके और चारु के बीच बातचीत का कोई सिलसिला भी है. चारु जब उबलने लगती, दिवाकर को लगता, वह बीच बाजार में खड़ा है और घर का पता भूल गया. और जब चारु एकदम खामोश हो जाती, दिवाकर को अंदर से यकीन-सा आ जाता कि वह एक अनजान औरत की बगल में किसी सराय में गुजारा कर रहा है. यह औरत चारु के बगैर कोई भी शायद हो सकती थी. दिवाकर को इससे कुल मिलाकर कोई फर्क शायद नहीं पड़ता. लेकिन यह और कमला हर्गिज नहीं हो सकती थी, इतना दिवाकर का पक्का यकीन है.

दिवाकर घर वापस नहीं आया था. चारु को अब इससे बहुत परेशानी नहीं हुई. इससे पहले भी कितनी बार चार-चार दिनों के लिए, कभी-कभी तो हफ्ता भर के लिए कविता पढ़ने वह बाहर जाता रहा है. कई बार स्कूल से लौटने के बाद चारु ने देखा, मेज पर उसके बाहर जाने की सूचना लिखी हुई है, इस दफा कोई ऐसी सूचना नहीं थी. एक फालतू कागजी सूचना भर के न होने से चारु के खामखाह परेशान होने लायक कुछ नहीं दिखाई पड़ा. यह सब अब उसे एकदम गैर मतलब का लगता है. नतीजे में इस मामले की खाना पूरी से ज्यादा अहमियत अब वह नहीं दे पाती.

चार दिन बाद पता लगा, गहरे नाले में जिस आदमी की लाश मिली है, कुछ पानी भर जाने की वजह से और कुछ जख्मों के कारण वह बहुत बेडौल हो गयी है. ऊपर से उसके दोनों होंठ और नाक का निचला हिस्सा और दोनों कान तेज छुरे से कट दिये गये थे. शक्ल इस कदर डरावनी हो गयी थी कि यकीन करना मुश्किल हो गया कि यह एक आदमी की ही लाश है.

अखबारों के कुछेक रिपर्टरों का खयाल है कि दिवाकर आखिर में पुलिस की खिलाफत और करतूतों के पर्दाकाश करने के लिए किराये के गुंडों के जरिए खत्म कर दिया गया. सुनने में आता है, पिछले ही हफ्ते एक उपमंत्री से उसकी झड़प हो गयी थी. उसने फिर पुलिस की हरकतों के खिलाफ मोर्चा बांधना शुरू कर दिया था.

थाने से चारु के पास पुलिस का सिपाही आया था. मुर्दाघर तक लाश की शिनाख्त करने के लिए.

चारु अपना माथा पकड़कर वहीं, दरवाजे पर बैठ गयी थी. सारा जिस्म जैसे ठंडा हो गया था. हाथ-पैर फिर थर्राने लगे थे.

पुलिस का सिपाही तो इत्तिला देकर चला गया लेकिन अड़ोस-पड़ोस में एकदम से खबर हो गयी थी. लोग भागे हुए चले आये थे. आखिर में चारेक लोगों के साथ चारु मुर्दा घर पहुंची तो खून सने सफेद कपड़े के नीचे पड़े जिस्म को कपड़ा हटाने से पहले ही जैसे पहचान गयी थी. थोड़ी देर में जमादार आया और इत्मीनान से कपड़े को हटा दिया. नंगी लाश हो देखकर चारु एकदम पत्थर हो गयी. चेहरा जबरदस्त विकृत तो था लेकिन चारु ने पहचान लिया. यह लाश उसी आदमी की है, जिसकी कविता सुनकर उसने घरौंदा बनाने का एक नाकाम फैसला लिया था. उस दिन से लेकर अब तक एक-एक बात चारु की आंखों के सामने तैरने-सी लगी. लेकिन इन आंखों में जब सपने थे, तब थे. अब तो अपनी आखिरी हार के अलावा और कुछ नहीं दिखाई पड़ता.

अचानक एक और लाश आ गयी. औरत की लाश थी. साथ आये सिपाही ने बड़े इत्मीनान से एक बीड़ी सुलगायी और धुआं उड़ेल दिया. बोला, "रंडी की लाश है. फांसी लगाकर मरी है सुबह."

चारु चौंक उठी थी.

औरत की लाश थी, इसलिए थोड़ी खुसर-फुसर होने लगी. कुछ लोग सिपाही से और थोड़ी जानकारी हासिल करने के लिए उसकी तरफ चले गये थे. थोड़ी देर में बीड़ी के दो-चार कश खींचने के बाद सिपाही ने औरत का नाम भी बता दिया, "लोग कहते हैं, बहुत शरीफ रंडी थी कमला बाई."

चारु को कुछ और सुनाई नहीं पड़ा. दोनों कानों के अंदर दावानल से जल उठे थे. उसकी आवाज इतनी गहरी थी कि बाहर का कुछ और सुन पाना मुमकिन नहीं था. लगा, अब साबित हो गया, किसी तरह दीवार पकड़े वह घुटनों को मोड़कर जमीन पर बैठ गयी. कमला वाकई बाजी मारकर बहुत आगे निकल गयी. एक साध्वी-सती की तरह. इसकी गवाही अब चारु को अपनी आखिरी सांस तक हर लमहा देते रहना पड़ेगा. □

ऊंट और पहाड़

उस ऊंट का घर भी रेगिस्तान में था, जहां हर चीज की किल्लत थी. न पानी, न चारा, न और कोई ऐशो-आराम की चीज उसने नखलिस्तानों के बारे में सुन रखा था. एक दिन गर्भवती ऊंटनी को रोती छोड़ वह नखलिस्तानों की तलाश में निकल गया उसने सारे नखलिस्तानों की सैर की, उनके स्रोतों की शहद जैसा पानी पीया, अमृत जैसे मीठे फल खाये और हरी घास पर लेट लगायी. पर उसे हमेशा रेगिस्तान याद आता रहा. उसे हमेशा लगता था रेगिस्तान में ऐसा कुछ है जो इन सभी सुखों से बढ़कर है. उसे एक दिन एक पहाड़ दिखा जो चुनौती की तरह उसके सामने सिर उठाये खड़ा था. चढ़ाई बड़ी कठिन थी, फिर भी ऊंट किसी तरह पहाड़ की चोटी पर जा चढ़ा. एक ऊंट के लिए यह सबसे बड़ी उपलब्धि थी. सफलता की उस ऊंचाई पर भी उसे रेगिस्तान याद आया, गर्भवती ऊंटनी याद आयी.

रेगिस्तान में अपने घर लौट कर उसने देखा ऊंटनी बूढ़ी हो गयी है. उसे दिखाई भी कम देने लगा है. ऊंटनी ने उसे बताया कि उसके जाने के बाद एक बेटे को जन्म दिया, जो अब जवान पट्ठा हो गया है, पर वह भी नखलिस्तानों और पहाड़ों की बातें करने लगा है.

एक दिन ऊंट ने बेटे को पास बुलाया और प्यार से उसके थूथन से थूथन सटाते हुए बलबलाया, "बेटे, ये जो नखलिस्तान दूर से बड़े सर-सब्ज और चमकीले दीखते हैं न, इनमें कोई खास बात नहीं है. पहाड़ों की ऊंचाई भी ऊंटों के लिए मुआफ़िक नहीं पड़ती. सारा जीवन चमक-दमक की लालच में भटक कर मैं इसी नतीजे पर पहुंचा हूं कि अपना घर और अपना देश ही सबसे अच्छा होता है."

"हुंह! बुड्ढा खूसट! आपने तो मेरी मां को तपते रेगिस्तान में छोड़कर सारी जिंदगी मौज-मस्ती करता रहा. अब मेरे मौज-मस्ती के दिन हैं तो मुझे झूठी नसीहत देने चला है." बेटे ने मन ही मन कहा और नखलिस्तानों की तरफ भागने लगा.

डा. माहेश्वर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

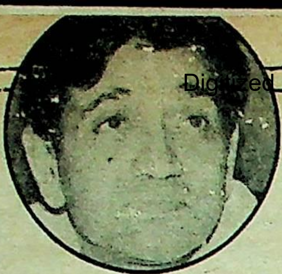

'लाल पीली जमीन', 'हुजूर दरबार' और 'तुम्हारी रोशनी में' (उपन्यास) व 'रगड़ खाती आत्म हत्याएं', 'अंत:पुर', 'धांसू', 'खाक इतिहास' और हल में प्रकाशित कहानी संग्रह 'मुझे घर ले चलो' के अतिरिक्त यात्रावृत्त, साहित्यिक निबंध और संपादन.
संप्रति : भारतीय राजस्व सेवा से संबद्ध.
संपर्क : 22 बैलडेडियर, भुलाभाई देसाई मार्ग, बंबई-400036.

एकाएक फिर कुछ हुआ कि लौट जाने की इच्छा तिरोहित हो गयी. कोई पतली-पतली धुंध मन पर फैल गयी थी जिसमें जाऊं-न-जाऊं की उछल-कूद डूब गयी. जैसे किसी अज्ञात शक्ति से खिचे हुए वे यात्रियों के पीछे-पीछे शेष परिक्रमा पूरी करने के लिए तलहटी में उतर गये.

पर्वत के उस पार जतीपुरा गांव के आगेवाला रास्ता है... जिस पर रघुनाथ परिक्रमा के शुरू में चले थे. इसलिए इधर की तलहटी भी ठीक वैसी ही. मक्खन-सी मुलायम रज तादाद में इस तरफ थोड़ा ज्यादा ही है. ढलती दोपहरी में निकले थे तो जमीन भी तपती मिली. दोनों पैरों में छाले निकल आये हैं. पांव जैसे फूल आये हैं. इस मुलायम रज में पाव धंसते हैं तो सुख मिलता है. पर्वत

गोविंद मिश्र

त्यों त्यों प्रकट होत उर अंतर कांच कलस जल झाईं

रास्ते के दाहिनी तरफ गोवर्द्धन पर्वत साथ-साथ चल रहा है. इधर पर्वतमाला जमीन में करीब-करीब धंसी हुई है. एक जगह परिक्रमा पर चलने वाले कुछ लोग रुककर, छोटे-छोटे पत्थर बीन-बानकर घर-जैसा कुछ बना रहे थे, जैसे बच्चे खेल में घर बनाते हैं. एक यात्री ने बताया कि ये लोग इस तरह घर बनाने की मनौती करते हैं—जो तीन मंजिल वाला खिलौना-घर बनाये, समझो उसे तिमंजिला इमारत की चाहना है. मानता पूरी होने पर वह फिर परिक्रमा करेगा.

रघुनाथ को हंसी आ गयी. यही सब तो विरोधाभास हैं जो आस्था को हास्यास्पद बना देते हैं. आये हैं यहां ईश्वर से स्वयं को जोड़ने के लिए और चिपके हैं उसी दुनिया से, जिसे छोड़कर आये हैं. अधिकांश लोग गोवर्द्धन... ईश्वर की परिक्रमा का भ्रम पाले हुए हैं, दरअसल वे केवल तरह-तरह की माया-मोह के बिंदुओं के ही चक्कर काट रहे हैं!

दानघाटी पहुंचते-पहुंचते थक आये थे रघुनाथ. एक जगह बैठकर चाय पी. पेड़े-सेब लेकर आये. पहली बार इतना चले हैं, वह भी नंगे पैर. मन हुआ कि यहीं से कोई बस पकड़ लें... वापस यात्रा के पड़ाव पर, या तांगा में बैठकर जतीपुरा पहुंच जायें. वहां रामेश्वर उपाध्याय के यहां ही रात गुजार लेंगे... गरम पानी में पावों को उतार देंगे. गुनगुने पानी में पैर डाले बैठे रहेंगे. परिक्रमा को देखना था सो देख ही लिया. अब लौटा जाय. दानघाटी के दर्शन करने तक मन में विवाद चलता रहा.

आधुनिकता, शिक्षा या तर्क के आने से जहां पर आस्था सूख जाती है, वहां भी जैसे कोई जड़ बची रह जाती है. क्यों रघुनाथ के मन में कहीं कुछ हिलगा रहा और ये यात्रा पर निकल आये... पिछले अंक की इस कहानी को आगे बढ़ाता एक और रोचक अंश कि विरोधाभास किस तरह आस्था को हस्यास्पद बना देते हैं...?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के नीचे बराबरी से साथ चलता हुआ मनोरम जंगल-सा था... इतना झीना कि अगर थोड़ा कायदे से रोपा गया होता तो उसे बढ़ा बगीचा भी कह सकते. जहां-तहां बिराजे साधु... अपनी तरह-तरह की पूजा-तपस्या में लीन!

भारतीय जीवन कितना रंग-बिरंगा है. कोई अपनी पौर-बखरी से बाहर निकल कर तो देखे... केवल शरीर से नहीं, मन से. हम अपने छोटे-छोटे दायरों, उनकी ऊहा-पोहों को ही मन में ढोते-ढोते मर जाते हैं. बाहर निकलते हैं या तो अंधविश्वासी—ये बाहर जो—जो हैं उसकी पूरी कदर ही नहीं कर पाते या फिर वे जिनका कुछ खो गया और जो केवल अपने विषाद में ही झूलते रहते हैं. जब तक खोया हुआ नहीं मिल जाता, वे कुछ और देखने-सुनने वाले नहीं. शायद तब शुरू करें देखना जब जो खोया उसकी स्मृति धुंधली हो जाये. पर तब शायद बाहर निकलना बी बंद हो जायेगा! तीसरे हैं रघु जैसे लोग जो स्वयं से ही मुक्त नहीं हो पाते. जब वे बड़-बड़ करते हुए अपने को आरोपित, दूसरे को प्रभावित करते रहते हैं तो ऐसा नहीं है कि उन्हें पता नहीं चलता.... यह उनकी बुनियादी हताशा का ही रूप है, हार की प्रतीति... उनकी त्रासदी!

व्यक्तिगत त्रासदी के उबर कर बाहर जो यह विशाल जीवन-सागर फैला हुआ है, उससे जुड़ो तो. जो ये तरह-तरह के लोग अपने-अपने वृतों में घूम रहे हैं, सौरमंडल के ग्रहों से किसी सूर्य की परिक्रमा भी किये जा रहे हैं, वैसे ही रघु...

हां, रघु भी अपने सूर्य के चारों ओर घूमने लगें. यह अपना सूर्य... यही तो है ईश्वर!

रघु उचक पड़े. एक पुलक उनके शरीर को मथ रही थी. वे हल्का-फुल्का महसूस कर रहे थे. घिसटने की जगह दौड़ने लगे थे सहसा.

वे आन्योर गांव पहुंच गये थे. आन्योर... नशे का गांव, जिसने श्रीनाथ जी को खोज निकाला था.

एक दुकान के पास प्याऊ लगा था. परिक्रमा के यात्रियों को पानी पिलाने के लिए एक लड़की बिठा दी गयी थी. रघु पानी पीकर सामने के चबूतरे पर सुस्ताने बैठ गये. जब कोई पानी न पी रहा होता तो एक लड़का प्याऊ पर आकर पानी के लिए अपनी चुल्लू बांधता, लड़की गंगासागर से थोड़ा-सा पानी चुल्लू में डालती, बाकी अपने चुल्लू में लेकर के बालों पर फेंक देती. लड़का भाग खड़ा होता. दोनों ही किशोर. लड़का दरअसल पानी पीने ही आया था, इसीलिए उसके चेहरे पर थोड़ी-सी खीझ थी. लेकिन लड़की का खेल चल निकला था और धीरे-धीरे लड़के को भी उनमें रस आने लगा था. बीच में यात्री आ जाते तो लड़की फिर बाहर से गंभीर होकर उन्हें पानी पिलाने में लग जाती, पर ध्यान उधर लड़के में ही, जो एक किनारे खड़ा प्रतीक्षा करता होता. यात्रियों के जाते ही फिर उनका खेल शुरू... पानी की एक-दो घूंट गले के नीचे, बाकी बालों और शरीर पर...

किन्छाव, छोटी-मोटी होली जैसा... पीछे से चली आती दोनों की निश्छल हंसी. उस हंसी में डूबते चले गये रघुनाथ. थोड़ा आगे चलकर वह हंसी पसर कर आलोक हो गयी. आलोक तेजी से फैलने लगा... राधा-कृष्ण, कृष्ण-गोपिकाएं... दधि-कादों लूटते गोप-ग्वाले... सब उस आलोक में तिरते दिखाई दे रहे थे...

जीवन-जीवन को परिभाषित करना हो तो उसे इन बच्चों की यह हंसी कहेंगे... अपने कर्म के बीच यों डूब सकना, इतना डूब जाना. रघुनाथ को अपनी कमी नजर आ गयी. वे बुद्धि के इतने दास रहे कि किसी चीज में इतना नहीं डूब सके. किसी चीज़ में पूरा डूब जाना और उसे पूरी तरह अपने में डूबो लेना!

रघुनाथ मुग्ध होकर लड़की को देखे जा रहे थे. उन्हें अपनी तरफ यों देखता पा लड़की सकुचा आयी और प्याऊ से उठकर भीतर चली गयी.

अंधेरा उतर रहा था. रघुनाथ चबूतरे से कूदकर आगे को चल दिये.

अंधेरा ज्यों ज्यों गहराता जा रहा था, परिक्रमा में आसपास चलने वालों की एक टोली-सी स्वतः बनती जा रही थी. अब अलग-अलग फड़फड़ आगे-आगे भागते जाना नहीं, सबकी चाल एक जैसी हो गयी थी, रुकना भी एक ही समय, उसी जगह. आन्योर से निकलते हुए रघुनाथ के साथ पांच-सात आदमी-औरतों का झुंड था. सब के साथ रघुनाथ भी गोविंद कुंड पर आचमन के लिए रुक गये. आचमन कर सबको बताने लगे "इंद्र का अभिमान टूटने पर उसने भगवान का सुरभि-पय सहित आकाशगंगा के जल से अभिषेक किया था, गोविंद नाम से उनकी स्तुति की थी. सुरभि की दुग्ध धाराओं से ही यह कुंड प्रकट हुआ बताते हैं." यहीं रसखान को महाप्रभु ने शिष्य बनाया था—"प्रेम देव की छवि निरख मियां भये रसखान." उन्हें श्रीनाथजी के मंदिर में ले जाकर दर्शन कराये थे...

चर्चा चल पड़ी

"कहना मुश्किल है कि ब्रज में कौन तीर्थ बड़ा है."

"अरे भैया, यहां तो हर दस कदम पर एक तीर्थ है... ब्रजभूमि को जोई महात्मय ठहरो."

"हां, इतना-सा क्षेत्र और पग-पग पर तीर्थ... ऐसी भूमि और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहां है भारत में.''

''नंदबाबा कंस के डर से जहां-जहां भगवान को लिये फिरे, वही तीर्थ हो गया.'' रघु बोले.

''यहां की तो धूल में भी प्रताप है. धन्य हैं वे जो डंडोती कर लेते हैं, ब्रज-रंज को अंग में लपेटते हुए परिक्रमा करते हैं.''

''इस क्षेत्र का आज भी ऐसा महात्म्य कि बस में कहीं एक आदमी का बटुआ चला गया... वह समझा जेब कट गयी. बटुए में उसका फोटो था. मानसी गंगा में स्नान करते समय फोटो का मिलान करते हुए एक व्यक्ति आया और बटुआ थमा गया... उसे कहीं पड़ा मिला था. ऐसा आज भी होता है यहां.''

कोई कुंड के बारे में बताने लगा- ''सफाई के लिए जब कुंड का सारा जल बाहर निकाला गया तो एक फुट कीचड़, कीचड़ के बाद फिर भी जल. प्रतिदिन उस जल को बाहर निकालने की कोशिश की जाती, पर अगले दिन प्रातः लोग देखते कि कुंड में कहीं पीले, कहीं लाल, गुलाबी रंग के बुलबुले नीचे से निकलकर फूट रहे हैं और पर्वत के नीचे से जल-नालियों के रास्ते आ रहा है. कुंड की पूरी सफाई न की जा सकी. आगरा के जो सज्जन अपनी निगरानी में सफाई करा रहे थे, उन्होंने यह भी बताया कि रात को कोई तीन बजे पर्वत में से लोगों के कुंड पर आने की आहट सुनाई देती थी...''

एक रास्ता कुंड के ऊपर गोवर्द्धन पर्वत की ओर चढ़ता दिखाई दे रहा था, ऊपर जाकर कहीं खो जाता था. रघुनाथ उधर देखने लगे—लाल-लाल चौड़ी पगडंडी-सा रास्ता, छोटे-छोटे पेड़ों से ढंका, क्रमशः ऊपर उठता हुआ. देखते-देखते रघुनाथ खो गये, पुराने किसी काल में पहुंच गये... देखते हैं कि साधु-महात्माओं की टोलियां कमंडल लिये कुंड की तरफ चली आ रही है... एक आलोकमय प्रवाह-सा पर्वत से उस पगडंडी के रास्ते कुंड की ओर बह रहा है... आकाशगंगा!

जीवन-निरंतर प्रवाहित है!

अगर शरीर के साथ ही समाप्त हो जाता है तो सचमुच सब कुछ कितना व्यर्थ है... मात्र साठ-सत्तर वर्षों का खेल, जिसमें भी कितने वर्ष अबोधावस्था, निद्रा में निकल गये. चाहे अच्छा करो, बुरा करो, सब एक... हश्र वही, समाप्त! इतने छोटे-से खेल में कोई फर्क नहीं पड़ता कि संसार को चलाने वाली कोई शक्ति है या नहीं, या कि है तो वह कैसी है... उसका स्वभाव क्या है.

और अगर निरंतरता है... चाहे जितनी सूक्ष्म, तो फिर शरीर-यात्रा की एक छोटी-सी इकाई भी विराटता से जुड़ जाती है. और उस विराटता के अंग बन जाते हैं—पर्वत, नदी, सागर, वायु, आकाश, नक्षत्र.... सभी अपने-अपने ढंग से उस विराटता की सृष्टि करते हैं. पानी का यह पोखरा कुंड हो जाता है, चली आ रही निरंतरता का साक्षी. जीवन....किसी अटूट क्रम की एक लड़ी.... और तब हर चीज महत्वपूर्ण है, प्रत्येक क्रिया का योगदान है, अच्छे कर्मों की महत्ता है.

रघु को लगा कि जीवन में अच्छे-बुरे की सीमा-रेखा बनाये रखने मात्र के लिए भी निरंतरता में विश्वास जरूरी है. ईश्वर में आस्था ही क्या मूल्यों में आस्था नहीं है? ईश्वर प्रतीक मूल्यों का!

वे सब कब चल पड़े, कितना चलते रहे... रघु को पता ही न चला. कुछ भान हुआ जब आरती की आवाजें सुनाई दे रही थीं. सामने अंधेरे में कुछ रोशनियां चमक उठती थीं. वे पूंछड़ी का लौंठा पहुंच रहे थे. गाय की तरह बैठे गिरिराज पर्वत का मुख मानसी-गंगा में है और पूंछ इधर.... जिससे यह पूंछरी ग्राम हो गया. रघुनाथ की परिक्रमा का यह अंतिम पड़ाव था. यहां से बस मुश्किल से एक मील और कि वे वहां आ पहुंचेंगे जहां से शुरू हुए थे. अन्योर के आगे तो वे साफ-साफ किसी नशे में चल रहे हैं.... कभी टोली के पीछे-पीछे, कभी साथ-साथ.... पैरों को हर हाल में आगे खचोरते हुए.... और मन में कुलबुलाते कितनी तरह के सवाल!

लौंठा यहां के क्षेत्र-देव हैं. रास्ते के किनारे लौंठा जी के मंदिर में आरती हो रही थी. टोली के लोग आरती के लिए रुक गये, रघुनाथ भी. थोड़ा-सा भी कोई बहाना मिले, तबीयत बैठ जाने को हो आती है. पूंछड़ी के लौंठा हनुमान जी का रूप हैं.... पर पूंछ वाले. ये श्रीनाथ के साथी ग्वाल-अवतार थे. जब श्रीनाथ जी यह स्थान छोड़कर श्रीनाथद्वारा जाने लगे तो आपने मना कर दिया, यहीं डंटे रहे.

चलते चलो.... चलते चलो! पैर चलने से इन्कार करते हैं, फिर भी चलो. रघुनाथ के दोनों पैरो में बड़े-बड़े छाले पड़ गये हैं. पैर पृथ्वी में मुलायम जमीन को टटोलते हुए बढ़ते हैं.... कि कहीं मुलायम में से ही कोई कंकड़ ऐसा गड़ता है कि दर्द की एक रेखा पांव से उठकर सीधा तीर की तरह मस्तक तक पैठती चली जाती है, पांव टन्ना कर एक पल के लिए टेढ़ा टंग जाता है.... कि तभी आदेश होता है—टंगो नहीं, चलो... जहां से यात्रा उठाई थी वहीं

लघुकथा

जोंक

बलवीर त्यागी

तपेश ने अपना सर्वस्व परिवार को बनाने में होम कर दिया था. इसकी चुभन उसकी पत्नी दमयंती महसूस करती थी. किंतु तपेश ने उसके विरोध को कभी नहीं स्वीकारा था. उसका कहना था, ''दम्मो मैं समर्थ हो गया हूं. शेष परिवार को पैरों पर खड़ा करना मेरी जिम्मेदारी है.''

''इससे कौन इनकार करता है जो. सारी उम्र आपने उन्हें पैरों पर खड़ा करने में लगा दी और अब वे सब अपने-अपने पैरों पर खड़े हैं. अब तो अपने बारे में कुछ सोचो. उनसे अपने हिस्से की आमदनी मांगो. भतीजे राजा को तीन साल मुफ्त में टिकड़ तोड़ते हो गये हैं. कभी दिया उसने अपनी कमाई में से लाल पैसा. अच्छी-भली नौकरी लगवा दी. अब उसका खर्च उठाने का ठेका भी हमने लिया है क्या?'' दमयंती ने भड़ास निकाली ''दमयंती, तुम बहुत छोटे दिल की हो. भला अपनो से भी कोई पैसे वसूलता है क्या?'' तपेश ने उसे समझाने का प्रयत्न किया, किंतु दमयंती ने तो आज न समझने की कसम खा ली थी. वह भड़क उठी, ''क्यों जी, भाई-भतीजों को पैरों पर खड़ा करने की जिम्मेदारी तो आपने ले रखी है, लेकिन यह जो एक, दो, तीन की गिनती दिनों-दिन सयानी होती जा रही है, इनकी जिम्मेदारी किसी की नहीं?''

''दमयंती चिंता क्यों करती है? समय आने पर सब देखा जायेगा. सब मिल कर एक-दूसरे का बोझ उठा लेंगे.'' तपेश वातावरण को जरा हलका बनाने की कोशिश करता है, लेकिन दमयंती पैर पटकती और बड़बड़ाती हुई रसोईघर में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसे समाप्त करना है, उसके पहले नहीं, माई... चलते चलो...

गोविंद जय जय... गोपाल जय जय! अंधेरे में डूबे दरख्तों की डगालों से कीर्तन के स्वर जैसे नीचे झर रहे हैं. आदमी औरतों के मिलेजुले स्वर हैं, मद्धिम! अंधेरे में आगे-आगे कोई दूसरी टोली गाती चली जा रही है. कीर्तन के स्वर उठकर वातावरण में पहुंचते हैं और फिर चारों ओर, नीचे, झरते हैं... अपढ़ और अज्ञानी नाम के सहारे ही अपने को विराटता से जोड़ें!

एक फलांग पर जतीपुरा गांव. चलने की थकान और पांवों पर उछल आये घावों से उत्पन्न एक अजीब-सी निंदास में बहते-से चलते आ रहे हैं रघुनाथ... अवचेतन कहां-कहां झुलाता हुआ. यात्रा-समाप्ति की सुखद प्रतीति हुई तो सचेतनं जागा, हैरत हुई कि वे इतना कैसे चल सके. ब्राह्मणी..सूखी टहनी-सी, डेढ़ बीते और अढ़ाई हड्डियों की वह औरत हर वर्ष इतना चलती है!

एक माई बायीं तरफ दिन-भर की एक-सौ-आठी डंडौती परिक्रमा को समाप्त कर अपना सामान बटोर रही थी. यहां भी उतना ही सामान एक टिन गिट्टियां, एक बोरे का टुकड़ा और भगवान की तस्वीर. रघुनाथ ने टोली के लोगों से विदा ले ली थी और अब अकेले धीमे-धीमे चल रहे थे, माई के पास आकर रुक गये.

''माई.... यहां तो रोशनी है, थोड़ी देर और नहीं.''

''गांव पहुंचने में भी तो समय लगेगा बेटा! डेढ़ कोस से कम नहीं है.''

''डेढ़ कोस! यह सामने तो रहा गांव!''

''क्या जतीपुरा?'' माई हंसी, ''सामने कैसे जा सकती हूं. परिक्रमा खंडित करूंगी? आज इस जगह.... यहीं तो खत्म की है.''

''ओह!'' रघुनाथ ने गलती की. गांव तो एकदम सामने भी है. लेकिन खाने-पीने के लिए न जाकर माई पीछे जायेगी, चाहे जितना दूर हो.... क्योंकि परिक्रमा करती हुई अभी यहीं तक पहुंच पायी है. आगे तो भूमि को लोटकर स्पर्श करते हुए ही बढ़ेगी.

''बहुत अच्छा है.... श्री गिरिराज की परिक्रमा के साथ-साथ ब्रजरज का भी पूजन करती चल रही हैं आप?'' रघुनाथ ने उत्साह बढ़ाने के विचार से कहा.

''हां बेटा, भूमि ही है जो पवित्र बची है.... आदमी तो यहां का भी पता नहीं क्या होता जाता है. अब देखो परिक्रमा के ही रास्ते में यहां एक बाबा की गुफा है. वहां के कुएं में कारे बाबा के चेले गोपालदास की लाश निकली. पांच रोज पहले पुलिस आयी रही. अब गोपालदास बेचारी गुफा में भजन करता रहा... हम सभी को मालूम है. उसके दोनों तरफ पत्थर बांध कांटे से लपेट कुएं में डाल दिया. हे भगवान्!''

''क्यों?''

''वही मुआ पैसा... और क्या! सोचते हैं गुफा में, उस कुएं में पुराना रुपया-पैसा गड़ा-धरा है. पहले कारे बाबा आड़े रहा उनके, अब चेला था. कंटक हट जाये तो खोद-खोद कर निकाल लें.... अपने घर भर लें...'' माई के मुंह पर घृणा थी. ''किसी से कहना नहीं बेटा, नहीं तो मेरी जान पर आ जायेगी. तुम बाहर के हो तो बता दिया.... जाओ.... जाओ, रात हो गयी है.''

रघुनाथ आगे बढ़ गये. यहां भी वे ही कुकृत्य! ये देखो तो दिनोंदिन चलते अनुष्ठान, हर पल चलते स्नान, अभिषेक... सिर्फ ढकोसला लगते हैं! गनीमत कि ये काम उनके नहीं होते जो यात्रा पर आते हैं, बल्कि ज्यादातर उन्हीं के होते हैं जिन्हें यात्रा से ही पैसे कमाना है—ठेकेदार, ब्राह्मण, पंडे! ब्रज-भूमि में लोग अपने को उससे जोड़ने आते हैं जो रोजमर्रा के जीवन में उनसे छूटता चला जाता है... और इसी भूमि में बसते हैं वे, जो पैसे की लालच में कुछ भी करने को तैयार, साधु की हत्या भी.... कि पिछले सैकड़ों वर्षों से पुण्यात्मा तीर्थयात्री दान-दक्षिणा के रूप में कुएं में जो पैसे-रुपये डालते रहे, वह निकाल कर अपनी झोली भर लें. रुपये के लिए वही लालच, वही हायतोबा, जैसा शहरों में है!

जतीपुरा से जतीपुरा तक.... भगवान् के मुखारविंद से मुखारविंद तक रघुनाथ का शरीर दर्द से टूट रहा था पर मन एक अजीब तृप्ति से आलोड़ित था. ऐसा पहले कभी नहीं हुआ उसके साथ.

अब भागने की जरूरत नहीं है. उनका खलबलाता व्यक्तित्व बंध रहा है!

यहीं उपाध्याय के यहां रात बितायेंगे. प्रातः निकलकर यात्रा से जा मिलेंगे. यात्रा की सबसे बड़ी यात्रा तो यह रही जो आज उन्होंने की... यात्रा से बाहर चलकर. □

यह उपन्यास 'धीरसमीरे' नाम से राजपाल एंड संस, कश्मीरी गेट दिल्ली द्वारा शीघ्र प्रकाश्य.

चली गयी. भतीजे दीपेश का ड्यूटी से आने का समय हो रहा था.

तपेश का प्रतीक्षित समय आ गया. उसकी बड़ी लड़की रेणु विवाह योग्य हो गयी. वह दौड़ा-दौड़ा गांव पहुंचा. उसने रेणु के विवाह की समस्या भाइयों के सामने रखी. सारे भाई कुछ ही क्षणों में गिरगिट की तरह रंग बदल गये और तपेश को अपनी-अपनी जिम्मेदारियां स्वयं निभाने का पाठ पढ़ाया. तपेश भौंचक रह गया. उसने कभी सपने में भी नहीं सोचा था कि वे सब तोते-चश्म निकल जायेंगे. वह लुटा-पिटा-सा शहर लौट आया और खोया-खोया-सा चारपाई पर पसर गया. दमयंती को पति को लस्त-पस्त देख कर तनिक भी हैरानी नहीं हुई. मानों वह सब पहले से जानती थी. वह धीरे-धीरे उसके पास पानी का गिलास ले कर आयी और बोली, ''क्या हुआ जो?''

''वही जो तुम कहा करती थी.'' तपेश अत्यंत ठंडे स्वर में बोला, ''हूं.'' दमयंती ने गंभीर होकर कहा, ''देख लिया लाड़ले भाइयों को. एक आप हो, जो मेरी कभी बात मानी हो. रिश्ते-नाते जभी तक होते हैं, जब तक उनका पेट फाड़ते रहो और जब उनसे कुछ लेने का सवाल आता है तो सब आंख बदल जाते हैं. यही जमाने की रीत है. अब भी समय है, चेत जाओ. रेणु का विवाह अगले साल कर देंगे. तब तक कुछ-न-कुछ जुगाड़ हो ही जायेगा. भाइयों से अपना हिस्सा बांट लो और यह जो भतीजे राजा जोंक की तरह हमारा खून चूस रहे हैं. इसे भी रास्ता दिखाओ. एक आदमी का कोई खर्च नहीं होता क्या? पर आपको तो खून चुसवाने की आदत पड़ गयी है. लेकिन मैं अब और बर्दाश्त नहीं करूंगी.'' दमयंती मन की भड़ास निकाल कर खाली गिलास लिए पलट गयी और तपेश कमरे की छत में निगाह गड़ाये सोचता रहा. उसे लग रहा था कि उसके सारे शरीर में जोंक चिपटी हुई है और उनके मुंह उसके परिवार के लोगों के हैं. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहली रात की कहानी

शहरज़ाद ने कहा, "ओ भाग्यशाली राजा, मैंने सुना है कि एक जमाने में एक बहुत बड़ा व्यापारी था, जिसका व्यापार दुनिया के सब देशों से होता था और जिसकी दौलत की थाह न थी. उन दिनों उससे ज्यादा अमीर कोई आदमी न था.

एक दिन वह घोड़े पर सवार होकर ऐसे कुछ स्थानों के लिए रवाना हुआ, जहां वह माल बेचता-ख़रीदता था. चलते-चलते दोपहर हो गयी. तेज़ धूप से बचने के लिए वह एक पेड़ की छांह में बैठ गया—और अपने खाने के झोले में से खाना और कुछ खजूर निकाल कर खाने लगा. खजूर उसने खाने के अंत में खायीं.

जब उसने खजूर की गुठलियां दूर फेंकी तो जहां वे जाकर गिरीं थीं, वहां भीमकाय जिन्न प्रकट हुआ और हाथ में एक तलवार लिये, उसकी ओर बढ़ा. व्यापारी के पास पहुंचकर, उसने चिल्लाकर कहा, "उठ, ताकि मैं तुझसे अपने बच्चे की हत्या का बदला ले सकूं."

"मगर मैंने तुम्हारे बच्चे की हत्या कहां और कैसे की?" व्यापारी ने आश्चर्य से पूछा.

"जब तूने खजूर की गुठलियां फेंकी थीं तो वे मेरे बच्चे की छाती में लगीं जिनके प्रहार से वह चल बसा. इस तरह तू ही मेरे बच्चे की मौत के लिए जिम्मेवार है."

व्यापारी ने जब देखा कि जिन्न उसकी जान लेने पर तुला है और किसी भी हालत में उसे नहीं छोड़ेगा तो उसने जिन्न से कहा, "अच्छी बात है जिन्न साहब, आपको मेरी जान लेनी ही है तो अवश्य ले लीजिये मगर मेहरबानी करके मरने से पहले मुझे कुछ लेन-देन के जरूरी काम पूरे करने दीजिये. नहीं तो मेरे मरने के बाद वे लोग सोचेंगे कि मैंने उनके साथ दग़ा की. मैं एक सच्चा इंसान और ईमानदार व्यापारी हूं और आपको वचन देता हूं कि जैसे ही मेरे लेने-देने के सब काम पूरे हो जायेंगे, मैं आपके पास आकर अपने को आपके हवाले कर दूंगा."

जिन्न ने व्यापारी की बातों पर विश्वास कर उसे जाने दिया.

व्यापारी ने अपने घर पर लौटने के बाद अपने सब लेन-देन पूरे किये. अपने सब दायित्वों से मुक्त होकर, उसने अपने बीवी-बच्चों से सारी घटना सुनाकर कहा कि अब उसे जल्दी से जल्दी जिन्न के पास वापस लौटना है. उसकी यह बात सुनकर उसके परिवार के सब लोग, रिश्तेदार और दोस्त-अहबाब रोने लगे. व्यापारी को जिन्न के पास लौटने की जल्दी थी और वह अपना वसीयतनामा लिखकर, सबसे विदा लेकर, अकेला जिन्न के निवासस्थान की ओर रवाना हो गया. जिस दिन उसने अपना सफ़र शुरू किया, वह दिन नये साल का पहला दिन था. उस दिन का सफ़र उसने एक बाग में पहुंचकर पूरा किया. जैसे ही वह आराम करने के लिए एक पेड़ के नीचे बैठा, उसे याद आया कि जिन्न के हाथों मरने की घड़ी निकट आ रही है और वह रोने लगा.

उसे रोते देखकर एक बुजुर्गवार जो एक चिकारा के गले में जंजीर बांधकर से बाग में घूमा रहे थे, उसके पास आये और दुआ-सलाम के बाद उससे पूछने लगे, "क्या मैं जान सकता हूं कि आप यहां अकेले बैठे क्यों रो रहे हैं? क्या आप नहीं जानते कि यह सारा क्षेत्र एक जिन्न के दुष्प्रभाव से ग्रस्त है?" उत्तर में व्यापारी ने अपनी व्यथा-कथा उसे सुना दी. इस कहानी को सुनकर बुजुर्गवार ने कहा, "मेरे भाई! मैं एक मामूली शेख हूं, मगर तुम एक फरिश्ता हो. तुम जैसा ईमानदार आदमी आज कहां मिलता है? मैं तुम्हारे पास ही बैठता हूं, यह देखने के लिए कि जिन्न तुम्हारे साथ कैसा सुलूक करता है," कहकर वे बुजुर्गवार व्यापारी के पास ही बैठ गये. वे व्यापारी का दिल बहलाने के लिए बातें करने लगे, यह जानते हुए भी कि इससे व्यापारी को कोई राहत नहीं मिल रही है.

किस्सा एक व्यापारी और जिन्न का

किस्सोगोई के अद्भुत चमत्कारों का यह सिलसिला पिछले अंक से प्रारंभ हुआ था जहां शहरजाद कहानी सुनाने को तैयार हो तो गया था पर इस शर्त पर कि राजा साहब को कोई ऐतराज नहीं होना चाहिए. शहरयार ने इस पर फौरन हामी भर दी क्योंकि वह भी कहानी सुनने की ख्वाहिश रखता था. बहरहाल कहानी शुरू हुई और वह भी व्यापारी और जिन्न के आमने-सामने से...

तभी एक शेख उन दोनों के पास आ गये. वे जंजीरों में काले रंग के दो ग्रेहाउंड कुत्तों को बांधकर उन्हें बाग में घुमाने लाये थे. उन्होंने दोनों से जिन्न-प्रभावित क्षेत्र में आने का कारण पूछा. व्यापारी ने सारी कहानी सुना दी. वे भी उन दोनों के पास बैठकर जिन्न के आने का इंतजार देखने लगे. तभी एक तीसरे शेख तशरीफ लाये. वे एक मादा-खच्चर के साथ आये. उन्होंने भी व्यापारी से वही सवाल किया जो पहले दोनों शेखों ने किया था, और व्यापारी ने तीसरी बार अपनी व्यथा-कथा सुना दी.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसी समय तेज़ हवा चलने लगी और रेत का एक बड़ा बगूला आसमान में ऊपर उठता दिखायी देने लगा. धीरे-धीरे, इस बगूले ने विशाल और विकराल रूप धारण कर लिया और उधर बढ़ने लगा जिधर व्यापारी और तीनों शेख बैठे थे. उनके पास पहुंचते ही यह बगूला गायब हो गया और उसके स्थान पर प्रकट हुआ वही जिन्न जिसने व्यापारी को मारने की धमकी दी थी. उसके हाथ में एक तलवार थी और वह जलते हुए नेत्रों से व्यापारी को देखते हुए कहने लगा, ''चल उठ! अब मैं तुझे उसी तरह मारूंगा, जिस तरह तूने मेरे प्यारे बच्चे को मारा था.''

व्यापारी जिन्न के यह शब्द सुनकर रोने लगा और उसके साथ तीनों शेख भी रोने लगे. अंत में पहले शेख ने हिम्मत की और जिन्न का हाथ चूमकर कहा, ''ओ जिन्नों के शहंशाह, मैं आपकी इज़ाज़त लेकर आपको अपनी और अपनी चिकारा की हैरतअंग्रेज कहानी सुनाना चाहता हूं. अगर कहानी सुनकर आपको लगे कि वाकई मेरी कहानी हैरतअंगेज है तो आपको इस अभागे व्यापारी को एक-तिहाई खून की माफ़ी देनी होगी.''

जिन्न ने कहा, ''ओ शेख, मैं वायदा करता हूं कि अगर मुझे तुम्हारी कहानी वाकई हैरतअंगेज लगी तो मैं इस व्यापारी का एक-तिहाई खून माफ़ कर दूंगा.

पहले शेख की कहानी

''ये चिकारा जो मेरे साथ है, असल में मेरी बीवी है.'' पहले शेख ने अपनी कहानी शुरू की, ''और इसके साथ मैंने अपनी ज़िंदगी के तीस साल सुख से बिताये थे. मगर मेरी तक़दीर खराब थी और मेरे कोई संतान नहीं हुई. इसलिए मैंने एक रखैल रख ली और उसने मुझे स्वस्थ-सुंदर पुत्र का पिता बनने का सौभाग्य प्रदान किया. मैं उसे देखता तो अपने सब ग़म भूल जाता था.

''लड़का जब पंद्रह साल का हुआ तो मुझे अपने धंधे के सिलसिले दूर के एक शहर में जाना पड़ा. मेरी ग़ैरहाज़िरी में मेरी बीवी को, जो एक प्रवीण जादूगरनी थी (हालांकि यह बात तीस साल तक उसने मुझसे छिपाकर रखी थी) अपने सौतेले बेटे के खिलाफ़ कुछ करने का मौका मिला. उसने अपने जादू के ज़ोर से अपने सौतेले बेटे को बछड़ा बना दिया और उसकी मां को (जो एक दासी थी) एक गाय बना दिया और फिर दोनों को अपने पति के गाय-बछड़ों के झुंड में शामिल कर दिया.

''जब मैं वापस घर आया तो मैंने अपनी बीवी से अपनी रखैल और अपने बेटे के बारे में पूछा. मेरी बीवी ने कहा कि मेरी रखैल मर गयी है और लड़का न जाने कहां भाग गया है. यह सुनकर मेरी आंखों में आंसू आ गये. मैं एक साल तक शोक-संतप्त रहा.''

''साल में एक बार हम किसी जानवर की कुर्बानी देते हैं. जब वह दिन आया तो मेरे गुलाम ने कुर्बानी के लिए उसी गाय को चुना जो असल में मेरी रखैल थी. गाय के रूप में वह खूब मोटी और हृष्ट-पुष्ट नजर आती थी लेकिन जब उसे मारा गया तो मुझे यह जानकर बड़ा दुख हुआ कि वह हड्डियों का ढांचा भर थी और उसमें गोश्त नहीं था. मैंने अपने गुलाम से कहा, ''कोई मोटा-ताज़ा बछड़ा हो तो उसे ले आओ कुर्बानी के लिए वह उस बछड़े को ले आया जो असल में मेरा लड़का था.''

कहानी यहीं तक पहुंची थी कि सुबह हो गयी और शहरज़ाद समझदारी से काम लेते हुए खामोश हो गयी. उसकी बहन दुन्याज़ाद ने उससे कहा, ''कहानी बड़ी दिलचस्प है और तुमने उसे बड़े रोचक ढंग से सुनाया भी है. आगे क्या हुआ?''

''आगे चलकर कहानी और ज्यादा दिलचस्प हो जाती है,'' शहरज़ाद ने कहा, ''लेकिन आगे की कहानी मैं तभी सुना सकूंगी, जब मैं आज सुबह के बाद ज़िंदा रहूंगी. मेरा ज़िंदा रहना राजा की मेहरबानी पर निर्भर करता है.'' यह सुनकर शहरयार ने जिसे अधूरी कहानी सुनकर बड़ा मज़ा आया था मन ही मन सोचा, 'पूरी कहानी सुनने तक मैं शहरज़ाद को नहीं मारूंगा.' उधर वज़ीर जब राज-दरबार में आया तो यह सोचकर आया था कि उसकी बेटी अब तक ख़त्म हो गयी होगी. लेकिन उसे तब बहुत हैरत हुई जब उसके मरने का ज़िक्र न खुद राजा ने उससे किया, न किसी और ने.

दूसरी रात को

दूसरी रात को दुन्याज़ाद ने अपनी बड़ी बहन से पूछा, ''कल की अधूरी कहानी आज पूरी करोगी न?'' शहरज़ाद ने कहा, ''बेशक! बशर्ते कि राजा इज़ाज़त दें.'' शहरयार ने कहा, ''हां, तुम्हें पूरी करने की इज़ाज़त है.'' शहरज़ाद ने कहना शुरू किया, ''बछड़ा व्यापारी को देखते ही सुबकने लगा. उसे सुबकता देखकर व्यापारी को उस पर रहम आ गया और उसने अपने गुलाम से कहा, ''इस बछड़े को झुंड में छोड़ दो.''

जिन्न बड़ी दिलचस्पी के साथ शेख की कहानी सुन रहा था. शेख ने आगे कहा, ''मेरी बीवी. जिसने जादू के ज़ोर से मेरे बेटे को बछड़ा बनाया था, मुझसे कहने लगी, ''कुर्बानी के लिए यह बछड़ा ठीक लगता है. खूब मोटा-ताज़ा भी है.'' लेकिन मैंने उसकी बात पर कोई ध्यान नहीं दिया और बछड़े को वापस झुंड में भेज दिया. अगले दिन, मेरे एक गुलाम ने मेरे पास आकर कहा,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शादी से पहले और बाद ताकत व जवानी के लिए मिलें या लिखें

मिलने का समय :
सुबह 11 से 1, शाम 6 से 7.30
रविवार सुबह 11 से 1 (केवल)

कीमती पुस्तक पत्र लिखकर मुफ्त मंगवाएं

अगर आप कई जगह से इलाज करवाकर भटक चुके हैं तो आईए, हम आपको ताकत व जवानी की दौलत से मालामाल कर दें। हमारे खानदानी शफ़ाख़ाना के चार पुश्तों से चले आ रहे कीमती नुस्ख़े जो किसी ज़माने में सिर्फ राजे-महाराजे, खान, नवाब व रईस-लोंग ही इस्तेमाल कर सकते थे, अब आप भी हमारे उन कीमती शक्तिवर्धक खानदानी नुस्ख़ों को इस्तेमाल करके अपनी खोई हुई सेहत, ताकत व जवानी फिर से प्राप्त करके दीर्घायु तक सुखी विवाहित जीवन का भरपूर लुत्फ उठा सकते हैं। अगर आप बचपन की गलतकारियों की वजह से अपनी ताकत व जवानी खत्म कर चुके हैं, तो परेशान न हों। हमारे सैक्स स्पैशलिस्ट (Sex Specialist) से जल्द मिलकर या लिखकर जल्द लाभ उठाएँ। अपने दिल की बात आज ही डॉक्टर साहब से स्वयं बता दें या लिख दें। अधिकतर पुरुष शर्म, संकोच या अपनी कमजोरी छिपाकर विवाहित जीवन का पूर्ण आनन्द प्राप्त नहीं कर सकते। ऐसा करने से आपका जीवन नष्ट हो सकता है। लेकिन समय पर सही सलाह और सही इलाज से दुख को सुख में बदला जा सकता है। ख़ानदानी शफाख़ाना दिल्ली में कई मरीज आकर दिल की मुराद पाते हैं।

Note : पत्र व्यवहार से भी इलाज होता है। जो लोग नहीं आ सकते, पत्र में पूरी तफ्सील लिखकर घर बैठे मशवरा व दवाएँ प्राप्त कर सकते हैं। पत्र व्यवहार गुप्त रखा जाता है। दुनिया के कोने-कोने से ख़ानदानी शफ़ाख़ाना के इलाजों के लिए मनी आर्डर, ड्राफ्ट, पौंड, डालर इत्यादि आते हैं

Note : विदेशों के लिए जरूरी सूचना

हमारे इलाज भारत के इलावा विदेशों के हर मुल्क में भी जाते हैं। विदेशी भाई रकम एडवांस में भेजें। दवाएँ हवाई जहाज से भेजी जाती हैं।

ख़ानदानी शफ़ाख़ाना

4/12, पहली मंजिल (नज़दीक ब्राडवे होटल)
आसफ अली रोड़, नई दिल्ली -110 002
फोन: 267709, 269650

मालिक अगर आप इनाम देने का वायदा करें तो मैं आपको एक खुश-खबर सुनाऊं." मैंने कहा, "खुश-खबर होगी तो इनाम जरूर मिलेगा." उसने कहा, "मेरी लड़की एक जादूगरनी है. एक बूढ़ी औरत ने, जो हमारे साथ ही रहती है, उसे जादू की शिक्षा दी है, कल जब मैं बछड़े को लेकर जा रहा था तो वह बछड़े को देखकर, अपना मुंह घूंघट में छिपाकर, पहले तो रोयी—और फिर हंसने लगी. जब मैंने उसके रोने और हंसने का कारण पूछा तो उसने कहा, "मुझे रोना इस बात का आया कि यह बछड़ा असल में हमारे मालिक का लड़का है, जिसे उसकी सौतेली मां ने जादू से बछड़ा बना दिया है. मैं इस बात पर भी रोयी कि मालिक ने अनजाने में उसकी मां की, जो जादू के ज़ोर से गाय बना दी गयी थी, हत्या करा दी थी. और हंसी मुझे आयी, इस स्वरूप-सुंदर और आकर्षक नवयुवक को बछड़े के रूप में देखकर."

गुलाम की बात सुनकर मालिक से रहा न गया और वह फौरन अपने बेटे को देखने के लिए चल पड़ा. गुलाम के घर पहुंचा तो बछड़ा उसके पांवों में लोट गया. मालिक ने गुलाम की बेटी को बुलाकर उससे कहा, "क्या यह सच है कि यह बछड़ा मेरा पुत्र ही है?" गुलाम की बेटी ने कहा, "यह सच है, मालिक." मालिक ने कहा, "यदि तुम इसे बछड़े के चोले से आज़ाद कर सको तो मैं तुम्हें जो मांगोगी, वह दूंगा." लड़की ने कहा, "मालिक, मैं दो शर्तों पर यह काम कर सकती हूं. पहली शर्त—आप अपने बेटे की शादी मुझसे करेंगे. दूसरी शर्त—मैं जब, जिसे चाहूं, जादू के ज़ोर से, किसी भी चोले में बदल सकूं."

मालिक ने इन दोनों शर्तों को खुशी-खुशी मान लिया. इस पर लड़की ने कहा, "आपकी इज़ाज़त हो, तो सबसे पहले मैं आपकी बीवी को चिकारा की शक्ल में तबदील करना चाहती हूं, ताकि वह हमेशा आपके साथ एक पालतू पशु के रूप में रह सके." मालिक ने इसकी इज़ाज़त दे दी और तब से वह जहां भी जाता है, अपनी जंजीर में बंधी पालतू चिकारा को साथ लेकर जाता है.

बछड़े को आदमी के चोले में लाने के लिए लड़की ने तांबे के एक बर्तन में पानी भरा और जादू के मंत्र पढ़कर उसे जादुई बनाया. फिर उस जादुई पानी को बछड़े के ऊपर छिड़कते हुए उसने कहा, "अगर तुम जन्म से ही बछड़े हो तो बछड़े बने रहो. नहीं तो उस शक्ल में आ जाओ जिसमें तुम अपनी सौतेली मां के जादू के असर में आने से पहले थे." जैसे ही उसकी बात पूरी हुई बछड़े ने अपना चोला छोड़ दिया और एक आकर्षक नौजवान बन गया. बाप ने अपने बेटे को गले से लगा लिया और बेटे की आंखें खुशी के आंसुओं से तर हो आयीं. उसने अपने बाप को बताया कि उसके जाने के बाद कैसे उसकी सौतली मां ने उसे बछड़ा और उसकी मां को गाय बनाया. उसके बाद व्यापारी का जीवन सुखपूर्वक व्यतीत होने लगा.

"तो यह है मेरी कहानी, ऐ जिन्नों के शहंशाह!" पहले शेख ने जिन्न से कहा, जिन्न ने उत्तर दिया, "तुम्हारी कहानी वाकई हैरतअंगेज है और मैं वायदे के मुताबिक, व्यापारी का एक-तिहाई खून माफ़ करता हूं."

अगले अंक में

व्यापारी का बाकी दो तिहाई खून कैसे माफ हो पाया?... किस्सा दूसरे और तीसरे शेख का...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहादुरशाह जफर पर चलाया गया मुकद्दमा
न्याय के साथ खिलवाड़!

हंस

विजेता हमेशा से विजित लोगों को बदनाम करने के लिये उनके नेताओं पर झूठे मुकद्दमे चलाकर, न्याय का नाटक करके, उन्हें सजा देते चले आ रहे हैं. द्वितीय विश्वयुद्ध में जर्मनों को हराने के बाद, ऐसा ही एक नाटक अमरीकियों और अंग्रेजों ने न्यूरेमबर्ग के मुकद्दमों का नाटक करके किया था. अंग्रेज लोग जब अपनी धूर्त्तता के बल पर भारत के शासक बने थे, तब ऐसा ही एक नाटक उन्होंने मुगल-राजवंश के अंतिम सम्राट बहादुरशाह जफर के साथ किया था, जिनका पूरा नाम था— अबू जाफ़र सिराजुद्दीन मुहम्मद बहादुरशाह द्वितीय.

न्याय का यह नाटक दुनिया को जनवरी, 1858 में देखने को मिला था.

इस मुकद्दमे का क्या औचित्य था, इस बारे में तो स्वयं मुकद्दमा चलाने वाले अंग्रेज-अधिकारी भी पूरी तरह न जानते थे, न आश्वस्त थे. वे जानते थे कि स्वयं अपने ही जज के सामने, जिसे बहादुरशाह जफर के खिलाफ निर्णय देना ही था, कितना भी झूठ बोलें, कितनी भी झूठी गवाहियां पेश करें, यह सिद्ध कर ही पायेंगे कि एक 82 साल का बूढ़ा 1857 में अंग्रेजों के खिलाफ हुए गदर के लिये जिम्मेवार था.

मगर, न्याय का यह नाटक तो होना ही था, और 27 जनवरी, 1858 को दिल्ली के लाल किले के दीवाने-खास में बहादुरशाह जफर के खिलाफ न्याय का यह नाटक, जिसे 'कोर्ट मार्शल' का सम्मानित नाम दिया गया, खेला गया.

इस नाटक का अंजाम क्या होगा, यह कुटिल अंग्रेज अधिकारी इस तथाकथित मुकद्दमे से पूर्व, अपनी कई कमीनी हरकतों द्वारा जगजाहिर कर चुके थे. इस मुकद्दमे से पहले, जफर को नजरबंद किया गया था, और उस नजरबंदी के दौरान, उन्हें प्रतिदिन भांति भांति की शारीरिक और मानसिक यातनाएं पहुंचायी जाती थीं. सबसे तीव्र और अमानवीय मानसिक यातना उन्हें तब पहुंचायी गयी, जब उनके सामने ही उनके दोनों पुत्रों को जान से मार डाला गया. इतना ही नहीं, उनके अपने वकील गुलाम अब्बास को भी इतनी यातनाएं दी गयीं कि वे 'सरकारी गवाह' बनने को तैयार हो गये.

> अंग्रेजों द्वारा बहादुर शाह जफर पर लगाये गये इल्जाम थे-
>
> — ब्रितानी सरकार से पेंशन पाकर भी वे ईस्ट इंडिया कंपनी के अधिकारियों और सिपाहियों को सरकार के खिलाफ लड़ने के लिए प्रेरित करते रहे.
>
> — ब्रितानी सरकार की प्रजा होते हुए भी उन्होंने गद्दारी करते हुए खुद को मुल्क का बादशाह घोषित कर दिया.
>
> — महल में 49 यूरोपियनों और अर्ध यूरोपियनों की हत्या करवायी...
>
> एक वतनपरस्त और गुलामी की जिंदगी की बजाय आजादी की मौत पसंद करने वाले हिन्दुस्तानी बादशाह पर लगाये गये ये इल्जाम कहां तक सही थे?

निष्पक्ष रूप से देखा जाये, तो बेचारे बहादुरशाह जफर का कसूर सिर्फ इतना ही था कि 20 मई, 1857 को आरंभ हुए गदर में भाग लेने वाले सब अंग्रेजी शासन के विरोधी नेताओं ने स्वेच्छा से, अपनी स्वामीभक्ति तथा एकता को अभिव्यक्त करने के उद्देश्य से बहादुरशाह जफर को अपना सर्वोच्च नेता चुना था, इसलिए कि वे भारत के अंतिम सम्राट थे. उनका यह निश्चय सर्वथा तर्कसंगत और परंपरावादी था, इसकी पुष्टि 'हिस्ट्री ऑफ द इंडियन म्यूनिटी' नामक पुस्तक के अंग्रेज लेखक चार्ल्स बॉल ने इन शब्दों में की है, "अंग्रेजों के सारे भारत का शासक बनने से पूर्व, देश पर मुगल-वंश के राजाओं का ही राज्य था, अतः अंग्रेजों के खिलाफ युद्ध करने वाले हर जाति, धर्म व वर्ग के नेताओं का यह निश्चय कि यह विद्रोह देश के संवैधानिक नेता तथा मुगल साम्राज्य के अंतिम सम्राट के नाम से लड़ा जाये, सर्वथा उचित, संवैधानिक और परंपरानुकूल था."

विद्रोहियों ने उन्हें अपना सर्वोच्च नेता घोषित करने से पूर्व, उनसे पूछा था या नहीं, इस बारे में इतिहास पूरी तरह मौन है. लेकिन, बहादुरशाह 'जफर' शारीरिक व मानसिक दृष्टि से इस स्थिति में नहीं थे कि वे इस प्रस्ताव से सहमत हो पाते. वे 62 वर्ष की आयु में गद्दी पर बैठे थे, और गदर के समय उनकी आयु 82 वर्ष थी. गदर से पूर्व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी, अंग्रेजों ने उनका प्रभाव-क्षेत्र उनके महल तक ही सीमित कर दिया था. अंग्रेज उन्हें एक लाख रुपये प्रति माह बतौर "शाही खर्च देते थे, लेकिन यह रकम उन पर आश्रित सैंकड़ों परिजनों और अनुचरों को भत्ता व वेतन देने के लिये पर्याप्त न थी, और वे हमेशा तंगी महसूस किया करते थे. उनकी मुख्य बेगम जीनत महल भी, जो कभी उनकी चहेती थी, गदर से पहले उनके लिये दर्दसर बन गयी थी, क्योंकि वह हमेशा 'जफर' के अन्य बेटों की उपेक्षा करके, अपने बेटे मिर्जा जवां बख्त को अपना वारिस बनाने के लिये अंग्रेजों को राजी करने के लिये जोर देती रहती थी. 'जफर' इस डर से कि इस निर्णय से भाइयों में आपस में जूतम-पैजार शुरू हो जायेगी, यह मामला कभी अंग्रेजों के सामने नहीं उठाया. वैसे, अगर वे उठाते तो भी उनका कोई असर नहीं होता, क्योंकि अंग्रेजों की दिली ख्वाहिश तो यह थी कि 'जफर' के मरते ही, वे खुद दिल्ली की गद्दी को हथिया लें, वे कभी किसी वारिस के नाम की घोषणा के लिये तैयार न होते.

गदर को दबाने के बाद, अंग्रेजों ने जो कई कड़वे सबक सीखे, उनमें एक यह था कि यदि सब भारतीयों की एकता को समाप्त करना है, तो सबसे पहले भारत से राजतंत्र को समाप्त करना होगा, क्योंकि राजा के नाम पर हर हिंदुस्तानी एक होकर, उसकी तथा राजतंत्र की रक्षा के लिये देश के शत्रुओं से लड़ने को तैयार रहता है. उन्हें इस बात की भी खबर थी कि विद्रोहियों ने अपने सपने के स्वतंत्र भारत की जो रूपरेखा बनायी थी, उसमें दिल्ली के शहंशाह की स्थिति वैसी ही थी, जैसी इंग्लैंड में राजा या रानी की होती है, अर्थात एक संवैधानिक राजा या रानी की. असली शासन करने की जिम्मेवारी 12 योग्य और राष्ट्रप्रेमी व्यक्तियों पर रखी गयी थी, जो सम्राट 'जफर' के परामर्शदाता नियुक्त किये जाने वाले थे. भला, अंग्रेजों को, जो अपना तानाशाही शासन भारत पर देखना चाहते थे, यह कहां स्वीकार होता?

उन दिनों, दिल्ली की जो हालत थी, उसे जफर के समकालीन उर्दू शायर गालिब ने इन शब्दों में बड़े प्रभावशाली ढंग में बयान किया है, "गोरों ने जो कत्लेआम मचाया है, उसकी वजह से शहर सहरा हो गया है. उर्दू कहां से रहेगी, जब उर्दू बाजार ही नहीं रहा. दिल्ली अब शहर नहीं रहा, छावनी बन गया है. न किला रहा, न बाजार, न नहरें. मेरे करीब-करीब सब दोस्त-अहबाब गोरों के हाथों मारे जा चुके हैं. आज मैं चल बसूं, तो कोई रोने वाला नहीं."

'गालिब' की तरह 'जफर' भी शायर थे. 'गालिब' जैसे महान शायर भले ही ना रहे हों, लेकिन उन जैसे ही भावप्रवण थे. उन्होंने अपना श्रेष्ठतम काव्य-सर्जन रंगून की जेल में किया, जहां अंग्रेजों ने इस मुकद्दमे के बाद उन्हें निर्वासित किया था. ब्रिटेन के प्रमुख समाचार पत्र 'द टाइम्स' के तत्कालीन भारत के प्रतिनिधि रसल ने अपनी एक पुस्तक में शायर जफर का जिक्र करते हुए लिखा है, "उनकी रचनाएं संख्या में इनीगिनी होने के बावजूद, भावनाओं की सच्चाई, दर्द की गहराई और तड़प के लिये बेजोड़ मानी जाती हैं. 'न किसी की आंख का नूर हूं...' वाला शेर इसकी एक मिसाल पेश करता है." सदियां बीत गयीं, पर आज भी उनके प्रशंसक उनके शेर चाव से सुनते-सुनाते हैं. रसल ने अपनी पुस्तम में लिखा है, "अपने जीवन के अंतिम दिनों में उन्होंने कई शेर जलती हुई छड़ी से अपनी जेल की कोठरी की दीवारों पर लिखे थे. यह मार्मिक दृष्टांत किसी भी संवेदनशील की आंखें गीली करने के लिये पर्याप्त है." उनकी पीड़ा उनके आसपास की परिस्थितियों से उपजी है, और उनकी बेबसी और लाचारी की तीखी अनुभूति कराती है.

ऐसे बेबस और लाचार 82 वर्षीय आदमी को, जो हर तरह से दयनीय था, अंग्रेज लोग क्यों अपने लिये इतना बड़ा खतरा मानते थे कि उस पर मुकद्दमा चलाकर उसे देश से निर्वासित करने पर ही तुल गये. अंग्रेजों के लिये जर्जर और दयनीय और असहाय बहादुरशाह खतरनाक नहीं था, उनके लिये खतरनाक था वह राष्ट्रवाद, वह भारतीय एकता, वह राजतंत्र, जिसके वे प्रतीक थे. उन्होंने वास्तव में यह मुकद्दमा व्यक्ति बहादुरशाह ज़फर पर नहीं, भारतीय राजतंत्र व एकता के प्रतीक बहादुरशाह 'जफर' पर चलाया था.

जब बहादुरशाह जफर को अपने खिलाफ अंग्रेजों द्वारा चलाये जाने वाले मुकद्दमे के बारे में पता चला, तो उनकी आंखों के सामने 11 मई, 1857 का वह दृश्य घूम गया, जब विद्रोहियों ने उन्हें एकमत से अपना सर्वोच्च नेता माना था. बेचारे बहादुरशाह को यह खबर सुनकर जरा भी खुशी नहीं हुई थी, उलटे उन्हें डर लगा था. आधी रात के समय जब उनके सम्मान में 21 तोपों को दागा गया, तो आशंका के कारण उनका दिल कांप रहा था. वे मन ही मन जानते थे कि पचास वर्ष से अधिक के अंतराल के बाद, जो मुगल राज्य भारत में पुनः आरंभ हुआ है, वह पांच महीने भी शायद ही टिक पाये.

और यही हुआ. 20 सितंबर, 1857 को अंग्रेजों ने पुनः दिल्ली के राजमहल पर अधिकार कर लिया. अंग्रेजों के आगमन की सूचना पाकर बहादुरशाह ने हुमायूं के मकबरे में शरण ली थी, पर अगले दिन अंग्रेजों के सामने इस शर्त पर आत्म-समर्पण कर दिया कि उनकी, उनकी मुख्य बेगम जीनत महल और राजकुमार जवां बख्त की जानें बख्श दी जायेंगी. अंग्रेज कप्तान हॉडसन ने इन तीनों की जानें तो बख्श दीं, मगर 24 राजकुमारों की जानें ले लीं.

बहादुरशाह की नजरबंदी के दिन उनके लिये बड़े तकलीफदेह दिन थे. उनके सब हमदर्दों और रिश्तेदारों का सफाया हो चुका था, और उनके पास आने-जाने वाले सब अंग्रेज उन्हें हिकारत की निगाह से देखते थे. ऐसी दयनीय स्थिति में उन्हें पता चला कि अंग्रेजों ने उन पर यह अभियोग चलाया है कि वे एक ऐसे गिरोह के नेता थे, जिसने अंग्रेजों के भारतीय साम्राज्य की जड़ों को हिलाने का प्रयास किया था. यह अभियोग एक नामी अंग्रेज अधिवक्ता के मतानुसार, सर्वथा निराधार था, क्योंकि उस समय भारत में अंग्रेजों का कोई साम्राज्य नहीं था, और इसलिए उनकी जड़ों को हिलाने का सवाल ही नहीं उठता था.

27 जनवरी, 1858 को बहादुरशाह ज़फर के खिलाफ कोर्ट मार्शल देर से शुरू हुआ, क्योंकि कोर्ट के पुराने अध्यक्ष ब्रिगेडियर शॉवर्स के स्थान पर ले. कर्नल टावेस को नियुक्त किया गया था. कोर्ट के अन्य सदस्यों में तीन मेजर और एक कैप्टेन था.

बहादुरशाह ने हाथ में एक छड़ी लिये 'दीवाने खास' में प्रवेश किया. उनके लड़के मिर्जा जवां बख्त और उनके वकील गुलाम अब्बास उन्हें सहारा दे रहे थे. अंग्रेजों के वकील मेजर एफ.जे. हैरियट ने पहले ही यह स्पष्ट कर दिया कि "इस कोर्ट-मार्शल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के दौरान, उन प्राविधिकर्ताओं की ओर ज्यादा ध्यान नहीं दिया जायेगा, जिनका पालन अन्य मुकद्दमों में किया जाता है. सुनी-सुनायी गवाहियों को भी मान्य किया जायेगा, बस वे विश्वसनीय होनी चाहिए."

मुकद्दमा कैसे चलेगा, इसका आभास इस स्पष्टीकरण ने ही कर दिया था.

मुकद्दमा शुरू हुआ तो कोर्ट मार्शल के माननीय जजों ने सबसे पहले मिर्जा जवां बख्त को बाहर भिजवाया, क्योंकि वह अपने खिदमतगारों से लगातार बातें करके जजों का ध्यान भंग कर रहा था. अब बहादुरशाह अकेले रह गये. अदालत में क्या चल रहा है, यह उनकी समझ में नहीं आ रहा था, और वे बारबार अपने शाल से खेलकर अपना दिन बहलाने की कोशिश कर रहे थे. वे बस तभी जबान खोलते थे, जब उनसे पूछा जाता, "तुम (आप नहीं) कसूरवार हो या बेकसूर?" वे कहते, "बेकसूर", यह जानते हुए भी कि अपने को बेकसूर बताने से भी उन्हें कोई लाभ नहीं होगा; अंग्रेजों ने उनके लिये जो सजा पहले से तजबीज कर रखी है, वह उन्हें अवश्य मिलेगी ही.

उनके खिलाफ ये चार अभियोग लगाये गये थे:

(1) भारत में ब्रितानी सरकार से पेंशन पाकर भी उन्होंने ईस्ट इंडिया कंपनी के अधिकारियों और सिपाहियों को सरकार के खिलाफ लड़ने के लिये प्रेरित किया.

(2) उन्होंने अपने बेटे मिर्जा मुगल को राज-द्रोह करने के लिये प्रेरित किया.

(3) भारत में ब्रितानी सरकार की प्रजा होते हुए भी उन्होंने देश की सरकार के साथ गद्दारी कर, अपने को मुल्क का राजा घोषित किया.

(4) उन्होंने 16 मई, 1857 को महल में 49 यूरोपियनों और अर्द्ध-यूरोपिनों की हत्या करवायी.

सबूत के तौर पर शाही दरबार से उन शाही हुक्मों की प्रतिलिपियां प्रस्तुत कीं, जो राजमहल से 11 मई से लेकर 20 सितंबर, 1857 तक जारी किये गये थे. पहले सरकारी गवाह हकीम अहसानुल्ला ने बहादुरशाह के दस्तखतों को पहचाना. अगले दिन, अभियुक्त ने अदालत के सामने अर्जी दी कि उनके वकील गुलाम अब्बास रहेंगे. अर्जी मान ली गयी, लेकिन तीसरे दिन अदालत ने अब्बास पर जोर डालकर उनसे ऐसे बयान दिलवाये, जो उसके मुवक्किल बहादुरशाह के खिलाफ जाते थे. इस प्रकार, अंग्रेजों ने अपने विपक्षी वकील को ही अपना सबसे महत्वपूर्ण गवाह बना लिया. इतना ही नहीं, उन्होंने बहादुरशाह के भूतपूर्व सचिव मुकुंद लाल के मुंह से भी यह झूठी गवाही दिलायी कि महल में रहने वाले अंग्रेजों की हत्या बहादुरशाह के हुक्म से ही हुई थी.

मुकुंद लाल ने अंग्रेजों के प्रति अपनी स्वामीभक्ति प्रदर्शित करने के लिये अपनी गवाही में बहादुरशाह के साथ जीनत महल, आगा बेगम (उनकी लड़की), तथा दो अन्य बेगमों– नानी बेगम और अशरफुत्तिमा को भी लपेट लिया, और कहा कि अंग्रेजों की हत्या का हुक्म इन चारों ने मिलकर दिया था.

4 मार्च, 1858 को बहादुरशाह ने अपने बेकसूर होने का बयान उर्दू में दिया, और कहा कि वे गदर में भाग लेने वाले अधिकारियों व सिपाहियों के सर्वोच्च नेता होने के स्थान पर, उनके कैदी थे. वे लोग उनका हुक्म मानने के स्थान पर, उन पर ही हुक्म चलाते थे. उनके बाद, प्रमुख सरकारी अधिवक्ता हैरियट ने अपना बयान दिया जो 9 मार्च, 1958 तक चला.

जैसे ही, हैरियट का बयान खत्म हुआ, कोर्ट ने अपना फैसला सुना दिया. उसने, प्रस्तुत गवाहियों के आधार पर, अभियुक्त बहादुरशाह जफर को उन चारों अभियोगों का, सर्वसम्मति से, और असंदिग्ध रूप से दोषी पाया.

सजा के तौर पर, अदालत ने उन्हें देश-निर्वासन की सजा सुनायी.

उन्हें कहां निर्वासित किया जाये, इस बारे में अनेक सुझाव अंग्रेज अधिकारियों को पेश किये गये. अंदमान, हांगकांग, दक्षिण अफ्रीका आदि. अंत में, उन्हें रंगून भेजने का निश्चय किया गया. 7 अक्तूबर, 1858 को बहादुरशाह, जीनत महल, जवां बख्त और शाह अब्बास के साथ दिल्ली छोड़कर रंगून के लिये रवाना हुए. इलाहाबाद तक वे सड़क से गये, बाद में नदी से कलकत्ता तक और वहां से समुद्र के रास्ते रंगून तक.

बहादुरशाह 8 दिसंबर, 1858 को रंगून पहुंचे, और वहीं 7 नवंबर, 1862 को उनकी मृत्यु हुई.

कुछ लोग बहादुरशाह को राष्ट्रद्रोही और अंग्रेजों का टट्टू मानते हैं. उन्हें बहादुरशाह के उस पत्र की याद दिलानी आवश्यक है, जिसमें उन्होंने जयपुर, जोधपुर, बीकानेर आदि रियासतों के सजाओं को लिखा था, "मैं चाहता हूं कि फिरंगियों को जल्दी से जल्दी मुल्क से बाहर निकालने के लिए हम सब मिलकर कोशिश करें."

बहादुरशाह के एक शेर की ये लाइनें आज भी हमें इस बदनसीब इंसान की याद दिला देती हैं, "इतना है बदनसीब जफर दफ्न के लिये, दो गज जमीन भी न मिली कूए-यार में." □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिनेट भवन में ग्यारह हफ्तों तक चला मुकदमा कैसा रहा होगा... जिसमें कांग्रेस की ओर से सात वकील और अमरीकी राष्ट्रपति की ओर से पांच... जहां गवाहों को गवाही न देने के लिए रिश्वत दी गई हो और राष्ट्रपति का मनोबल गिराने के लिए हर संभव प्रयास किये हों...

अमरीकी राष्ट्रपति पर मुकद्दमा

□ कमला

उस काल के समाचारपत्रों ने इसे 'अमरीकी इतिहास का सबसे बड़ा मुकद्दमा' बताया था. और, आज तक भी यह मुकद्दमा 'अमरीकी इतिहास का सबसे बड़ा मुकद्दमा' माना जाता है.

आज से 120 साल पहले, जब अमरीकी राष्ट्रपति एन्ड्रयू जॉनसन पर अमरीकी सिनेट ने महाभियोग लगाया था, तब घोड़े-गाड़ियों के दिन थे. यह महाभियोग 54 सिनेटरों द्वारा लगाया गया था, और 'हाउस ऑफ रिप्रजेंटेटिव्स' के 190 प्रतिनिधि दर्शक के रूप में मौजूद थे. ये प्रतिनिधि 3 करोड़ अमरीकियों का प्रतिनिधित्व करते थे.

सिनेट ने अमरीकी राष्ट्रपति पर जो महाभियोग लगाया था, उसका विवरण इस प्रकार था: "यह प्रस्ताव पारित हुआ है कि अमरीकी राष्ट्रपति एन्ड्रयू जॉनसन महापराध करने, तथा अपने कार्य-काल में कदाचार और दुर्व्यवहार करने का अपराधी है.

"अमरीकी हाउस ऑफ रिप्रजेंटेटिव्स' द्वारा उक्त प्रस्ताव के संयोषण और समर्थन में, जो राष्ट्रपति एन्ड्रयू जॉनसन पर महाभियोग लगाने के संबंध में पारित किया गया है, उसके महापराधों तथा कदाचारों और दुर्व्यवहारों को सिद्ध करने वाले निम्न प्रमाण प्रस्तुत किये जाते हैं:

प्रथम अनुच्छेद

कोलंबिया जिले के वाशिंगटन नामक स्थान में रहने वाले अमरीकी राष्ट्रपति एन्ड्रयू जॉनसन ने अपने उच्च पद की गरिमा को भुलाकर, अपने उन कर्तव्यों को, जिनका पालन करने की शपथ उसने सार्वजनिक रूप से ली थी, संविधान की रक्षा करने हेतु, भुलाकर राष्ट्र के कानूनों का उल्लंघन किया, देश-द्रोह किया, और सार्वजनिक रूप से अपने संपर्क में आने वाले लोगों के साथ दुर्व्यवहार कर,

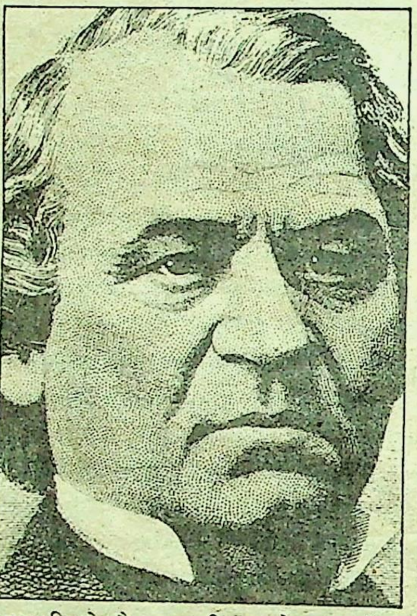

राष्ट्रपति के गौरवशाली पद को अपमानित किया.

दूसरा अनुच्छेद

उक्त अमरीकी राष्ट्रपति एन्ड्रयू जॉनसन ने, अपने उच्च पद की गरिमा को भुलाकर, तथा उस शपथ को भी भुलाकर, जो उसने संविधान की रक्षा करने हेतु तथा अपने पद के कर्तव्यों का पालन करने के लिये सार्वजनिक रूप से ली थी, कांग्रेस द्वारा पारित उस कानून का उल्लंघन किया, जिसके अनुसार राष्ट्रपति, बिना कांग्रेस की अनुमति और सहमति के, अपने किसी सैक्रेटरी को अपनी मर्जी से उसके पद से नहीं हटा सकता, अपने युद्ध-सचिव स्टेंगटन को उसके पद से हटाया.

तीसरा अनुच्छेद

उक्त अमरीकी राष्ट्रपति एन्ड्रयू जॉनसन ने, अपने उच्च पद की गरिमा को भुलाकर, तथा उस शपथ को भी भुलाकर, जो उसने संविधान की रक्षा करने तथा अपने पद के कर्तव्यों का पालन करने के लिये सार्वजनिक रूप से ली थी, अपने उच्च और गरिमायुक्त पद को अपमानित किया, अपने निम्न अकीर्तिकर कृत्यों द्वारा:

(1) अधिकांश समय नशे में धुत्त रहकर.

(2) अपने से मिलने के लिये आने वाले सिनेटरों, उच्चाधिकारियों व अन्य प्रतिष्ठित व्यक्तियों के साथ अभद्रतापूर्ण व्यवहार करके.

(3) अपने अधीनस्थ कर्मचारियों के साथ गाली गलौज करना, रूखी और असभ्य भाषा में बात करना.

(4) दक्षिणवासियों के साथ हमदर्दी दिखाकर पक्षपात करना.

अमरीकी 'हाउस ऑफ रिप्रजेंटेटिव्स' द्वारा राष्ट्रपति, न्यायाधीशों आदि उच्च पदों आसीन व्यक्तियों पर महाभियोग लगाने के अनेक अवसर आये हैं. यूं तो 1797 से 'आफ ऑफ रिप्रजेंटेटिव्स' द्वारा महाभियोग के काफ़ी मामलों पर विचार किया गया, लेकिन सिर्फ बारह अवसरों पर उसने इन मामलों को सिनेट में आगे कार्यवाही करने के लिये भेजना उचित समझा. राष्ट्रपतियों में अकेले एन्ड्रयू जॉनसन ऐसे थे, जिनके विरुद्ध सिनेट ने महाभियोग लगाकर, उन पर बाकायदा मुकद्दमा चलाया. चूंकि 'हाउस ऑफ रिप्रजेंटेटिव्स' राष्ट्रपति के अलावा अन्य उच्चाधिकारियों पर भी महाभियोग लगा सकता है, इसलिए उसने अपने इस अधिकार का प्रयोग कर, सर्वोच्च लगा सकता है, इसलिए उसने अपने इस अधिकार का प्रयोग कर, सर्वोच्च न्यायालय के एक एसोशियेट जज, एक सिनेटर, एक युद्ध सचिव, व आठ फेडरल जजों पर भी महाभियोग लगाया.

महाभियोग के लगने के बाद, संबंधित व्यक्ति पर एकदम मुकद्दमा शुरू नहीं हो.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाता, पहले मामले की सुनवायी होती है. यदि हाउस के अधिकांश प्रतिनिधि प्रस्तुत साक्ष्य को अस्वीकार करते हैं, तो महाभियोग की कार्यवाही को वहीं समाप्त मान लिया जाता है.

एन्ड्रयू जॉनसन के विरुद्ध 'हाउस ऑफ रिप्रजेंटेटिव्स' ने जीन बार महाभियोग लगाया था, लेकिन सिनेट ने उसे स्वीकृति दी, सिर्फ एक बार सिनेट 'हाउस ऑफ रिप्रजेंटेटिव्स' द्वारा उसके विचारार्थ भेजे गये महाभियोग के मामले पर विचार करते समय, एक न्यायालय बन जाती है.

जब सिनेट राष्ट्रपति पर लगाये गये महाभियोग पर विचार करने के बाद, राष्ट्रपति पर मुकद्दमा चलाने की स्वीकृति दे देती है, तो मुकद्दमे की अध्यक्षता के लिये सर्वोच्च न्यायाल के मुख्य न्यायाधीश को सिनेट रूपी न्यायालय का न्यायाधीश बनाया जाता है, और कुछ सिनेटर ज्यरी-सभ्य बनते हैं. मुख्य न्यायाधीश अभियुक्त राष्ट्रपति पर अभियोग लगाते हैं. अभियुक्त राष्ट्रपति अपना बचाव करने के लिये अपने अधिकारियों की सहायता ले सकता है. वस्तुतः सिनेट द्वारा लगाये गये महाभियोग की कार्रवाई के दौरानी, एन्ड्रयू जॉनसन एक बार भी सिनेट में उपस्थित नहीं हुए थे. उनका सारा बचाव उनके अधिवक्ताओं ने किया था.

सन् 1797 से लेकर अब तक सिनेट ने उच्च पदों पर आसीन जिन 12 लोगों पर मुकद्दमे चलाये, उनमें से आठ को दोषमुक्त पाया गया, और सिर्फ़ चार ही दोषी पाये गये थे चारों दोषी व्यक्ति फेडरल जज ही थे, और बतौर सज़ा उन चारों को उनके पदों से हटा दिया गया था. जिस पर सिनेटर पर सिनेट ने मुकद्दमा चलाया था, वह भी दोषी पाया गया, और उसे बतौर सज़ा सिनेट से अलग कर दिया गया. इस मुकद्दमे के दौरान, यह भी तय पाया कि सिनेटर, जो हमारे देश के सांसद की हैसियत का होता है, सरकारी अधिकारी नहीं माना जा सकता.

अमरीकी 'हाउस ऑफ रिप्रजेंटिटेव्स' ने 55 जजों को महाभियोग के उपयुक्त पाया था, लेकिन सिनेट ने कुल 8 पर ही मुकद्दमे चलाये. शेष 47 मामलों में 8 के विरुद्ध निंदा-प्रस्ताव पारित हुए, 22 को बेकसूर पाया गया, और शेष 17 ने मुकद्दमों की कार्यवाही शुरू होने से पहले ही इस्तीफे दे दिये थे.

लेकिन, आज तक किसी अमरीकी राष्ट्रपति ने इस्तीफा नहीं दिया. वुड्रो विल्सन तक ने नहीं दिया, जो पक्षाघात के कारण बिस्तर पर ही पड़े रहते थे. वे राष्ट्रपति-काल में ही था तो स्वाभाविक मौत से मरते हैं, या उनकी हत्या कर दी जाती है. वे कितने भी रोगी हो जायें, कितने भी अक्षम हो जायें, पर इस्तीफ़ा कभी नहीं देते. सिर्फ़, 1832 में जैक्सन के उप-प्रधान जैक कैल्हॉन ने अपने पद से तब इस्तीफ़ा दिया था, जब उनके पद-काल की समाप्ति में सिर्फ़ दो महीने रह गये थे, औ वे सदस्य बन चुके थे.

अमरीकी संविधान के अनुच्छेद, शाखा 4 के अनुसार, 11 अमरीका के राष्ट्रपति पर, विश्वासघात, रिश्वतखोरी, महापराधों और कदाचार के जुर्म में महाभियोग लगाया जा सकता है."

राष्ट्रपति पर लगाये जा सकने वाले महाभियोग के बारे में जैफरसन ने एक बार कहा था, "महाभियोग मात्र एक हौआ है." लेकिन, उनका यह मत एकदम सही नहीं माना जा सकता. राष्ट्रपति पर लगाया जाने वाला महाभियोग परोकोटि का अभियोग है, और काफ़ी ख़तरनाक भी है.

वैसे, महाभियोग की कोई सही व्याख्या न संविधान में है, न कहीं और लिखी हुई है. यह एक ऐसे विशाल छाते के समान है, जिसके नीचे तरह-तरह के अभियोग शरण ले सकते हैं. 1887 में प्रख्यात अमरीकी अधिवक्ता तथा इतिहासकार जॉर्ज कार्टिस ने महाभियोग के बारे में कहा था, "महाभियोग लगाने के लिये यह आवश्यक नहीं है कि अभियुक्त ने किसी विशिष्ट कानून का उल्लंघन किया हो. उसकी अनैतिकता, हीनबुद्धिता और कुप्रशासन भी उसे पद के हटाये जाने का कारण बन सकती है."

एन्ड्रयू जॉनसन इतिहास-प्रसिद्ध राष्ट्रपति लिंकन के उप-राष्ट्रपति थे. लिंकन की दुखद हत्या के बाद, 1865 में उन्हें राष्ट्रपति बनाया गया. उस समय उनकी आयु 57 वर्ष थी. उन्होंने अपना जीवन एक दर्जी के रूप में आरंभ किया था, और पूर्वी टैनेनीज में उनकी दर्जी की दुकान थी. उन्होंने कभी विधिवत् शिक्षा ग्रहण नहीं की. मगर, वे लोगों में लोकप्रिय थे, और राजनीति से उन्हें शौक था, इसलिए, अमरीकी सिनेटर बनने में उन्हें कठिनाई नहीं हुई. वे अनेक कारणों से लिंकन के प्रिय पात्र बन गये. पहला-दक्षिणवासी होते हुए भी, वे अमरीका के दक्षिण भाग के मुख्य अमरीका से पृथक में आकर उन्होंने अपने सब दासों को मुक्त कर दिया था, और दासत्व प्रथा के विरुद्ध जोरदार अभियान आरंभ कर दिया था.

जब एन्ड्रयू जॉनसन अमरीका के राष्ट्रपति बने, तो उन्होंने पाया कि वे निपट मित्रविहीन हैं. दक्षिण के डैमोक्रेट उन्हें विश्वासघात मानते थे. उत्तर के रिपब्लिकर उन्हें अविश्वासनीय विरोधी-समर्थक मानते थे. ह्वाइट हाउस के कर्मचारियों का आदर और स्नेह भी उन्हें प्राप्त नहीं था. उनकी पत्नी क्षय-रोग से ग्रस्त थी, और सदा बिस्तर पर ह पड़ी रहती थी. चार वर्षों में वह सिर्फ़ एक बार अपने पति के साथ लोगों के सामने आयी थी. एंड्रयू जॉनसन पर महाभियोग लगाये जाने का मुख्य कारण यह था कि उत्तर के रिपब्लिकन, जिनकी मुट्ठी में कांग्रेस थी, दक्षिण के राज्यों को, जो लंबे अर्से तक चलने वाले गृह-युद्ध में उत्तर की सेनाओं द्वारा पराजित हुए थे, अपने अधीन राज्यों से बेहतर दर्जा देने को कतई तैयार नहीं थे. इसके विपरीत, राष्ट्रपति जॉनसन जो लिंकन की नीतियों का अनुसरण कर रहे थे, युद्ध के घावों को भरना चाहते थे, और उद्देश्य से दक्षिण के राज्यों को वही सम्मानपूर्व दर्जा दिलाना चाहते थे, जो उत्तर राज्यों को प्रस्तुत था. उनकी यह नीति उत्तर के राज्यों को, जो अपने को 'विजेता राज्य' मानते थे, स्वीकार नहीं थी, और उसके प्रति अपने विरोध और आक्रोश को व्यक्त करने के उद्देश्य से ही, उन्होंने राष्ट्रपति जॉनसन पर महाभियोग लगाने का निश्चय किया था, उसे सबक सिखाने के लिये.

जॉनसन को उनके पद से हटाने के लिये कांग्रेस के लिये यह लाज़िमी था कि 54 में से 36 सिनेटर उनका समर्थन करें. जॉनसन सिर्फ़ एक मत से जीते.

सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश ने पाया कि 35 सिनेटरों ने राष्ट्रपति को दोषी पाया है, और 19 ने निर्दोष समर्थकों में एडमंड रॉस के जुड़ जाने से उनकी संख्या 18 से बढ़कर हुई थी, और राष्ट्रपति जॉनसन की विजय का कारण बनी थी.

जीत जाने पर भी, राष्ट्रपति जॉनसन के व्यवहार में कोई सुधार नहीं आया और ना ही, उनहेंने अपनी नीतियां बदलीं. लेकिन, उनके विरोधियों ने फिर उन्हें कभी तंग नहीं किया. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभागी आस्ट्रियन महिला श्रीमती जोसेफाइन रोडिश का 'अपराध' यदि था तो यही थाकि वह एक मां थी, एक पत्नी थी, एक ऐसी पत्नी, जिसे बचपन से ही यह सिखाया गया था कि अपने पति को देवता मानो और हर हालत में उसके सब आदेशों और अच्छे-बुरे व्यवहारों को खुशी-खुशी करो.

अपने इसी 'अपराध' के कारण वह इस समय जेल में बंद थी. उस पर जुर्म था कि उसने अपने पति की हत्या का प्रयास किया था. पति अस्पताल में पड़ा था—मौत और ज़िंदगी के झूले में झूल रहा था. पुलिस इस इंतजार में थी कि देखें वह जीता है या मरता है. मर गया, तब तो उसकी पत्नी को भी मरना होगा. और यदि वह जीता रहा तो उस पर क्या अभियोग लगाया जाता है, यह

पति के अत्याचारों से पीड़ित पत्नी अदालत द्वारा पति के खिलाफ फैसला देने के बावजूद महीने भर बाद ही फिर से पति के घर जाकर क्यों रहने लगी...?

आदित्य

आस्ट्रिया की एक अदालत में एक अनूठी प्रेम कथा

पति की हालत और उसके बारे में प्राप्त डॉक्टरी रिपोर्ट पर निर्भर करेगा.

उधर श्रीमती रोंडिश का यह हाल था कि जब से पुलिस ने उन्हें जेल में बंद किया था तब से उनके मुंह से एक भी शब्द नहीं निकला था. पुलिस पूछ-पूछकर हार गयी, कोई जवाब नहीं. उनके शहर में ही रहने वाले उनके एक भाई ने बहुत कोशिश की कि वे कम से कम उसे ही बता दें कि क्या हुआ था, ताकि वह अपने दो भाइयों के साथ जो दूसरे शहर में रहते थे, मिलकर अदालत में उन्हें बचा सकें. पर उन्होंने भाई के सामने भी मुंह नहीं खोला.

आखिर तीनों भाइयों ने मिलकर अपनी बहन को बचाने के उद्देश्य से एक अच्छे वकील को यह मामला सौंपा. उन्हें आशा थी कि उनकी बहन शायद वकील को अपनी व्यथा-कथा सुनाने को तैयार हो जायेगी मगर श्रीमती रोंडिश उसके सामने भी मूर्ति के समान बैठी रहीं.

तीन सप्ताह बाद, श्रीमती रोंडिश के पति जावेज रोंडिश को अस्पताल से रिहा कर दिया गया. उनके सब जख्म भर गये थे और डाक्टरों के अनुसार, वे अब पूर्णतया स्वस्थ थे. अब पुलिस हरकत में आयी और उसने श्रीमती जोसेफाइन रोंडिश पर 'हत्या की कोशिश' के जुर्म में अदालत में मुकद्दमा दायर कर दिया.

जब श्रीमती रोंडिश को इस मुकद्दमे के बारे में पता चला तो वे इतने दिनों के बाद पहली बार बोलीं उन्होंने पुलिस से कहा कि वे अपने को अदालत में निर्दोष साबित करेंगी. इस पर पुलिस ने उनसे कहा कि वे अपना बयान उसे लिखायें. श्रीमती रोंडिश इसके लिए फौरन तैयार हो गयीं. उन्होंने कहा, "जब यह दुर्घटना हुई तब पुलिस मेरी प्रार्थना पर मेरे घर आयी थी. तब मैंने उससे बारबार यही कहा कि यह एक दुर्घटना का मामला है, हत्या का नहीं. उन्होंने इसका अर्थ यह लगाया कि हत्या मैंने ही की है. मैं फिर कहती हूं कि मेरे पति अपने रिवाल्वर से मेरी हत्या का प्रयास कर रहे थे. मैंने झपट्टे से उनके हाथ से पिस्तौल लेने की कोशिश की थी. इसी कोशिश में उनकी पिस्तौल की नली का रुख उनकी ही ओर हो गया. अपने हाथ से चली पिस्तौल की गोली से वे घायल हो गये और फर्श पर गिर पड़े. मैंने पुलिस को बुलाया. उन्होंने आते ही सबसे पहले मेरे पति को अस्पताल भिजवाने की व्यवस्था की. फिर उन्होंने मेरा बयान लेना चाहा. मगर इस दुर्घटना से मैं इतनी मूक-स्तब्ध हो गयी थी कि कुछ बोल ही नहीं पायी. उन क्षणों की याद आज भी मुझे कंपा जाती है. फिर, उन्होंने रोते हुए उन जुल्मों के बारे में बताया जो उस पर उसके पति सुहागरात की रात से करते आ रहे थे. "मैंने कभी कोई ऐसा काम नहीं किया, जिसके कारण मुझ पर हमेशा पति द्वारा मार पड़ती रहे. नित्य नयी यातनाएं देने में वे बहुत निष्णात हैं. मैं उनके घर में पत्नी की तरह नहीं एक बंदिनी की तरह रहती हूं."

पुलिस ने उनसे पूछा, "क्या आप किसी ऐसे व्यक्ति को जानती हैं जो अदालत में कह सके कि आपके पति सचमुच आप पर इतने जुल्म करते थे?"

"एक क्या, हमारे सब पड़ोसी यह गवाही देने को तैयार हो जायेंगे कि मेरे पति सचमुच मुझ पर इतने ज्यादा जुल्म करते थे."

पुलिस ने जाकर उनके पड़ोसियों से बातें कीं. प्रायः सभी पड़ोसियों ने कहा कि उन्हें करीब-करीब रोज श्रीमती रोंडिश की चीखें सुनायी देती थीं. उसके पति जावेज उन्हें घूंसों और बैंतों से मारने से पूर्व, उन्हें खूब गालियां भी दिया करते थे और उनके पीहर के लोगों के बारे में अपशब्द बोला करते थे. पुलिस ने पड़ोसियों से जो जानकारी प्राप्त की उससे उसे पता चला कि श्रीमती रोंडिश अपने पति के हाथों यह अमानवीय अत्याचार पिछले सात वर्षों से सतत रूप से सहन करती चली आ रही हैं.

एक और महत्वपूर्ण बात जो पुलिस को ज्ञात हुई, वह यह भी कि जावेज ने रहने के लिए शहर का जो मुहल्ला चुना था

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसमें ज्यादातर ग़ैर-आस्ट्रियन रहते थे. वे नहीं चाहते थे कि उनकी पत्नी आस्ट्रियनों से अधिक मिले-जुले. मगर ये पड़ोसी आस्ट्रियन भले ही न थे, आदमी तो थे और वे दुखी और अभागी पत्नी के दुखदर्द को समझते थे. वे सब श्रीमती रोंडिश की ओर से अदालत में गवाही देने को तैयार थे.

जब मुकद्दमा शुरू हुआ, तो श्रीमती रोंडिश के वकील ने इन पड़ोसियों को गवाह के रूप में अदालत में पेश किया. गवाहियों का सार-संक्षेप इस प्रकार रहा:

श्रीमती रोंडिश एक रूपवती महिला हैं, मगर घमंड उन्हें छू भी नहीं गया है. वे अपने काम से काम रखती हैं. उनके पति उन्हें अकारण रोज मारते हैं.

उनके पति यद्यपि रोज पीटा करते थे तो भी वे उनकी भरपूर सेवा करती थीं. वे अपने दोनों बच्चों का भी पूरा खयाल रखती हैं.

उनका पति साक्षात् पशु है. वे पति के अत्याचारों को चुपचाप सहती हैं, और तभी चीखती-चिल्लाती हैं, जब पति की मार असहय हो जाती है.

ऐसी नेक और पतिव्रता पत्नी मैंने नहीं देखी. यद्यपि हम सब पड़ोसी उनके पति के अत्याचारों से सुपरिचित थे तथापि हमने कभी उनके मुंह से अपने पति के खिलाफ कोई शिकायत नहीं सुनी.

इन गवाहों की गवाही से पूर्व वकील ने श्रीमती रोंडिश से भी सवाल-जवाब किये थे. श्रीमती रोंडिश ने कहा कि उन्होंने न अपने पति की हत्या की है और न कभी पुलिस को यह बयान दिया था कि उन्होंने हत्या की थी. ''मैं नहीं जानती कि पुलिस को कब और कैसे यह गलतफहमी हो गयी कि मैंने उसके सामने कबूल किया था कि हत्या मैंने की है. दुर्घटना की शुरूआत तब हुई जब मैं सोफ़े पर लेटी थी और अचानक मैंने देखा कि मेरे पति मेरी ओर रिवाल्वर ताने मुझे घूर रहे हैं. इससे पहले कि मैं उनसे कुछ पूछ सकती, उन्होंने मुझसे कहा, 'तुम्हारा अंत समय आ गया है. अब मरने के लिए तैयार हो जाओ.' मैंने उठकर फुर्ती से उनकी ओर लपककर उनके हाथ से पिस्तौल गिराने की कोशिश की. इस प्रयास में पिस्तौल का रुख उनकी ओर हो गया और उसमें से गोली निकलकर उनके पेट में जा लगी.''

उधर, पुलिस के वकील ने एक ऐसे पड़ोसी को अपने गवाह के रूप में पेश किया जिसने अपनी गवाही में कहा कि उसने पिछले दो वर्षों में श्रीमती रोंडिश को, जिन्हें वे अच्छी तरह जानते थे, सिर्फ दो बार चीखते-चिल्लाते सुना था. गवाह ने अपनी गवाही में कहा कि वह पति जावेज रोंडिश से भी भली भांति परिचित था.

इस गवाह को पेश करके, पुलिस का वकील यह दिखाना चाहता था कि अन्य पड़ोसियों की यह गवाहियां बेबुनियाद थीं कि उनका पति उन्हें रोज पीटता था.

श्रीमती रोंडिश के वकील ने इस गवाह से पूछा, ''आपको कम सुनायी तो नहीं देता?''

''बिलकुल नहीं. मैं ठीक सुनता हूं. मगर आप यह सवाल क्यों पूछ रहे हैं?''

''इसलिए कि मुझे आश्चर्य है कि जो चीखें आपके अन्य पड़ोसी-साथियों को रोज सुनायी देती थीं वे आपको दो सालों में सिर्फ दो बार ही क्यों सुनायी पड़ीं! खैर, आप क्या करते हैं?''

''इस सवाल का मुकद्दमे से कोई संबंध नहीं है. मैं इस पर एतराज करता हूं.'' पुलिस के वकील ने इस प्रश्न पर एतराज उठाते हुए कहा.

''मैं इस एतराज को नामंजूर करता हूं,'' जज ने कहा.

पुलिस के वकील ने गवाह से फिर पूछा, ''आप क्या करते हैं?''

''मैं... मैं एक कंपनी में सेल्समैन हूं.''

''क्या आप कार्यालय में रहकर काम करने वाले सेल्समैन हैं, या बाहर सफर करने वाले?'' पुलिस के वकील ने पूछा.

विपक्षी वकील ने फिर एतराज उठाया. जज ने उसे फिर नामंजूर कर दिया.

''मैं सफ़र करने वाला सेल्समैन हूं.''

''महीने में कितने दिन बाहर रहते हो? सच बोलाना.''

''कभी कभी मैं महीनों भर नहीं आता,'' गवाह ने मुंह लटका कर कहा.

गवाह की इस स्वीकारोक्ति का ज्यूरी-सभ्यों और जज पर वही प्रभाव हुआ, जो श्रीमती रोंडिश का वकील चाहता था कि हो. इसके बाद ज्यूरी सभ्यों को संबोधित करते हुए कहा, ''मुझे पूरा विश्वास है, देवियो और सज्जनो कि एक बेदर्द, बेरहम और जानवर-सरीखे पति के कारनामों के बारे में सुनकर आपका खून खौल रहा होगा. हम जिस सभ्य जगत में रहते हैं, उसमें यह कल्पना करना भी असंभव-प्राय: लगता है कि ऐसे निर्दयी और असंवेदनशील पति भी हो सकते हैं. आपने गवाहों के मुंह से सुना कि किस प्रकार यह बेरहम पति अपनी पत्नी पर घूसों, बेंतों और कभी-कभी चाकू का प्रयोग भी करता था. आपने सुना कि उसने अपनी पत्नी को यातनाएं देना तब भी नहीं रोका, जब वह गर्भवती थी. तब उन्हें पति की अत्यधिक मार के कारण कुछ दिनों तक अस्पताल में भी रहना पड़ा था. अपनी बेकसूर और भोलीभाली पत्नी के साथ ऐसी निर्ममता से पेश आने वाला आदमी, आदमी नहीं कहा जा सकता क्योंकि वह शैतान है, नृशंसता का साक्षात् अवतार. जैसा कि ऐसे नृशंस आदमी से आशा थी, उसने उसके खिलाफ़ लगाये गये सब अभियोगों से इंकार किया है. उसने तो यहां तक झूठ बोला कि वह रिवाल्वर उसका नहीं है, जबकि सरकारी रेकार्ड से यह स्पष्ट है कि रिवाल्वर का लायसेंस उसी के नाम से है और उसने ही उसे खरीदा था. आपने यह भी सुना कि इस दुर्घटना के बाद उसने रिवाल्वर को छिपा दिया था. यदि वह बेकसूर था, तो उसे रिवाल्वर छिपाने की क्या जरूरत थी? इन बातों को ध्यान में रखते हुए, मैं आपसे निवेदन करता हूं कि आप इस निर्दोष महिला को मुक्त कर दें, क्योंकि वह अपराधिनी या हत्यारी नहीं है.''

ज्यूरी सभ्यों ने इस मामले पर विचार-विमर्श करके इस फैसले पर पहुंचने में अधिक समय नहीं लिया कि श्रीमती जोसेफाइन रोंडिश बेकसूर हैं. सिर्फ बीस मिनट लगे थे उन्हें इस निर्णय पर पहुंचने के लिए.

अपना निर्णय जज को सूचित करते हुए ज्यूरी-सभ्यों के फोरमैन ने जज महोदय से पूछा था, ''क्या वे अपनी ओर से पति पर कोई अभियोग लगा सकते हैं?'' जज ने जवाब दिया, ''नहीं, आप ऐसा नहीं कर सकते.'' इससे लगता है कि ज्यूरी सभ्यों के मन में श्रीमती रोंडिश के पति के प्रति कितना रोष रहा होगा.

फैसला वही हुआ, जिसकी लोग आशा कर रहे थे. मगर इस फ़ैसले के बाद जो कुछ हुआ, वह सबके लिये अप्रत्याशित था.

एक महीने बाद, श्रीमती रोंडिश फिर अपने पति के घर जाकर उनके साथ रहने लगीं. जब पड़ोसियों ने पूछा कि वे फिर क्यों ऐसे इंसान के साथ रहने के लिए आ गयीं जिसने उनकी हत्या करने की कोशिश की थी, तो उन्होंने शांत स्वर में कहा—''मैं अपने पति को प्यार करती हूं.'' □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जान है तो जहान है

हरि

9 जून, 1946 को सारा स्याम देश यह सुनकर स्तब्ध रह गया कि किसी अज्ञात हत्यारे ने उनके प्रिय राजा आनंद की हत्या कर दी है.

राजा आनंद की मृत्यु के बाद जो सरकारी विज्ञप्ति जारी हुई, उसमें इस हत्या का संक्षिप्त ब्यौरा दिया गया था. विज्ञप्ति इस प्रकार थी : "आज सुबह राजा आनंद को उनके बिस्तरे पर मृत पाया गया. उनके हाथ में 45 कोल्ट का एक रिवाल्वर था. ऐसा समझा जाता है कि राजा द्वारा रिवाल्वर का प्रयोग करते समय, दुर्घटना हो गयी और गोली उनकी गर्दन के पिछले भाग से प्रवेश करती हुई मस्तिस्क तक पहुंची. मृत्यु तत्काल हुई."

इस विज्ञप्ति से अधिकांश स्यामवासियों को संतोष नहीं हुआ. कारण, वे जानते थे कि राजा रिवाल्वर का प्रयोग एक लंबे अर्से से चले आ रहे हैं और एक प्रवीण निशानेबाज थे. यह भी सवाल था कि सुबह ही सुबह उन्हें रिवाल्वर के प्रयोग की आवश्कयता क्यों पड़ गयी?

स्याम की सरकार ने इस दुखद हत्याकांड की तह में पहुंचने के लिए तुरंत एक जांच-आयोग की नियुक्ति की घोषणा कर दी. इस आयोग के सामने अनेक सनसनीखेज तथ्य आये. सरकारी डॉक्टरों का मत था कि गोली जिस कोण से शरीर में घुसी थी, उससे यह स्पष्ट था कि यह मामला आत्महत्या का नहीं, हत्या का था. उनका यह भी कहना था कि हत्यारे ने राजा आनंद की गर्दन के पिछले भाग में उस समय गोली मारी थी, जब वे सो रहे थे. उनके दायें हाथ में कोई ऐंठन नहीं थी. जो रिवाल्वर उनके हाथ में पाया गया, वह उनकी हत्या के बाद उनके हाथ में रखा गया था और उनकी उंगलियों ने उसे मजबूती से नहीं पकड़ रखा था.

महल के कर्मचारियों की एक गलती भी आयोग के सामने आयी जो उन्होंने जनबूझकर नहीं, अज्ञानवश की थी. उन्होंने राजा आनंद के शव को तरंत नहलाना आरंभ कर दिया था. इससे वे सब प्रमाण गायब हो गये, जिनके सहारे हत्यारे का पता लगाया जा सकता था.

जब इस जांच-आयोग की रपट से स्याम की जनता संतुष्ट नहीं हुई, तो दूसरा जांच-आयोग बैठाया गया. मगर इस आयोग की रपट से भी लोग संतुष्ट नहीं हुए. इसके बाद इस हत्या-कांड की जांच के लिये अन्य कई आयोग भी बैठाये गये मगर वे भी उन दो महत्वपूर्ण प्रश्नों का उत्तर नहीं दे पाये जो आरंभ से ही स्याम के लोगों को परेशान करते आ रहे थे.

वे प्रश्न थे :

(1) आनंद की हत्या की योजना किसने बनायी और हत्या वास्तव में किसने की? (2) हत्यारा राजा के शयनकक्ष में, जिसके बाहर दिन-रात कड़ा पहरा रहता है, कैसे प्रवेश कर सका?

> हत्याकांड की जांच और उसके बाद चलने वाले मुकद्दमे का फैसला खुली अदालत में सुनाने से पहले ऐसा क्या घट गया कि न्यायाधीश स्पारो को अपना फैसला फाड़कर स्याम से भाग जाना पड़ा...

सब ओर से निराश होकर स्याम की सरकार ने इस मामले को गैराल्ड स्पारो नामक अवकाश-प्राप्त ब्रितानी न्यायाधीश को सौंपा. वे राजा आनंद के घनिष्ट मित्र थे और अकेले विदेशी थे जो इस दुर्भाग्यपूर्ण हत्या के समय स्याम के उस राजमहल में मौजूद थे जहां हत्या हुई थी.

वे उन दिनों एक मुकद्दमे के सिलसिले में इंग्लैंड से कलकत्ता आये हुए थे. कलकत्ता में उन्हें मालूम पड़ा कि स्याम में ऑक्सफोर्ड और कैंब्रिज विश्वविद्यालयों के भूतपूर्व विद्यार्थियों का वार्षिक भोज होने वाला है. बैंकाक में होने वाले इस वार्षिक भोज में 30 यूरोपियन और 50 स्यामवासी भाग ले रहे थे. वे सब इन दोनों में से एक विश्वविद्यालय के विद्यार्थी थे. स्पारो को, जो स्वयं पुराने विद्यार्थियों में से एक थे, इस भोज में आने का निमंत्रण मिल चुका था और वे उसमें भाग लेने को उत्सुक थे.

यह वार्षिक भोज पहली बार 1946 में, जब यह हत्या हुई थी, स्याम के राजमहल में हो रहा था. स्पारो द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान, दो-तीन वर्षों तक जापान में युद्धबंदी रहे थे और तब जापानियों ने उन्हें बहुत यातनाएं दी थीं. इस लंबी नज़रबंदी के बाद यह पहला अवसर था, जब वे किसी मनोरंजक उत्सव में भाग लेने वाले थे.

रंगून से डकोटा हवाई जहाज से बैंकाक पहुंचकर उन्होंने पाया कि भोज शीघ्र ही आरंभ होने वाला है. उन्होंने जल्दी से होटल में सामान रखवाया और स्नान के बाद कपड़े बदलकर सीधे राजमहल पहुंचे. राजमहल के चारों ओर हंसी-खुशी और चहलपहल का वातावरण व्याप्त था. मुख्य द्वार के संतरी राजा के शोफर के साथ शतरंज खेलने में व्यस्त थे. किसी ने स्पारो को न रोका, न उनसे कोई पूछताछ की, और उन्हें सीधे भव्य डाइनिंग रूम में जाने दिया.

डाइनिंग रूम में प्रवेश करते ही स्पारो को आनंद ने देख लिया और इशारे से अपने पास आने को कहा. दोनों काफी देर तक बातें करते रहे. अलग होने से पूर्व, स्पारो ने आनंद से कहा, "मैं आपके मुंह पर आपकी तारीफ़ नहीं कर रहा हूं. मेरा पूरा विश्वास है कि आप शीघ्र ही स्याम को समृद्ध और प्रगतिशील देशों की पंक्ति में लगाकर खड़ा कर देंगे." राजा आनंद उत्तर में सिर्फ मुस्कराकर रह गये. तब स्पारो को क्या मालूम था कि शीघ्र ही उन्हें राजा आनंद की हत्या की जांच के लिये बैठाये गये आयोग से जुड़ना पड़ेगा.

भोज के दौरान अनेक लोगों से बातें करते समय स्पारो को राजा आनंद के बारे में कुछ और जानकारी मिली, जिससे उन्हें मुकद्दमे में बहुत मदद मिली.

भोज से कुछ दिन पहले, स्याम में रहने वाले चीनियों ने, जो स्याम के पहले राजाओं के प्रति वफ़ादार नहीं थे, राजा आनंद का भव्य सार्वजनिक अभिनंदन कर उनके प्रति अपनी वफादारी व्यक्त की थी. अंग्रेज लोग भी, जिन्होंने स्याम को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जापानियों के चंगुल से मुक्त कराया था, राजा आनंद के प्रशंसक और मित्र थे. सिर्फ स्याम में रहने वाले जापानी, जिनकी संख्या ज्यादा नहीं थी, राजा आनंद के विरोधी थे.

जब स्पारो को यह जानकारी मिली तो जाने क्यों उनके मन में यह भयावह विचार आया कि आधी दुनिया को जीतने की आकांक्षा रखनेवाले गर्वीले जापानी, जो अब पराजय की धूल चाट रहे थे, शायद कभी स्याम में कुछ उत्पात करें. पूरे चार वर्षों तक जापानियों ने बड़ी बेरहमी के साथ स्याम पर शासन किया था. शायद वे जाते-जाते राजा आनंद को हानि पहुंचाकर अपनी पराजय का बदला लेने की कोशिश करें. एक अज्ञात आशंका से स्पारो का मन भर गया. लेकिन, अब जब भोज आनंदपूर्वक संपन्न हो गया. और अगले दिन 9 जून को भी कोई दुर्घटना नहीं हुई तो उन्हें लगा, उनकी आशंका निर्मूल थी. वे अपने काम में लग गये. उन्हें बैंकाक में कई काम पूरे करने थे. उनका कार्यालय महल के ठीक सामने स्थित था.

लेकिन, जब उन्हें राजा आनंद की हत्या का स्तब्धकारी समाचार मिला तो वे धक्क रह गये. उनकी दो दिन पुरानी आशंका सच्ची निकली.

जब उन्हें इस हत्या-कांड की जांच करनेवाले अंतिम आयोग से न्यायाधीश के रूप में जुड़ना पड़ा तो सबसे पहले उन्होंने ऐसे चीनियों और जापानियों से पूछताछ आरंभ की जिन पर संदेह की काली छाया पड़ती थी. उन्होंने सबसे पहले महल के आंतरिक मामलों के मंत्री नाय प्रीदी को पूछताछ के लिये बुलाया. प्रीदी की मां चीनी थी और उसने महायुद्ध के दौरान गुप्त रूप से अंग्रेजों की सहायता की थी. उस पर संदेह था कि वह अंग्रेजों का एजेंट है, और उसने अंग्रेजों के उकसाने पर राजा आनंद की हत्या की है. लेकिन प्रीदी से पूछताछ करने पर स्पारो को विश्वास हो गया कि प्रीदी पर संदेह करने का कोई कारण नहीं हो सकता.

दूसरे महत्वपूर्ण व्यक्ति, जिन पर संदेह किया जा रहा था, फील्ड मार्शल पिबूल थे, जिन्होंने युद्धकाल में जापानियों की सहायता की थी. हत्या के समय उन पर युद्ध-अपराधी के रूप में मुकद्दमा चल रहा था और वे नजरबंद थे. लेकिन यह कहा जा रहा था कि हत्या उनके एजेंटों ने, उनकी ओर से, स्याम के वर्तमान राजा से बदला लेने के उद्देश्य से की है. लेकिन पिबूल ने न्यायाधीश स्पारो के सामने शपथपूर्वक जो बयान दिया, वह काफी चौंकाने वाला था. उसने कहा कि, "मेरे शत्रुओं की संख्या काफी है, क्योंकि मैं एक सख्त सेनाधिकारी था. मुझे पूरा विश्वास है कि यह हत्या जापानियों के शत्रुओं ने मुझे इस हत्याकांड में फांसने के उद्देश्य से की है."

इन दोनों महत्वपूर्ण व्यक्तियों के अतिरिक्त न्यायाधीश महोदय द्वारा उन चंद जापानियों से भी पूछताछ की गयी जो स्याम में रह गये थे और उसका अहित चाहते थे. उन पर यह संदेह था कि सत्ता हाथ से ले चले जाने के बाद वे क्रोधन्मत्त हो गये थे और इसी उन्मत्तावस्था में उन्होंने राजा आनंद की हत्या का दुःसाहसिक और खतरनाक काम किया.

न्यायाधीश गैराल्ड स्पारो ने सब साक्ष्यों और तथ्यों पर गंभीरतापूर्वक विचार करने के बाद जो निर्णय लिया, वह इस प्रकार था :

"मेरे मतानुसार, इस हत्या-कांड में दो वर्ग सम्मिलित थे. पहला वर्ग स्याम के उन चंद प्रभावशाली लोगों का था, जिन्होंने इस हत्या-कांड की योजना बनायी थी और उसके लिये आर्थिक सहायता प्रदान की थी. दूसरा वर्ग उन लोगों का था जिन्होंने इस योजना को साकार किया. इसी वर्ग के किसी अज्ञात सदस्य ने राजा आनंद पर गोली चलाकर उन्हें खत्म किया. हमारे सामने ऐसे अकाट्य प्रमाण प्रस्तुत किये थे जो यह सिद्ध करते हैं कि दूसरे वर्ग में प्रीदी के सचिव नाथ चालीअ और दो अनुचर नाथ वत्र और नाथ चित्रा सम्मिलित थे और इन तीनों ने अज्ञात हत्यारे को शयन-कक्ष में आराम से जाने दिया था. राजमहल के सुरक्षा-अधिकारियों की प्रशंसा करनी पड़ेगी कि उन्होंने हत्या के तुरंत बाद इन तीनों को गिरफ्तार कर लिया. लेकिन पुलिस उनसे पूछताछ करके हत्यारे के बारे में जानने का प्रयास करती, इसके पूर्व ही किसी अज्ञात व्यक्ति या व्यक्तियों ने इन तीनों को पुलिस की कैद में ही जान से मार डाला. इन तीनों के मर जाने से अपने प्रिय राजा की आकस्मिक मृत्यु से खिन्न तथा क्रुद्ध स्यामवासियों को थोड़ी राहत अवश्य मिली लेकिन असली हत्यारे का पता नहीं लग पाया.

"मेरा अनुमान है कि हत्या या तो किसी निराशांध और क्रोधोन्मत्त जापानी ने की है या किसी चीनी कम्यूनिस्ट ने, अपने दल के नेता के आदेश पर. मुझे लगता है कि इन दोनों विकल्पों में दूसरा विकल्प अधिक सही होना चाहिये. कारण, महायुद्ध की समाप्ति के बाद से ही चीनी कम्यूनिस्टों की कोशिश रही है कि द.पू. एशिया के मर्मस्थल स्याम पर अधिकार जमा लिये जायें, ताकि आगे चलकर चीनी साम्राज्य आसानी से स्याम की खाड़ी तक फैल सके. स्याम के राजा को अपने मार्ग से हटाये बिना उनकी यह साजिश कामयाब नहीं हो सकती थी."

जिस दिन न्यायाधीश स्पारो, जिन्हें स्याम की सरकार ने खास तौर पर इस हत्या-कांड की जांच और उसके बाद वाले मुकद्दमे के फैसले के लिये 'विशेष न्यायाधीश' के रूप में नियुक्त किया था, अपना फैसला अपनी खुली अदालत में सुनाने वाले थे, उससे पहले की रात को एक विचित्र घटना घटी, जिसने इस रहस्यमय मुकद्दमे को और अधिक रहस्यमय बना दिया.

फोन पर एक अज्ञात व्यक्ति ने, जो अपने को 'राजमहल का एक विश्वसनीय कर्मचारी' बता रहा था, उनसे पूछा, "क्या आपको मालूम है कि राजा आनंद के हाथ में कौन सा रिवाल्वर मिला था?"

"हां. 45 कोल्ट."

"ठीक. मगर हत्या उस रिवाल्वर से नहीं की गयी. राजा आनंद के प्राण लेने वाली गोली बाद में उनके तकिये के अंदर से मिली और वह 45 कोल्ट रिवाल्वर की नहीं थी, एक चीनी रिवाल्वर द्वारा चलायी गयी चीनी गोली थी. यदि आप चाहते हैं कि वही गोली आपकी गर्दन में भी न लगे तो आप उस निर्णय को फाड़ डालिये जो आपने लिखा है और फौरन स्याम छोड़कर चले जाइये. इसी में आपकी खैर है."

स्पारो ने वैसा ही किया. जान है तो जहान है. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चार्ली चैप्लिन पर साहित्यिक चोरी का मुकद्दमा

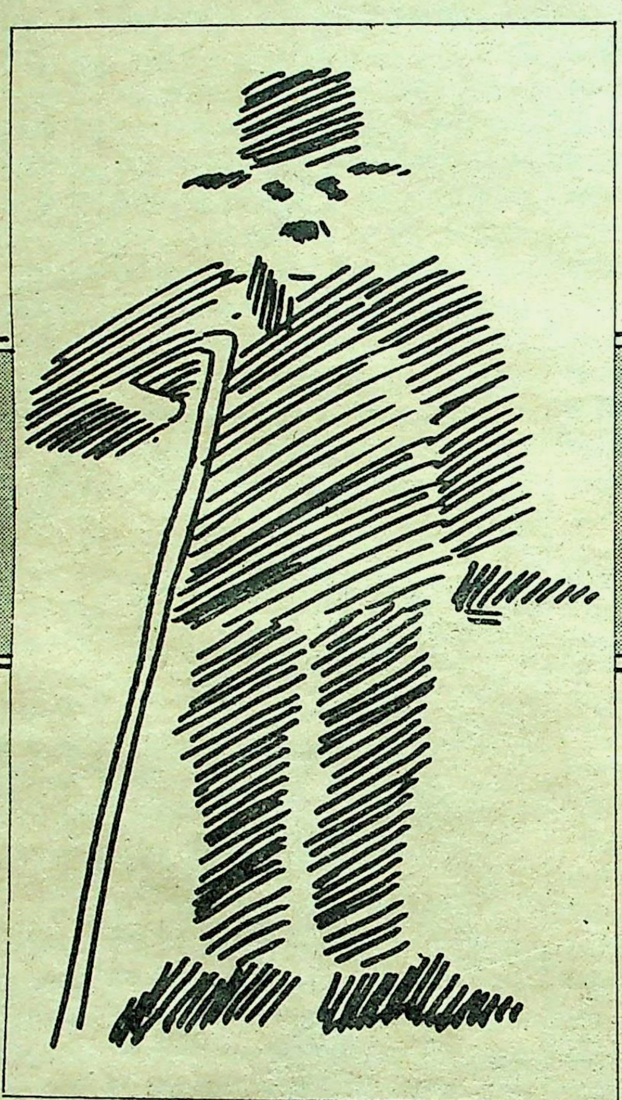

विश्वविख्यात हास्याभिनेता चार्ली चैप्लिन इस सदी की उन महान हस्तियों में से थे जो अपने जीवन में ही 'लीजेंड' हो जाते हैं. कलाकार के रूप में उन्होंने अपनी एक विशिष्ट अभिनय शैली को जन्म दिया. जो आज तक बेमिसाल है, और जिसकी नकल करने में कोई भी अभिनेता आज तक सफल नहीं हो पाया है.

यूं तो चैप्लिन की सभी फिल्में अविस्मरणीय हैं लेकिन उनमें भी 'गोल्ड रश', 'मॉडर्न टाइम्स', 'द किड' तथा 'द ग्रेट डिक्टेटर' को अन्यतम लोकप्रियता मिली. ख़ास तौर पर 'द ग्रेट डिक्टेटर' हिटलर का मज़ाक उड़ाने वाली फिल्म थी. इसमें चार्ली चैप्लिन ने हिटलर के बोलने, चलने और अन्य विलक्षणताओं की जो नकल की है, वह कहीं दर्शकों को हंसाती है, कहीं गुदगुदाती है.

लेकिन चार्ली चैप्लिन के असंख्य दर्शकों में से बहुत कम को यह बात मालूम होगी कि इस फिल्म के कारण चार्ली चैप्लिन पर एक मुकद्दमा चला था—साहित्यिक चोरी का. मुकद्दमा चलाने वाले का दावा था कि 'द ग्रेट डिक्टेटर' की कहानी उसके एक 'आइडिया' पर, जिसे उसके चैप्लिन के अनुरोध पर सुनाया था, आधारित है.

सारी घटना इस क्रम में घटी.

चार्ली चैप्लिन कोनरड वैरकोविसी नामक यूरोपीय कथाकार की कथाओं के प्रेमी और प्रशंसक थे, ख़ास तौर पर जिप्सियों के जीवन पर आधारित उनकी कथाओं के. वे चाहते थे कि वैरकोविसी की किसी जिप्सी कथा का फिल्मांकन करें. एक बार वे इसी संबंध में वैरकोविसी से मिलने गये और कहने लगे कि वे अपनी सबसे अच्छी जिप्सी कहानी चुनकर उन्हें दे दें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ताकि वह उस पर फिल्म बना सके.

बातों-बातों में वैरकोविसी ने चैप्लिन से कहा, ''आजकल हिटलर की धूम है. उसका ज़माना है. सब उसके बारे में ही बातें करते रहते हैं, कोई शत्रु के रूप में और कोई प्रशंसक के रूप में. मेरे दिमाग़ में उसके इर्द-गिर्द घूमनेवाली एक कहानी का आइडिया आया है. यदि वह तुम्हें पसंद आ जाये तो तुम उस पर पहले फिल्म बनाओ जिप्सी-कथा पर बाद में बना लेना. इस कहानी पर बनी फिल्म सामयिक होने के कारण अत्यंत लोकप्रिय भी होगी. वह जर्मनी में भी चोरी-छिपे खूब चलेगी, क्योंकि हिटलर द्वारा उस पर प्रतिबंध लगा देने के बाद जर्मन लोग उसे देखे बिना मानेंगे नहीं.''

बाद में लिखे गये पत्रों का कोई उत्तर नहीं दिया.''

जब मुकद्दमा शुरू हुआ तो चैप्लिन के वकील ने वैरकोविसी के सब आरोपों को 'बेबुनियाद' और 'मनगढ़ंत' बताया. उन्होंने कहा कि फिल्म की कहानी का आइडिया उनका अपना है इसलिए किसी की कहानी की साहित्यिक चोरी का कोई सवाल ही नहीं उठता.

वैरकोविसी सीधे-सच्चे आदमी थे. उनके वकील ने उन्हें समझाया कि यदि मुकद्दमा जीतना है तो उन्हें या तो उसे ठोस सबूत देने होंगे या थोड़ा बहुत झूठ बोलना पड़ेगा. मगर वैरकोविसी के पास न कोई ठोस सबूत था और न वे कोई गलत बात कहने को तैयार थे. वे बार-बार यही कहते

गया. आप उस रूसी अभिनेता से मिलकर मालूम कीजिए कि चैप्लिन ने उससे संपर्क करने का प्रयास किया था कि या नहीं. यदि किया था तो शायद उसने उससे मेरा भी जिक्र किया हो. ऐसे में वह हमारे लिए एक अच्छा गवाह साबित हो सकेगा.''

वकील ने खोज करके उस रूसी गायक-अभिनेता का पता लगाया और खुद जाकर उससे मिला. कुइनेविज ने कहा, 'हां, चैप्लिन ने मुझे फोन किया था और पूछा था कि क्या मैं उसकी फिल्म 'द ग्रेट डिक्टेटर' में एक भूमिका निभाने को तैयार हूं? मुझे उनका यह प्रश्न सुनकर इतनी ज्यादा खुशी हुई थी कि मैं कुछ क्षण तक कोई उत्तर नहीं दे सका और सोचने लगा कि मैं जाग रहा हूं या सो रहा हूं. चैप्लिन

क्या वजह थी कि चार्ली चैप्लिन सरीखे विश्वविख्यात कलाकार को अदालत के बाहर न केवल माफी मांगनी पडी बल्कि वैरकोविसी को समुचित पारिश्रमिक भी देना पड़ा...?

चैप्लिन की उत्सुकता जागृत हुई. उन्होंने पूछा, ''हिटलर के बारे में क्या आइडिया है आपके मन में?''

वैरकोविसी सुनाने लगे, ''एक जर्मन नाई है जिसकी शक्ल हिटलर से बहुत मिलती है. उसे देखकर लोगों को भ्रम हो जाता है कि वे हिटलर को ही देख रहे हैं. फिर...''

पूरा आइडिया सुनने के बाद चैप्लिन ने वैरकोविसी से कहा, ''मुझे इस आइडिया पर सोचने के लिए कुछ समय चाहिए. मैं आपसे जल्दी ही दुबारा मिलूंगा.''

मगर बकौल उस शिकायत के जो बाद में वैरकोविसी ने अदालत में दाखिल की, ''चैप्लिन फिर मुझसे नहीं मिले और न ही पत्रों या फोन द्वारा हमारे बीच कोई बातचीत हुई. लेकिन जब मैंने उनकी 'द ग्रेट डिक्टेटर' फिल्म देखी तो मुझे याद आया कि यह फिल्म तो उसी आइडिया पर आधारित है जो मैंने उन्हें सुनाया था. जब मैंने एक पत्र लिखकर उस दिन की याद दिलायी जिस दिन वे मेरे घर आये थे और मैंने उन्हें 'द ग्रेट डिक्टेटर' का आइडिया दिया था. मगर उन्होंने उस पत्र का तथा

रहे कि झूठे वह नहीं, चैप्लिन है जिसने उनके आइडिया पर एक फिल्म बना ली और अब आइडिया का श्रेय और उसका पारिश्रमिक उन्हें देने से कतरा रहा है. उन्होंने अपने वकील से कहा, ''मैं अदालत में अपनी इसी बात पर, जो हकीकत है, अड़ा रहूंगा. अब यह काम अदालत का है कि वह किस पर विश्वास करती है, मुझ पर या चैप्लिन पर!''

लेकिन, उनका वकील जानता था कि ठोस और अकाट्य प्रमाण के अभाव में अदालत चैप्लिन पर ही विश्वास करेगी. और वैरकोविसी मुकद्दमा हार जायेंगे. वह अपने मुवक्किल के प्रति सहानुभूतिशील था और उन्हें जिताने के उद्देश्य से उसने खुद सबूत जुटाने की कोशिश की.

एक दिन वैरकोविसी ने उसे फोन करके कहा, ''जब मैंने 'ग्रेट डिक्टेटर' का आइडिया चैप्लिन को दिया था तब उन्होंने कुछ सोचकर कहा था कि कुइनेविज नामक एक रूसी गायक अभिनेता उसके एक महत्वपूर्ण रोल के लिए बिलकुल फिट रहेगा. मुझे आज यह बात सहसा याद आ

जैसे महान और विश्वविख्यात कलाकार की फिल्म में काम करने से ज्यादा सौभाग्यदायी चीज मेरे लिए क्या हो सकती थी. इस बीच उन्होंने मुझसे कहा कि कहानी का आइडिया उन्हें वैरकोविसी से प्राप्त हुआ है और वे एक दिन उनके साथ बैठकर उसे एक फिल्म के रूप में विकसित करने के लिए विचार विमर्श करेंगे. मेरे यह कहने पर कि मुझे उनकी इस फिल्म में काम करके बड़ी खुशी होगी और मैं इसे अपना सौभाग्य मानूंगा, चैप्लिन ने मुझे अपना फोन नंबर दिया जो आज भी मेरी डायरी में दर्ज है और मुझसे कहा कि वे मुझे दुबारा फोन करेंगे. मगर उन्होंने फिर कभी फोन नहीं किया.''

वैरकोविसी के वकील के अनुरोध पर कुइनेविज अदालत में जो घटा था, वह कहने को तैयार हो गया. उसकी गवाही सुनकर चैप्लिन ने फौरन वैरकोविसी ने उनका समुचित पारिश्रमिक देकर तथा क्षमायाचना करके अदालत के बाहर समझौता कर लिया. वैरकोविसी चूंकि भले आदमी थे, इसलिए उन्होंने इस घटना का भी ढिंढोरा नहीं पीटा. चैप्लिन को तो चुप रहना ही था. ☐

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

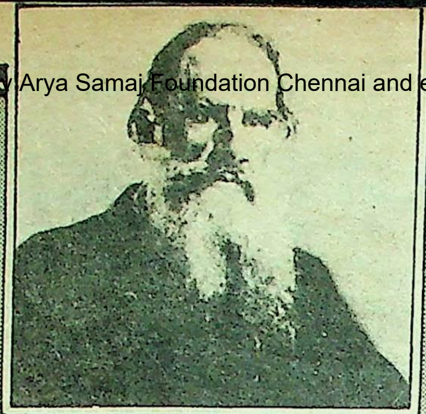

विश्वप्रसिद्ध रूसी कथाकार तालस्तोय की 160वीं जयंती (9 सितंबर) के अवसर पर प्रस्तुत हैं उनकी कुछ लघुकथाएं जिनका अनुवाद डा. सुरेंद्र कुमार शर्मा ने खासतौर पर 'सारिका' के लिए किया है...

पथ के साथी

दो मित्र कहीं दूर जा रहे थे. अचानक उनमें से एक की दृष्टि रुपयों से भरे एक बटुए पर पड़ी. उसने झट से वह बटुआ उठा लिया और अपने मित्र से बोला, "देखो मुझे यह बटुआ मिला."

मित्र ने उत्तर दिया, "भाई, यह मत कहो कि 'मुझे' बटुआ मिला. यह कहो कि 'हमें' बटुआ मिला. हम दोनों पथ के साथी हैं और साथ चलने वालों को एक दूसरे के सुख दुख आपस में बांट लेने चाहिए. यदि आगे कोई कष्ट पड़ेगा तो उसे भी हम बांट लेंगे.

इस पर पहला मित्र बोला, "दोस्त, ऐसा नहीं होता. जो मुझे मिला वह मेरा और जो तुम्हें मिला वह तुम्हारा. मेरे सुख-दुख मेरे और तुम्हारे सुख-दुख तुम्हारे. इसमें कैसी साझेदारी?"

दूसरे ने उत्तर दिया, "अच्छा भाई, तुम्हारी मर्जी."

और दोनों मित्र फिर आगे चल दिये. थोड़ी देर बाद बटुए का स्वामी अपने अंग-रक्षकों के साथ अपना बटुआ खोजता वहां आ पहुंचा. उसे देखकर जिसे बटुआ मिला था वह घबरा गया और अपने साथी से बोला, "मित्र, हमसे गलती हो गयी."

इस पर उसके मित्र ने उत्तर दिया, "मित्र, यह मत कहो कि 'हमसे' गलती हो गयी. यह कहो कि 'मुझसे' गलती हो गयी. तुम्हीं ने कहा था कि मेरे सुख-दुख मेरे और तुम्हारे सुख-दुख तुम्हारे. इसमें कैसी साझेदारी?" □

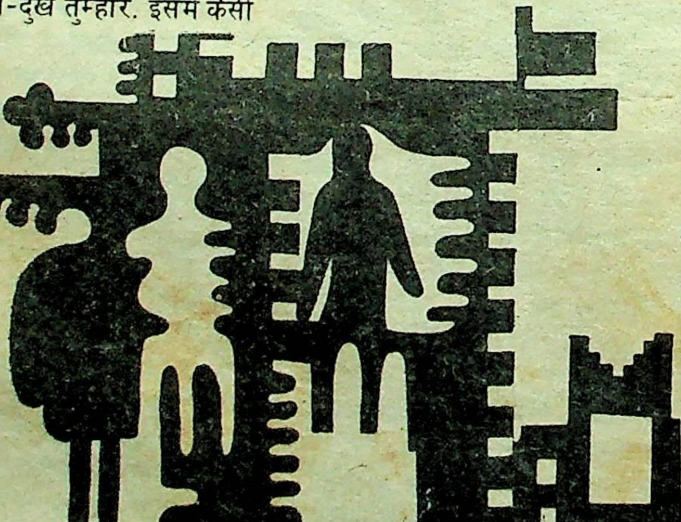

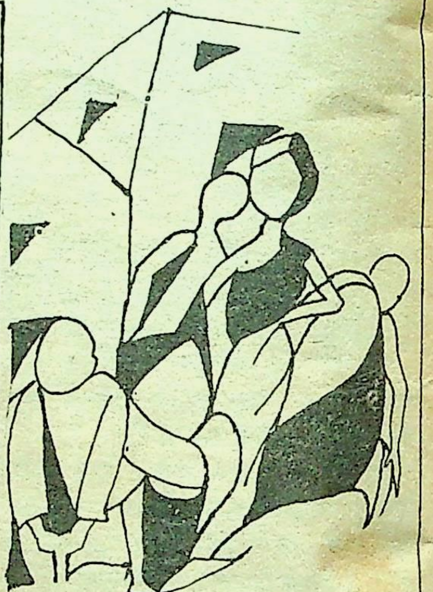

बच्चे का प्यार

एक मां के दो बेटे थे. बड़ा बेटा आठ साल का था और छोटा छः का. दोनों ही बड़े अच्छे और आज्ञाकारी बच्चे थे. इसलिए उनकी मां उन्हें बहुत प्यार करती थी.

एक बार छोटा बेटा अपनी मां से बोला, "मेरी प्यारी अम्मा, तू मुझे इतना प्यार नहीं कर सकती जितना कि मैं तुझे करता हूं."

"तू ऐसा क्यों सोचता है, मेरे प्यारे बच्चे?" मां ने पूछा.

"इसलिए कि तेरे दो बेटे हैं मगर मेरी केवल एक ही मां है." बेटा बोला. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंधे की बुद्धि

अंधेरी रात में एक अंधा सड़क पर जा रहा था. उसके हाथ में एक लालटेन थी और सिर पर एक मिट्टी का घड़ा. किसी रास्ता चलनेवाले ने उससे चिल्लाकर पूछा, "अरे मूर्ख, तेरे लिए क्या दिन और क्या रात. दोनों एक से हैं. फिर, यह लालटेन तुझे किसलिए चाहिए"

अंधे ने उत्तर दिया, "यह लालटेन मेरे लिए नहीं, तेरे लिए जरूरी है कि कहीं रात के अंधेरे में मुझसे टकराकर कहीं तू मेरा मिट्टी का घड़ा न गिरा दे." □

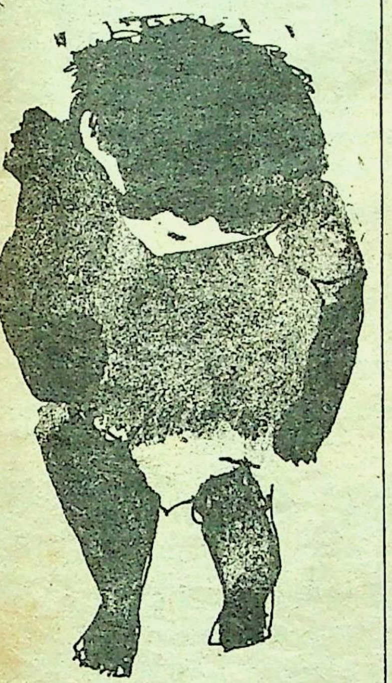

लालच

बच्चा फूट-फूटकर रो रहा था. उसके पास से निकल रहे एक व्यक्ति ने पूछा, "बेटा, क्यों रो रहे हो."

बच्चा रोते हुए बोला, "मेरा एक रुपया खो गया."

"कोई बात नहीं, यह लो एक रुपया." उस व्यक्ति ने बच्चे को रुपया देते हुए कहा.

बच्चे ने रुपया लिया और फिर और भी जोर से रोना शुरू कर दिया.

व्यक्ति ने पूछा, "अब क्या हुआ?"

बच्चे ने फफकते हुए उत्तर दिया, "अगर मेरा रुपया नहीं खोता तो अब मेरे पास दो रुपये होते." □

बुद्धिमान न्यायाधीश

एक आदमी के घर सौ रुपये की चोरी हो गयी. उसने न्यायाधीश से शिकायत की. न्यायाधीश ने उस आदमी के घर में रहने वाले और उसके यहां काम करने वाले सभी नौकरों को बुलाया और उन सबको एक-एक समान लंबाई वाली लाठी दी और कहा, "ये विशेष प्रकार की लाठियां हैं. जो चोर है उसकी लाठी कल तक चार अंगुल बढ़ जायेगी."

यह कहकर न्यायाधीश ने सबको विदा किया. उनमें से जो चोर था, उसने न्यायाधीश की बात पर विश्वास कर लिया. इस डर से कि कहीं उसकी लाठी कल तक चार अंगुल बढ़ न जाये, उसने अपनी लकड़ी चार अंगुल काट दी.

दूसरे दिन सबेरे न्यायाधीश आया और उसने सबकी लाठियां देखीं. चोर की लाठी को उसने चार अंगुल छोटा पाया. इस प्रकार न्यायाधीश ने चोर का पता लगा लिया. □

गुठली

मां ने आलू बुखारे खरीदे. सोचा, बच्चों को खाने के बाद दूंगी. आलू बुखारे मेज पर तश्तरी में रखे थे. वान्या ने आलू बुखारे कभी नहीं खाये थे. उसका मन उन्हें देखकर मचल गया. जब कमरे में कोई नहीं था तब वह अपना मन न मार सका. उसने एक आलू बुखारा उठाकर खा लिया.

खाने के समय मां ने देखा कि तश्तरी में एक आलू बुखारा कम है. उसने बच्चों के पिता को इस बारे में बताया.

खाते समय पिता ने पूछा, "बच्चो, तुममें से किसी ने इसमें से एक आलू बुखारा तो नहीं लिया?"

सबने एक स्वर से जबाब दिया, "नहीं."

वान्या का मुंह लाल हो गया, किंतु वह फिर भी बोला, "नहीं, मैंने तो नहीं खाया."

इस पर बच्चों के पिता बोले, "यदि तुममें से किसी ने आलू बुखारा खाया तो ठीक है. पर, बात यह है.—मुझे डर है कि तुम्हें आलू बुखारा खाना नहीं आता. आलूबुखारे में एक गुठली होती है. अगर वह गलती से कोई निगल ले तो एक दिन बाद मर जाता है."

वान्या डर से सफेद पड़ गया. बोला, "नहीं, मैंने तो गुठली खिड़की के बाहर फेंक दी थी."

सब एक साथ हंस पड़े और वान्या रोने लगा. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गंवार की बुद्धि

एक शहर के चौराहे पर एक विशाल शिला पड़ी थी. यह शिला इतनी बड़ी थी कि यातायात में बाधा पहुंचती थी. उस शिला को हटाने के लिए इंजीनियरों को बुलाया गया और उनसे पूछा गया कि शिला को कैसे हटाएं और उसके हटाने में कितना खर्चा आयेगा?

एक इंजीनियर ने कहा कि इस शिला के टुकड़े करने पड़ेंगे और उन टुकड़ों को गाड़ी अथवा ठेले में रखकर ले जाना पड़ेगा. इसमें लगभग आठ हजार रुपये का खर्चा आयेगा.

दूसरे इंजीनियर ने सलाह दी कि शिला के नीचे एक बड़े मजबूत ठेले का फट्टा लगाया जाये और लुढ़काकर शिला को उस पर रखकर ले जाया जाये. इसमें लगभग छः हजार की लागत आयेगी.

वहां पर एक गंवार भी था जो इन लोगों की बातें सुन रहा था. सुनकर वह बोला, "मैं इस शिला को सिर्फ सौ रुपये के खर्चे में हटा सकता हूं."

उससे पूछा गया कि वह ऐसा कैसे करेगा? उसने बताया, "मैं इस शिला के बिलकुल पास एक बहुत बड़ा गड्ढा खुदवाऊंगा. उस बड़े गड्ढे में इस शिला को लुढ़कवा दूंगा. ऊपर से खोदी हुई मिट्टी से ढककर समतल बना दूंगा."

अधिकारियों को उसकी योजना पसंद आयी और उन्होंने उसकी स्वीकृति दे दी. गंवार ने वैसा ही किया. उसे सौ रुपये तो लागत के दिये ही, उपर से सौ रुपये इनाम के भी. □

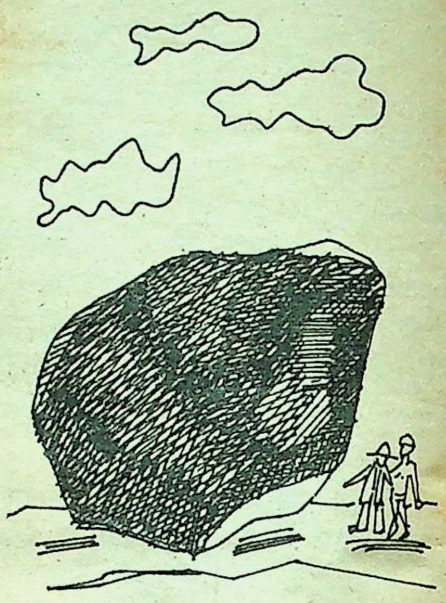

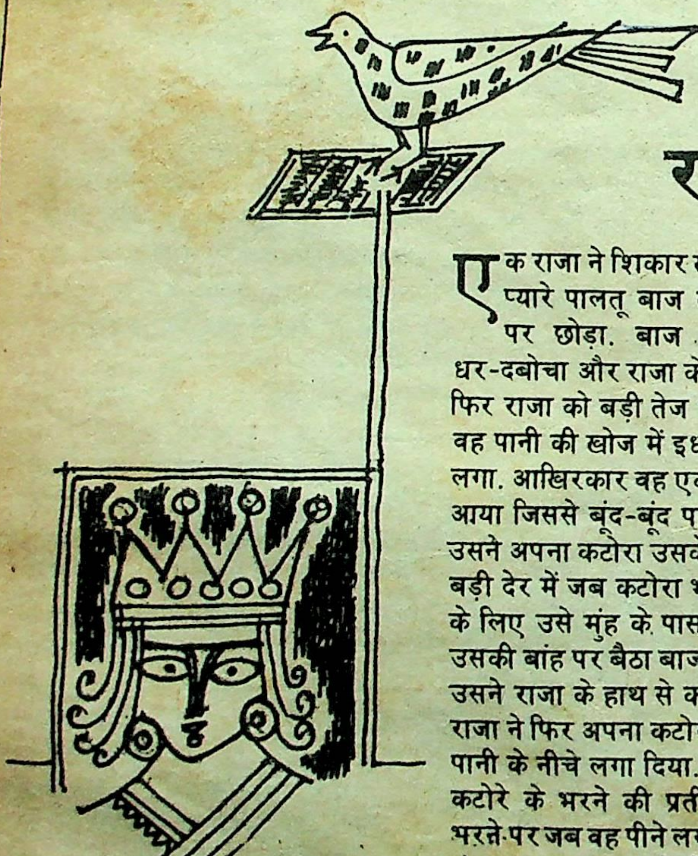

राजा और बाज

एक राजा ने शिकार खेलते समय अपने प्यारे पालतू बाज को एक खरगोश पर छोड़ा. बाज ने खरगोश को धर-दबोचा और राजा के हवाले कर दिया फिर राजा को बड़ी तेज प्यास लग आयी. वह पानी की खोज में इधर-उधर भटकने लगा. आखिरकार वह एक चट्टान के पास आया जिससे बूंद-बूंद पानी रिस रहा था. उसने अपना कटोरा उसके नीचे लगा दिया. बड़ी देर में जब कटोरा भरा तो राजा पीने के लिए उसे मुंह के पास लाया. अचानक उसकी बांह पर बैठा बाज फड़फड़ाया और उसने राजा के हाथ से कटोरा गिरा दिया. राजा ने फिर अपना कटोरा बूंद-बूंद रिसते पानी के नीचे लगा दिया. वह देर तक उस कटोरे के भरने की प्रतीक्षा करता रहा. भरने पर जब वह पीने लगा तो बाज ने फिर पंख फड़फड़ाकर उसे गिरा दिया. अस्तु जब तीसरी बार बड़ी मुश्किल से कटोरा भरा और राजा उसे होंठों के पास ले जाने लगा तो फिर बाज ने पानी फैला दिया. राजा को बहुत गुस्सा आया. उसने बाज को एक शिला पर जोर से पटककर मार डाला. इतनी देर में राजा के सेवक आ गये. उनमें से एक अधिक पानी की खोज में उस स्रोत की ओर गया जिससे आकर बूंद-बूंद पानी रिस रहा था. उसने सोचा कि वहां से एकदम डुबोकर राजा के लिए वह पूरा कटोरा भर लेगा. किंतु, सेवक वहां से पानी नहीं लाया. वह खाली कटोरा लिये लौट आया और बोला, "हुजूर, इस पानी को बिल्कुल नहीं पीना चाहिए. जिस स्रोत से यह पानी आ रहा है उसमें एक बड़ा जहरीला सांप है. अच्छा हुआ बाज ने पानी फैला दिया. यदि हुजूर पानी पी लेते तो प्राण न बचते."

यह सुनकर राजा पछताता हुआ बोला, "अरे मेरे प्यारे बाज, तूने मेरी जान बचायी और मैंने तेरी क्या गत बना दी!" □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

'नींद से पहले' और 'सचमुच सच' जैसे उपन्यासों व कहानी-लेखन के जरिये अपनी खास पहचान बनाने वाले कथाकार.
संपर्क : एफ-119, मयूर बिहार, पॉकेट-I, दिल्ली-91

गौरीशंकर कपूर

सबक

महेंद्र सिंह ने बहुत दूर से देखा, [illegible] झबरा कुत्ता सुनसान सड़क पर बौखलाहट भरी मुद्रा में भटक रहा है. इतवार की शाम का वक्त था और टी.वी. पर फिल्म दिखाये जाने के कारण हमेशा की तरह डिफेंस कालोनी की यह सड़क लगभग सुनसान हो गयी थी. स्कूटर ड्राइवर महेंद्र सिंह लंबे सफर की सवारी को डिफेंस कालोनी उतारकर अपने घर निरंकारी कालोनी की तरफ जा रहा था.

कुत्ते के नज़दीक पहुंचकर महेंद्र सिंह को स्कूटर धीमा करना पड़ा. झबरे कुत्ते को महीन आवाज में बेतरतीब ढंग से भौंकते और सड़क पर भटकते देखकर महेंद्र को मेले में खोये नन्हें बच्चे की याद आ गयी. सुनसान सड़क पर स्कूटर का शोर ज़्यादा उभरने के कारण झबरा कुत्ता बेतरह घबरा गया था और ऊबड़-खाबड़ ढंग से इधर-उधर उछलने-कूदने-भागने लगा था. महेंद्र सिंह को उस पर तरस भी आ रहा था तथा साथ ही उसकी वजह से स्कूटर धीमा चलाने के कारण घर पहुंचने की जल्दी भी महसूस हो रही थी. स्कूटर निकलने की गुंजायश देखकर महेंद्र ने एक्सीलेटर घुमाया ही था कि झबरा बोखलाकर

'चीजें बदल सकती हैं, पर आदतें नहीं. जितनी मर्जी टोका-टोकी कर लो, वक्त मिलते ही वो अपना रंग दिखा देती हैं' फिर जीतकौर ने आखिरकार अपनी हार स्वीकार की तो क्यों?

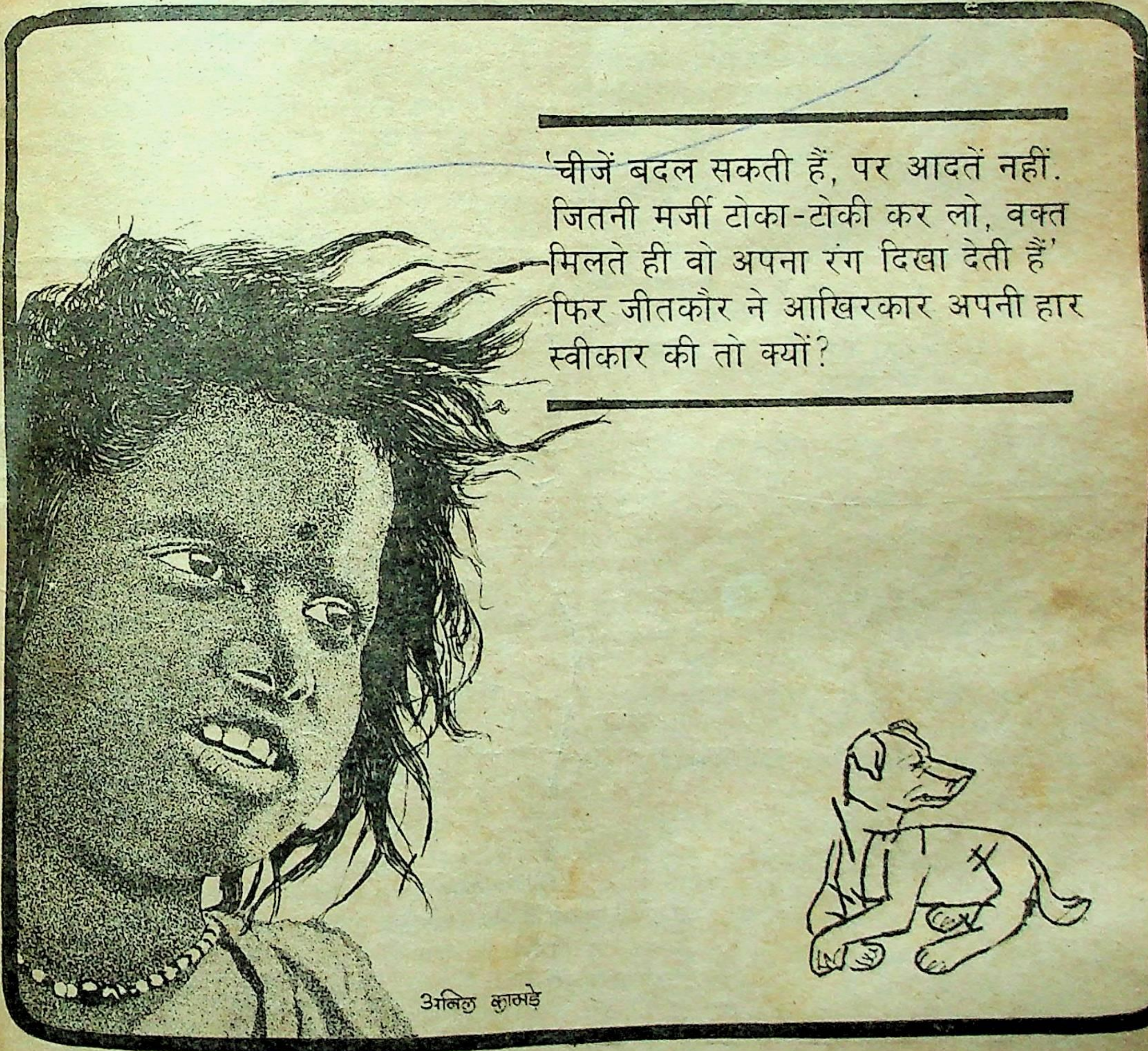

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ठीक स्कूटर के आगे आ गया. महेंद्र ने तेज़ी से ब्रेक पर ज़बरदस्त दबाव डाला और स्कूटर झटके से रुक गया. महेंद्र को घर पहुंचने में बाधा पड़ने के कारण गुस्सा आने लगा. आज टी.वी. पर उसकी पसंदीदा फिल्म दिखाई जा रही थी. साथ ही इस वजह से भी उसे झुंझलाहट महसूस हो रही थी कि झबरा उसी के स्कूटर के नीचे आकर मरना चाह रहा था. स्कूटर रुकते ही वह तेज़ी से नीचे उतरा और झबरे की तरफ बढ़ा.

झबरा स्कूटर से सिर्फ कुछ इंच की दूरी पर गुच्छ-मुच्छ होकर निश्चल-निश्चेष्ट पड़ा था. डर की अधिकता में वह जिस मृतप्राय: अवस्था तक पहुंच गया था, वह अभी तक उसकी चपेट में था. महेंद्र को दूधिया बालों में लिपटा बिल्लीनुमा झबरा कुत्ता बहुत प्यारा लगा. उसे गुस्से की जगह उस पर तरस आ गया. उसने नीचे झुक कर झबरे की पीठ पर प्यार से हाथ फिराया. झबरे ने एक झुरझुरी ली, शरीर कुछ ढीला किया और माथे पर लटकते दूधिया बालों के बीच चमकती नन्हीं आंखों से महेंद्र की तरफ देखा. महेंद्र को लगा, झबरा उसके प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त कर रहा है. वह खुश हो गया और झबरे को धीरे-से उठाकर गोदी में ले लिया. झबरा भी उसकी गोद में दुबककर आनंद से आंखें मिचमिचाने लगा. महेंद्र को यह सब अच्छा लग रहा था. कुछ क्षण तक वह झबरे की रेशमी गर्माहट और कृतज्ञता को महसूस करता रहा. झबरे के आत्मीयता-प्रदर्शन और खुद को भी झबरा भा जाने की वजह से कुछ क्षण तक वह यह निर्णय नहीं कर पा रहा था कि अब उसका क्या करे. पहली बात, वह जल्दी घर पहुंचना चाहता था और दूसरी बात कि वह झबरे का सही मालिक ढूंढने के झंझट में भी नहीं फंसना चाहता था. साथ ही, झबरे को सड़क पर लावारिस छोड़ने का खयाल भी उसे बेहद गैर-जिम्मेदाराना लग रहा था. लिहाजा उसने यह फैसला किया कि मौजूदा हालत में सभी समस्याओं का एक ही सही हल है कि वह झबरे को घर ले जाये. वहां बच्चे, खासतौर पर नन्हां बबलू खुश रहेगा, घर की रखवाली रहेगी और इतना खूबसूरत कुत्ता घर में रहने से मोहल्ले में शान भी बढ़ेगी.

झबरा कुत्ता घर पर आ जाने से बच्चे वाकई बहुत खुश हुए. काफी देर तक तो बिट्टू, नीता और गुल्लू में इसी बात पर झगड़ा होता रहा कि इसकी देखभाल कौन करेगा, जबकि बबलू एक क्षण के लिए भी झबरे को अपने से अलग करने के लिए तैयार नहीं था. इतना खूबसूरत कुत्ता देखकर सरदारनी जीत कौर भी खुश हो गयी थी. उसने सराहना भरी नज़रों से कुत्ते को एक बार गौर से देखा और कहा, "अमीरों का कुत्ता है. इसके नखरे बहुत होंगे." और उसके लिए दूध लेने चली गयी.

महेंद्र ने अमीरों के प्रति अपनी नफरत का पूरा प्रदर्शन करते हुए हिकारत से जवाब दिया, "अमीरों ने दुनिया में सभी सुंदर चीजों का ठेका तो नहीं ले लिया. जिस जगह भी झबरे को रहना पड़ेगा, अपने-आप वहीं की तरह रहेगा."

दरअसल महेंद्र सिंह को झबरे की वजह से बच्चों की खुशी को देखकर भी बहुत खुशी हुई थी. उसने सोचा था, अगर झबरे की खुराक के खर्च की कीमत पर बच्चों को खुशी होती है तो महंगा थोड़े ही है. उमर बढ़ने के साथ-साथ उसकी तीन लड़कियों तथा इकलौते लड़के के खर्चे तथा फरमायशें बढ़ रही थीं. झबरे पर ध्यान केंद्रित हो जाने से फालतू की फरमायशें तो कम होंगी ही. वह भी बच्चों के साथ मिलकर झबरे से खेलने लगा.

झबरा बच्चों के साथ खेलने में एक्सपर्ट निकला. कभी बिट्टू की गोद से उछलकर नीता की गोद में दुबक जाता और कभी बबलू की पीठ से अपनी झबरी पीठ रगड़कर गुदगुदी पैदा कर देता. देखते-देखते महेंद्र सिंह के किरायेदार गोविंद सिंह और पंडित अमरित राज के बच्चे भी वहां आ गये. कुछ ही देर में वहां इतना हुड़दंग मच गया कि जीत कौर को खाना तैयार होने की घोषणा करना मुश्किल पड़ गया.

झबरे की बिगड़े अमीरों की आदतों का पहला एहसास तब हुआ जब उसने रोटी खाने से साफ इनकार कर दिया. उसने जीत कौर द्वारा फेंकी नरम रोटी को सूंघना तो दरकिनार, देखा तक नहीं. जीत कौर ने झबरे के इस व्यवहार पर अपने पति की तरफ सार्थक नज़रों से देखा.

महेंद्र सिंह ने झेंप से सिर को झटका देते हुए कहा, "भूख लगेगी तो अपने-आप खायेगा... अपने घर की आदत तो डलवानी की पड़ेगी."

तभी नीता ने अपनी कटोरी से मांस की एक बोटी निकालकर झबरे की तरफ फेंकी. झबरा भी लपककर आया तो देखते-देखते बोटी चबा गया तथा याचना भरी मुद्रा में सबकी तरफ देखने लगा. तभी बबलू ने भी मांस का एक टुकड़ा फेंक दिया और मां-बाप के देखते-देखते बच्चों ने अपने अपने हिस्से का ज़्यादातर मीट झबरे को चटा दिया. इस तमाम तमाशे को जीत कौर अपने पति की तरफ सवालिया नज़रें किए देखती रही. महेंद्र सिंह ने एकाध बार बच्चों को डांटा भी लेकिन डांट का केवल क्षणिक प्रभाव ही बच्चों पर पड़ता था. उन्हें झबरे को खिलाने में खेल-जैसा आनंद मिल रहा था. एकाध बार डांटने के बाद वह खुद भी चुप हो गया. मां-बाप को गंभीर देखकर बच्चों ने कुल मिलाकर यह लिहाज किया कि उनकी कटोरियों का मीट झबरे को पेश नहीं किया.

जीत कौर का मूड देखकर महेंद्र सिंह समझ गया कि बच्चों के सोने के बाद उसे अपनी बीवी का एक लेक्चर सुनना पड़ेगा और ऐसा ही हुआ भी.

जीत कौर ने सपाट चेहरे तथा बेलिहाजी आवाज़ का इस्तेमाल करते हुए कहा, "यह कुत्ता आप जहां से भी लाये हैं, वहीं छोड़ आइए. यह अमीरों का कुत्ता है. इसे पालना हमारे बस की बात नहीं. यह तो सुबह-शाम दूध-मीट मांगेगा. हम कहां से लायेंगे? आज हफ्ते में एक दिन मीट बनाया था, बच्चों ने उसे खिला दिया. वो अपना दूध भी उसे पिला देंगे. मेरी सलाह मानो तो इसे कल ही ले जाकर कहीं छोड़ आओ. बच्चों को मैं समझा लूंगी."

पत्नी की सभी बातें सही होने के बावजूद इतनी जल्दी गलत साबित हो जाना महेंद्र सिंह को हजम नहीं हो रहा था. उसने मुख्य रूप से अपना मानसिक बल बढ़ाने के इरादे से वही पुरानी बात दोहरायी, "जब आदमी को जगह के मुताबिक अपनी आदतें बदलनी पड़ती हैं तो फिर यह तो जानवर है. दो-चार दिन में ठीक हो जायेगा. फिक्र न कर, सो जा." और उसने करवट बदल ली.

जीत कौर कुछ क्षणों तक अपने ज़िद्दी पति को देखती रही. झबरा कुत्ता बबलू से सटकर सो रहा था. बबलू और झबरे के चेहरे पर एक जैसा संतोष दमक रहा था. जीत कौर को बुरा नहीं लगा.

बच्चों को भी झबरे को लेकर मां की परेशानी का अंदाज़ा लग चुका था. अगले दिन बच्चों में मां से छिपकर एक कान्फ्रेंस की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिसमें पड़ोसी गोविंदसिह तथा पंडित अमरित राज के बच्चे भी शामिल हुए. फैसला यह किया गया कि वे किसी भी कीमत पर झबरे को नहीं जाने देंगे. झबरे की खुराक– दूध और मीट के इंतज़ाम के बारे में बच्चों ने फैसला किया कि वे अपना-अपना दूध झबरे को पिलायेंगे और रोज के खर्च के पैसे जोड़कर शाम को चुपचाप मीट ले आया करेंगे.

अगले दो दिन इसी तरह गुज़र गये. जीत कौर को हैरानी जरूर हुई कि सिर्फ एक बार के दूध के ज़ोर पर झबरा तमाम दिन बच्चों से खिलवाड़ करता रहता था. बड़ी बेटी नीता से शक के तौर पर पूछा भी कि बबलू वगैरह झबरे को अपना दूध तो नहीं पिला देते. लेकिन नीता ने यह कहकर मां को संतुष्ट कर दिया कि पड़ोसियों के घर से भी झबरे को दूध-मीट मिल रहा है.

फिर भी तीसरे दिन बच्चों का यह रहस्य खुल गया. जीत कौर ने महसूस किया कि बच्चे आजकल रोटियां ज्यादा खाने लगे हैं और साथ ही गली से जब भी फेरी वाले गुजरते, मां से पैसे जरूर मांग लेते, लेकिन खाते-पीते कुछ भी नहीं थे. उसने पड़ोसियों से भी बातचीत की. पता चला कि वे झबरे कुत्ते को दूध-मीट वगैरह कुछ भी नहीं देते. और जीत कौर ने पड़ोस के दस वर्षीय लवली को शाम के वक्त मीट लाते हुए भी पकड़ लिया. उसने बच्चों की खूब लानत-मलामत की और झबरे को रस्सी से बांध दिया.

बंधकर एक ही जगह पर रहना झबरे के लिए ज़रूर असाधारण बात होगी, क्योंकि बांधे जाने के बाद से वह लगातार मिमियाता-भौंकता रहा. बच्चे कुछ दूर पर खड़े बेबस नज़रों से उस पर तरस खाते रहे. बबलू ने झबरे को रस्सी से आज़ाद करने के लिए मां से एकाध बार असफल प्रार्थना भी की.

महेंद्र सिंह के घर लौटते ही बच्चों ने डैडी को घेर लिया और एक आवाज में झबरे को रस्सी से आज़ाद करवाने का अनुरोध करने लगे.

महेंद्र सिंह या तो समझ गया कि झबरे का रस्सी से किसने बांधा है, लेकिन बच्चों के ज़ोरदार अनुरोध के दबाव को वह टाल न सका. बच्चों ने लपककर झबरे को आज़ाद किया और अपनी विजय तथा हर्ष की किलकारियां भरने लगे.

आवाज़ें सुनकर जीत कौर बाहर आ गयी और जो कुछ उसने देखा, उससे उसका रुका हुआ गुस्सा तेज़ी से झड़क गया. इससे पहले कि जीत कौर अपना गुस्सा निकालना शुरू करे, बच्चे मां को देखते ही झबरे सहित पड़ोसियों के घर में घुस गये.

अब महेंद्र सिंह और जीत कौर के बीच बाकायदा क्लेश छिड़ गया. जीत कौर ने बच्चों के पिछले दिनों की हरकतों का हवाला देकर कहा कि अगर यही हाल रहा तो कुछ ही दिनों में यह कुत्ता शेर बन जायेगा और बच्चे टी.बी. के मरीज़.

महेंद्र सिंह उसे समझाने की कोशिश करता रहा कि बच्चों पर कंट्रोल रखो और कुत्ते को भूखा–तो दो-चार दिन में सब सही हो जायेगा. दुनिया में वक्त के साथ सबको बदलना पड़ता है, कुत्ता तो भला किस गिनती में है. थोड़े से सब्र और दो-चार तरीके अपनाने भर की बात है, यह कुत्ता घर के सबसे बेहतरीन सदस्य के रूप में बदल जायेगा.

लेकिन जीत कौर का विश्वास अटल था. वह मुसलसल यही कहे जा रही थी कि चीजें बदल सकती हैं, पर चीजों की आदतें नहीं बदल सकतीं. जितनी मर्जी टोका-टाकी कर लो, वक्त मिलते ही वो अपना ढंग दिखा देती हैं. झबरे की आदतें नहीं बदल सकतीं, नहीं बदल सकतीं. जब हम इसकी खुराक जुटाने लायक नहीं रहेंगे, यह दूसरे के घर भाग जाएगा, लेकिन अपनी आदतें नहीं छोड़ेगा. यह अमीरों का कुत्ता है और इसकी सभी आदतें भी अमीरों जैसी हैं.

इस दार्शनिक विवाद का अंत जीत कौर ने इस ऐलान के साथ किया था कि इस मामले में वह और कुछ भी नहीं बोलेगी. और साथ ही यह भी भविष्यवाणी भी की कि अंत में सरदार महेंद्रसिह खुद झबरे कुत्ते को घर से निकालेंगे.

इस विवाद के बाद महेंद्र सिंह ने सारा मामला एक जिम्मेदाराना ढंग से अपने ऊपर ले लिया. उसने बहुत संजीदगी से बच्चों को समझाया कि हम इस कुत्ते का खर्च दूध-मीट के रूप में नहीं उठा सकते. इसलिए इसे धीरे-धीरे रोटी की आदती डाली जानी ज़रूरी है. नहीं तो कुत्ते को भगाना पड़ेगा.

बच्चे अपने डैडी की बात समझ गये और उन्होंने उसे रोटी खिलाने की कई कोशिशें भी कीं. डबलरोटी दी गयी, दूध में डालकर सामने रखी गयी, पानी में भिगोकर डाली गयी–लेकिन सभी कोशिशें नाकाम रहीं. झबरा अवांछित भोजन सामने आ जाने पर इस तरफ झांकता भी नहीं. बच्चों को हारकर उसे दूध या मीट देना पड़ता.

महेंद्रसिह का मकान निरंकारी कालोनी के सुनसान इलाके में था और बराबर चोरी का खतरा बना रहता था. झबरे के आगमन के एकाध दिन बाद पंडित अमरित राज, जो पेशे से कबाड़िये थे, ने सरकारी नीलामी में लोहे का काफी सामान उठाकर घर के बाहर रखवा दिया था. सोचते थे, उनका कबाड़ कोई सिर पर रखकर तो ले जा नहीं सकता, कम से कम टेंपो या ट्रक में ही ले जायेगा और घर में कुत्ते के रहते यह भी संभव नहीं.

उसकी अभिलाषा

□ अमरीक सिह दीप

नित्य नियमानुसार उस संध्या भी मठाधीश का स्वर्ग के स्वर्ण महल में दरबार सजा हुआ था. दरबार की प्रथा थी, ईश्वर की भूलोकीय शाखाओं (पूजाघरों) में भक्तजन जो मनौतियां, प्रार्थनाएं, याचनाएं करते थे, उनका निपटान इस सांध्यकालीन दरबार में होता था.

"हे महीश्वर, ये पहली अर्जी किसी सिरफिरे लेखक की है. आज जिंदगी में पहली बार वह आपके स्थानीय कार्यालय में आया था. उसने अपनी रचनाओं की रद्दी बेच कर जुटाये रुपये से पांच रुपये की प्रसाद चढ़ाया और हृदय से प्रार्थना करने लगा– 'सुना है तुम सर्वशक्तिमान हो. दीन बंधु, मुझे विश्वास था कि मैं अपनी कलम से देश में होने वाला रक्तपात रोक लूंगा पर मैं असफल रहा. अतः तुम्हारी शरण में आया हूं.'"

मठाधीश की खाल गुस्से से लाल हो गयी- "फाड़कर फेंक दो ये प्रार्थना पत्र... क्या बकवास है?... रक्तपात बंद करवा दूं... रोटी, कपड़ा, छत! गोया मैं अपना धंधा चौपट कर लूं. किस मेहनत से पुर्खों ने ये धंधा खड़ा किया है?... ये साला कोई विदेशी एजेंट लगता है. फौरन किसी को उग्रवादी के रूप में इसके घर धावा बोलने का आदेश दो..." □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन झबरे के आने के चार-पांच दिन बाद एक सुबह पंडित अमरित राज ने महसूस किया कि उनका कबाड़ आधा रह गया है जो वाकई सच भी निकला. साफ था, रात के चोरों के ट्रक के ज़रिए आधा माल गायब कर दिया था. उन्होंने जब झबरे के बारे में पूछताछ की तो पता चला, वो बबलू के साथ इत्मीनान से लिपटकर रात भर सोता रहा था.

सारी घटना की जानकारी मिलने के बाद जीत कौर ने महेंद्र सिंह की तरफ जतलाहट भरी नज़रों से देखा भर था. झेंपते हुए महेंद्र ने सिर्फ यह कहा था कि कुछ चीज़ों की तरह कुछ कुत्ते भी सिर्फ नुमायशी होते हैं. उनके इस्तेमाल पर जोर नहीं देना चाहिए... और रखवाली नहीं करता तो मैं क्या करूं? ज़रा बच्चों से छीनकर देखो, सब पता चल जायेगा, उसकी ज़रूरत किसे है और किसे नहीं है."

जीत कौर ने जबाब में सिर्फ यह कहा था, कि ज़रूरत तो नामालूम किसे है, लेकिन बच्चे इस मनहूस कुत्ते के नौकर बन गये हैं."

"और मैं तुम सब का," महेंद्र ने भुनभुनाकर कहा था.

अगले दिन महेंद्र सिंह ने घर लौटते हुए देखा, नीता एक हाथ में दूध का डोल और दूसरे हाथ में झबरे को गोद लिये घर लौट रही है. महेंद्र ने स्कूटर रोककर नीता से पूछा कि कुत्ते को पैदल क्यों नहीं चलाती.

नीता डैडी को देखकर बहुत खुश हुई थी. उसने महेंद्र को बताया, "झबरा गली के कुत्तों से बहुत डरता है. मारे डर के, कभी गोदी से ही नहीं उतरता. डैडी, यह बाग में खूब खेलता है."

महेंद्र को बीवी की शर्तें याद आ गयीं.

अगले दिन सुबह जीत कौर ने बहुत शांत आवाज में अपने पति को सूचित किया कि बिल्ली सारा दूध पी गयी है और दुबारा लाना पड़ेगा.

महेंद्र ने पूछा, "आज तो घर में झबरा भी था. बिल्ली कैसे आ गयी?"

"बिल्ली जब दूध पी रही थी, झबरा भी रसोई के एक कोने में खड़ा महीन आवाज़ में भौं-भौं कर रहा था. जैसे ही यह ऊंचा भौंकता, बिल्ली अपनी गुर्राहट से उसे डरा देती."

"मैं नहीं मान सकता."

जीत कौर ने शांत आवाज़ में 'वाह गुरु' की कसम उठाकर कहा, "मैं खुद सब कुछ देख रही थी."

महेंद्र सिंह ने अविश्वास में सिर हिलाकर झबरे के बारे में सोचने लगा. जीत कौर कुछ क्षण तक पति के विचारमग्न चेहरे को देखती रही और फिर कामकाज में जुट गयी.

महेंद्र सिंह ने फैसला कर लिया कि वह इस कुत्ते को असली कुत्ता बनाकर ही दम लेगा. उसे लगा, झबरे की नुमायशी तथा महंगी आदतों को बदलने के लिए उसे ज़ोर-ज़बर्दस्ती का सहारा लेना ही चाहिए.

अपने नये तरीके के पहले कदम के तौर पर उसने ऐलान किया, "झबरे का दूध-मीट बिलकुल बंद. घर के तीन-चार कोनों में नरम टुकड़े डाल दो. भूख लगेगी तो खुद खा लेगा."

झबरे ने भी आदतन रोटी के टुकड़े नहीं खाये. लेकिन भूख की बेचैनी के कारण वह बबलू के पास सोने भी नहीं आया. एक बार बबलू ने प्यार भरी जिद्द का सहारा लेकर मां के आगे झबरे की वकालत भी की लेकिन महेंद्र ने उसे इतनी ज़ोर से डांटा कि वह चुप होकर थोड़ी देर में सो गया.

सुबह जब बबलू की नींद खुली तो झबरा उसके पास ही सोया हुआ था. उसे बेहद खुशी हुई और उसने यह नज़ारा दिखाने के लिए फौरन सब बहनों को जगा दिया. इतवार का दिन होने के कारण जीत और भी मज़े से सोयी हुई थी, उसकी भी नींद खुल गयी. उसने पहला निष्कर्ष यह निकाला कि बर्दाश्त की हद से ज़्यादा भूख बढ़ जाने पर झबरे ने रोटी खा ली होगी और फिर आकर बबलू के पास सो गया होगा.

उसने अधजागे महेंद्र सिंह को अपने अनुमान के बारे बताया. उसने अलसायी आवाज़ में विजयी लहजे में कहा, "लगी होगी कंजर को भूख... और खा गया होगा." और वह फिर करवट लेकर आलस का सुख प्राप्त करने लगा.

जीत कौर चाय-दूध का इंतज़ाम करने के लिए रसोई की तरफ चल पड़ी. कौतूहलवश उसने रोटीवाले कोनों की तरफ देखा. उसे बेहद हैरानी हुई कि सब कोनों में रोटी के टुकड़े ज्यों के त्यों, अनछुए पड़े हैं. तो फिर झबरे ने पेट किस चीज़ से भरा! उसने सोचने की कोशिश की. रसोई में ताला लगा हुआ था.

तभी उसकी निगाह कमरे में जहां-तहां बिखरे चमड़े के जूतों पर गयी. बुरी तरह चबाये जाने के कारण जूते बदशक्ल बेकार हो गये थे. झबरे की भूख मिटने का रहस्य जीत कौर के आगे खुल गया था. उसने देखा, झबरे ने चमड़े का एक भी जूता पहनने लायक नहीं छोड़ा है. उसने ऊंची आवाज़ में पति को पुकारना शुरू कर दिया.

जब साढ़े दस बजे महेंद्र सिंह कमाई करने के लिए थ्री-व्हीलर पर घर से निकला तो उसकी गोद में झबरा भी था. वह किसी अमीर आदमी की कोठी में फेंकने की नीयत से झबरे को साथ लेकर चला गया.

जहां तक पति-पत्नी के बीच जीत-हार की बात है, महेंद्र सिंह के विचारों में कोई अंतर नहीं आया था. उसका कहना था, "झबरे की आदतें बदलना महंगा काम है और फिलहाल मेरे बस का नहीं है. लेकिन इसकी आदतें बदली जरूर जा सकती हैं."

और जीत कौर ने हंसकर अपनी हार स्वीकार कर ली थी. □

लाइन क्लियर

फिल्म-निर्देशक, जॉन रिच एक फिल्म की आउटडोर शूटिंग कर रहा था कि एक दृश्य में हर बार किसी जानवर या हवाईजहाज की आवाज के कारण विघ्न पड़ने से उसकी नये सिरे से शूटिंग करनी पड़ रही थी. इस प्रकार वह दृश्य कई बार लिया गया.

एक स्त्री, जो अपनी कार में वहां से गुजर रही थी, शूटिंग देख कर रुक गई थी. वह समझ नहीं पा रही थी कि एक ही दृश्य इतनी बार क्यों लिया जा रहा है. आखिर वह निर्देशक से पूछे बिना न रही.

जवाब में जॉन रिच ने कहा, "जितनी ज्यादा बार यह दृश्य लिया जायेगा, उतने ही ज्यादा सिनेमाओं में दिखाया जा सकेगा."

स्त्री ने जैसे समझते हुए सिर हिलाया और संतुष्ट हो कर चली गयी. □

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अलौकिक रहस्यों के चक्रव्यूह

हजार परमाणु बमों की शक्ति के बराबर शक्तिमान मंत्र की आध्यात्मिक ऊर्जा की चमत्कारी दास्तान... कि कैसे इस मंत्र ने ऑर्थर कोएस्लर को प्रभावित किया !

अपनी आत्महत्या से पूर्व, पश्चिम के एक अग्रणी, अति संवेदनशील तथा लेखक-चिंतक ऑर्थर कोयस्लर ने भारत के समाचार-साप्ताहिक 'ब्लिट्ज' के संपादक रूसी करंजिया को एक चौंका देने वाला वक्तव्य दिया था.

श्री करंजिया ने उनसे लंदन में भेंट की थी. बातचीत के दौरान उन्हें लगा कि वे संभावित परमाणु महायुद्ध और उसके परिणाम स्वरूप होने वाले सर्वनाश की संभावना के कारण अत्यंत चिंतित व ग्रस्त थे. उन्होंने कहा, ''मिस्टर करंजिया, इस सर्वनाशी युद्ध को देखने के लिये मैं जीवित नहीं रहना चाहता.''

श्री करंजिया की समझ में नहीं आया कि वे उनके इस उद्‌गार के बारे में उनसे क्या कहें. उन्होंने कुछ सोचकर कहा, ''जहां तक भारत का संबंध है, वह परमाणु-बम के निर्माण और अस्त्र-शस्त्रों की होड़ से दूर रहना चाहता है.''

''हां, भारत की यह नीति उसकी शांति-प्रियता की नीति के अनुरूप ही है. और वैसे भी उसे परमाणु-बम की कोई आवश्यकता नहीं है.''

''मैं आपका मतलब नहीं समझा, मिस्टर कोयस्लर! यदि हमारे पास परमाणु बम नहीं हुआ, तो हम अपनी सुरक्षा कैसे कर पायेंगे?''

''आप लोग अपनी रक्षा गायत्री मंत्र से कर सकते हैं!''

''गायत्री मंत्र से?'' साश्चर्य श्री करंजिया ने पूछा. उन्हें याद आया कि कोयस्लर ने एक बार भारत को 'एक गंदा और शोरगुल वाला देश' कहा था और हैरानी जाहिर की थी कि ऐसे देश में सुख और शांति से कैसे जिया जा सकता है! उन्होंने यह भी कहा था, ''आदमी को न्यूयार्क जैसे अशांत नगर में भारत के किसी भी मंदिर से ज्यादा शांति प्राप्त हो सकती है.'' गांधीजी के प्रति आदर व्यक्त करते हुए भी, वे यह कहना नहीं भूले थे कि ''भारत में न राजतंत्र चलता है, न प्रजातंत्र, सिर्फ बापू-तंत्र चलता है. इसी बापूतंत्र के अनुयायी, भारत के प्रधान मंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री ने मेरी पुस्तक 'द लोटस एंड द रोबा' पर इसलिए प्रतिबंध लगवा दिया था कि मैंने उसमें गांधीजी की आलोचना करने का दुःसाहस किया था. प्रधानमंत्री के रूप में उन्होंने गांधीजी की अहिंसा का नमूना पाकिस्तान से सशस्त्र युद्ध करके प्रस्तुत किया और शांति-स्थापना के प्रयास में ही उनका निधन हुआ. मैं श्री शास्त्री का अत्यंत कृतज्ञ हूं कि

उनके जीवन के अंतिम दिन उस बात की पुष्टि करते हैं जो मैंने भारत पर गांधी की विरासत के बारे में कही थी.''

कोयस्लर ने आगे जो कुछ कहा, उसे सुनकर श्री करंजिया सचमुच चकित रह गये. कोयस्लर कह रहे थे. ''**गायत्री मंत्र में हजार परमाणु बमों के बराबर शक्ति है. यदि सारे भारतीय, उन पर हमला होने पर, एक साथ इस मंत्र का पाठ करना आरंभ कर दें, तो यह शक्ति प्रकट होकर, हमलावरों के हौसले पस्त कर देगी.**''

गायत्री-मंत्र के बारे में कोयस्लर ने जो मत व्यक्त किया, वह भारत के प्रति उनके गहरे लगाव को अभिव्यक्त करता था. यह सच है कि उन्होंने भारत की कई अवसरों पर कटु आलोचना की, लेकिन साथ ही यह भी सच है कि वे कई बार 'भारत की खोज' के लिये भारत आये थे और हर बार उन्होंने भारत की स्थूल देह के परे जाकर, भारत की आत्मा को जानने और समझने का ईमानदार प्रयास किया था. उन्होंने पहली भारत-यात्रा 1958 में की थी.

अपनी भारत-यात्राओं के दौरान उन्होंने रमण महर्षि, आनंदमयी मां, आचार्य विनोबाभावे, कांची के शंकराचार्य, त्रिवेंद्रम के श्रीकृष्ण मेनन तथा अन्य संतों व योगियों से भेंट की थी. उन्हें भारतीय योगियों के ये दावे बिल्कुल खोखले लगे कि योग के माध्यम से हर प्रकार के शारीरिक व मनस रोगों का उपचार किया जा सकता है. वे आनंदमयी मां से तनिक भी प्रभावित नहीं हुए. शंकराचार्य के इस कथन पर कि 'विज्ञान को धर्म का सेवक होना चाहिये', उन्होंने टिप्पणी की कि ''पिछले पंद्रह सौ वर्षों से भारतीय विज्ञान की प्रगति अवरुद्ध है. इसका एक कारण यह है कि उसने खगोल-विज्ञान को ज्योतिष के रूप में और गणित को अंक-विद्या के रूप में दूषित कर दिया था.

कोयस्लर के अंतस में संशय उठने स्वाभाविक थे, क्योंकि विकास की सीढ़ी की हर पायदान पर चढ़ते हुए उन्हें लगा था कि सार-तत्व इस पायदान पर भी नहीं मिला. वह द्वार अभी आना शेष है, जिसके आने पर सारे द्वार खुल जाते हैं और सारे संशयों का लय एक परम समाधान में हो जाता है. इसी प्रकार अंतर्यात्रा करते-करते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

एक दिन के अध्यात्म-जगत में प्रवेश कर गये. अपने जीवन के अंतिम दिनों में वे परालौकिक के प्रति इतने अधिक विस्मय में लीन हो गये थे कि उन्हें लगने लगा था कि अपने सारे संशयों का समाधान उन्हें अपने से पार जाने पर ही प्राप्त हो सकता है. जीनव-सत्य की खोज की दिशा उन्हें भारत आने पर ही मिली. उस भारत में आने पर, जिसके वे पहल आलोचक थे. जो कुछ सूत्र हिंदू धर्म के सिद्धांतों से परिचित होने के बाद उन्हें मिले, उन्हें उन्होंने अपने हाथ में बोया और कुछ समय बाद पाया कि उनके जीवन में एक बड़ा परिवर्तन आ चुका था.

1905 में बुडापेस्ट (हंगरी) में जन्मे आर्थर कोयस्लर ने युवावस्था में ही अमीरी और गरीबी, दोनों का स्वाद चख लिया था. जिस समृद्ध परिवार में जन्म लेकर उन्होंने वियना में अपनी शिक्षा पूरी की, उसी परिवार को, आगे चलकर इस सदी के तीसरे दशक में सारे विश्व में छाये विश्वव्यापी आर्थिक संकट के दिनों में निपट निर्धनता का मुंह देखना पड़ा था. इस से उत्पन्न. विश्व के नैतिक, सांस्कृतिक व आर्थिक विघटन ने उन्हें साम्यवाद की ओर प्रवृत्त किया. 1932 से 1935 तक उन्होंने एक पत्रकार और कार्यकर्त्ता के रूप में साम्यवाद का खूब प्रचार किया, और नाना साम्यवादी प्रवृत्तियों से जुड़े रहे.

किंतु साम्य से उन्हें पूरा संतोष प्राप्त नहीं हुआ. उन्होंने देखा कि साम्यवाद जहां एक बुराई को समाप्त करता है, वहां पांच अन्य बुराइयों का पैदा भी कर देता है. साम्यवाद से निराश होकर 1938 में वे साम्यवादी दल से अलग हो गये. उनकी आस्था जनतंत्र और उदारतावादी तथा मानवतावादी पूंजीवाद में जाग्रत हुई और वह जीवन के अंत तक कायम रही.

कोयस्लर की उल्लेखनीय रचनाएं हैं— 'द योगी एंड कमिसार', 'इनसाइट एंड आउटलुक', 'लाइफ आफ्टर डैथ', 'एक्ट ऑफ क्रिएशन', 'लोटस एंड रोबो' (जिसे श्री लालबहादुर शास्त्री के गृह-मंत्रित्व काल में जब्त कर लिया गया था, क्योंकि उसमें गांधीजी के बारे में कुछ आपत्ति-जनक बातें कही गयी थीं), 'एरायवल्स एंड डिपार्चर्स', 'पोस्ट इन द मशीन' तथा बहुचर्चित 'गॉड दैट फेल्ड' (जिसमे उन्होंने सोवियत साम्यवाद की भर्त्सना की है), 'डार्कनैस एट नून' (जिसमें एक ऐसे पुराने बोल्शेविक की कहानी कही गयी है, जिसे स्टालिन के आदेशानुसार ऐसे अपराधों को स्वीकार करने के लिये विवश किया जाता है जो उसने कभी नहीं किये. तथा 'ब्रिक्सट्र वेबेल' और 'जेनसः ए समिंग अप.'

चूंकि उनका 'डार्कनैस एट नून' उपन्यास सारे विश्व में ऑरवेल कृत 'एनीमल फार्म' नामक उपन्यास के समान इस सदी का सर्वाधिक चर्चित उपन्यास बना, इसलिए अधिकांश लोग उन्हें 'एक भूतपूर्व साम्यवादी' और 'साम्यवाद के शत्रु' के रूप में ही जानते हैं. लेकिन, उन्हें सिर्फ इसी रूप में जानना उनकी अधूरी और भ्रामक पहचान होगी. यदि उनकी सब कृतियों का लेखा-जोखा किया जाये तो पता चलेगा कि उनकी कृतियां राजनीति के अलावा विज्ञान, मनोविज्ञान, परा-मनोविज्ञान, समीक्षा, संस्मरण, समाज-दर्शन, नृतत्व-शास्त्र, चिंतन, आदि विविध विधाओं से संबंधित हैं.

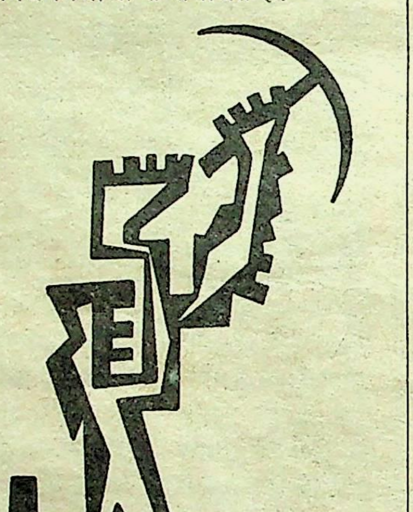

जीवन में मानव को तीन प्रकार से सिद्धि-लाभ होता है. पूर्व-कर्म के वेग से, औषधि से तथा मंत्र-शक्ति से. आयुर्वेद के अनुसार जब औषधि के साथ मंत्र की शक्ति भी मिल जाती है तो औषधि की शक्ति में एक प्रखरता और पुष्टता आ जाती है. आंतरिक शक्तियों को बहिरोन्मुख संचारित कर, कार्य-सिद्धि में मंत्र-शक्ति का महत्व सर्वोपरि है. मंत्र-शक्ति के महत्व को ईसाई धर्म और इस्लाम में भी स्वीकार किया गया है. सिखों के प्रथम गुरु—गुरु नानक नाम-जप के प्रबलतम समर्थक थे.

मंत्र मूलतः एक अवबोधन है, स्वयं का स्वयं के द्वारा. मंत्र के द्वारा व्यक्ति अपने उत्कृष्टतम रूप से परिचित होकर अपार शक्ति की अलभ्य कुंजी पा जाता है.

मंत्र का मनोविज्ञान के साथ, तंत्र का सूक्ष्म भौतिक विज्ञान के साथ, और यंत्र का सूक्ष्म तथा स्थूल भौतिक विज्ञान के साथ संबंध है.

बंबई के एक बड़े अस्पताल में प्रख्यात चिकित्सकों, शल्य-चिकित्सकों तथा तांत्रिक वैज्ञानिकों की मौजूदगी में एक प्रयोग किया गया था—गंभीर और असाध्य रोगों के रोगियों को मंत्रदीक्षा द्वारा स्वस्थ करने का. यह प्रयोग काफ़ी हद तक सफल रहा और उससे नागपुर की उस संस्था के, जो कई वर्षों से मंत्रदीक्षा द्वारा रोगियों का इलाज करती चली आ रही है, इस दावे को काफी बल मिला कि 'हिरण्यगर्भ-समीक्षा' में वर्णित मंत्रदीक्षा-चिकित्सा-विधि से पोलियो जैसे गंभीर रोग के रोगी भी चंगे हो सकते हैं.

मंत्र की शक्ति को वैज्ञानिक दृष्टि से देखने और वैज्ञानिक ढंग से समझने की कोशिश की जाये तो कहा जायेगा कि मनुष्य के शरीर-तंत्र के दो भाग हैं—बाहय और आंतरिक. जब तक दोनों चेतनावस्था में रहते हैं, सक्रिय रहते हैं, उनके अनवरत रूप से चलने वाले संग्रहण और संप्रेषण के कारण, घार्षणिक और धारावाही दोनों प्रकार की विद्युत हमारे शरीर में उत्पन्न होती रहती है. घार्षणिक विद्युत का उत्पादन शरीर करता है, धारावाही विद्युत का मस्तिष्क. वैज्ञानिकों तथा परा-मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि मंत्रदीक्षा में इन दोनों प्रकार की विद्युतों का समवेत-मिश्रित प्रयोग होता है.

जिन अक्षरों के मिलन से मंत्र बनता है, उसका समन्वय इस प्रकार किया जाता है, जैसे धातु और रासायनिक पदार्थों को विचारपूर्वक मिलाकर विद्युत-शक्ति उत्पन्न की जाती है. समूह के सूक्ष्म विचारपूर्वक मिलन से मंत्र में चमत्कारिक शक्ति आ जाती है. और अब साधक के अंतःकरण की भाव-शक्ति, प्राण-शक्ति, मनःशक्ति और संयम-शक्ति के द्वारा मंत्र असाधारण शक्ति प्राप्त कर, ईप्सित फल देना आरंभ कर देता है. आर्थर कोयस्लर और पीटर सैलर्स के साथ भी उनके जीवन के अविस्मरणीय क्षणों में ऐसा ही घटा होगा. □

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पृथ्वी और सूर्य की परिक्रमा के बीच गैलीलियो

आभा मिश्र

गैलीलियो पहले खगोल शास्त्री थे जिन्होंने टेलीस्कोप का इस्तेमाल किया था. और वह ऐसे अंतिम व्यक्ति भी थे जिन्हें चर्च के अंधविश्वासों के खिलाफ बोलने के लिए प्रताड़ित किया गया. चर्च के अनुसार सूर्य पृथ्वी की परिक्रमा करता है जबकि गैलीलियो कोपरनिकस के सिद्धांत से सहमत थे, जिसके मुताबिक पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है. रोम के चर्च ने गैलीलियो को धमकी दी कि यदि वह कोपरनिकस सिद्धांत का खंडन जनता के सामने नहीं करेंगे तो उन्हें इसकी सजा भुगतनी होगी. गैलीलियो ने चर्च की आज्ञा मानते हुए सार्वजनिक रूप से इस सिद्धांत के खिलाफ अपने विचार रख दिये. माफी मांगने के बाद गैलीलियो ने 'डायलॉग ऑफ टू सिटीज' नामक पुस्तक में चर्च और कोपरनिक्स दोनों के ही सिद्धातों को सही बताया ताकि वह सच बोलने के साथ-साथ चर्च के कोप भाजन होने से भी बच सके. अब चर्च के लिए स्थिति असहनीय थी. चर्च ने गैलीलियो पर मुकद्दमा चलाने का फैसला किया और एक विशेष आयोग जांच के लिए बैठा दिया. जाहिर था कि गैलीलियो को दोषी पाया जाता. इस तरह के मुकद्दमों की खास बात यह थी कि उनमें यह नहीं बताया जाता कि मुजरिम को किस अपराध के लिए गिरफ्तार किया जाता है बल्कि उससे यह पूछा जाता है कि क्या वह जानता है कि उस क्यों गिरफ्तार किया गया है. गैलीलियो से जब यह पूछा गया तो उसने जवाब में कहा कि वह तो पहले ही चर्च से किताब छपवाने की अनुमति ले चुका था. फिर भी चर्च ने धर्म-विरोधी विचार प्रकट करने के लिए गैलीलियो को कड़ी सजा देने की बात सामने रखते हुए यह प्रावधान भी प्रस्तुत किया कि यदि वह चर्च द्वारा दिये गये वक्तव्य को जनता के सामने पढ़ देगा तो बचाव की गुंजाइश हो सकती है. गैलीलियो ने भयातुर हो कर यह बात स्वीकार कर ली. वह जानता था कि ऐसा न करने पर उसे मृत्युदंड भी मिल सकता है.

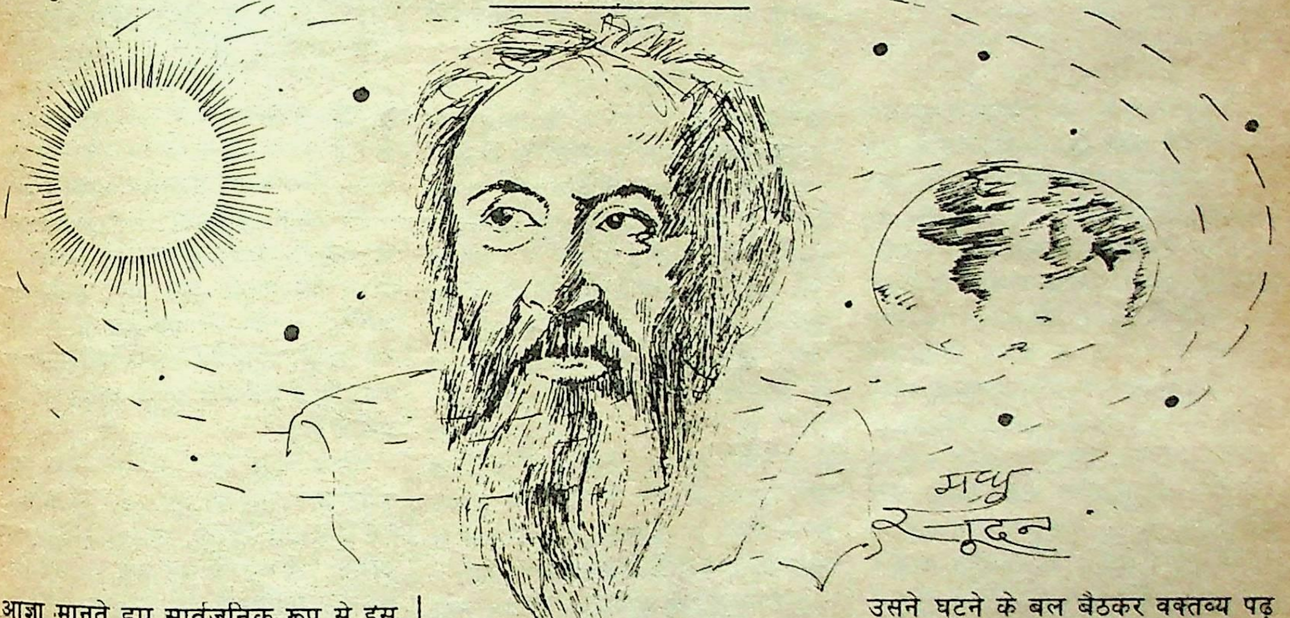

> चर्च के अंधविश्वास हों या अनैतिकता के आरोप, देश-द्रोह का अभियोग हो या पिछड़े समाज के अंधे कानून... इनकी चपेट में आने से गैलीलियो बचे न सुकरात, ऑस्कर वाइल्ड बचे न एजरा पाउंड.... आप जानते हैं, इसकी वजह आखिर है क्या?

उसने घुटने के बल बैठकर वक्तव्य पढ़ दिया..." मैं उस सिद्धांत (जिसके अनुसार पृथ्वी सूर्य का चक्कर लगाती है) की निंदा करता हूं... मैं उस सिद्धांत से नफरत भी करता हूं."

कुछ लोगों का कहना है कि जब गैलीलियो उठकर खड़ा हुआ तो उसने पृथ्वी पर जोर से लात मारते हुए कहा..." तू कम्बख्त अभी तक सूर्य का चक्कर लगा रही है."

इस मुकद्दमे के बाद चर्च ने सजा के तौर पर गैलीलियो को उसी के घर में नजरबंद कर दिया. यहां उससे कोई नहीं मिल सकता था.

आखिरी दिनों में यह क्रांतिकारी खगोलशास्त्री अंधा हो गया था. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऑस्कर वाइल्ड पर अनैतिकता के आरोप

"दुनिया में जितने मुकद्दमे चलते हैं वे सभी जिंदगी के लिए बराबर महत्वपूर्ण होते हैं. यह बात ऑस्कर वाइल्ड ने अपने मुकद्दमे की समाप्ति के तत्काल बाद अदालत में कही. हालांकि उसकी प्रतिष्ठा मुकद्दमे के दौरान कम हो चुकी थी फिर भी वह मजाक करने के मूड में था. उसका कहना था कि वह स्वयं इस मुकद्दमे का अभियोजक है. सबसे पहले स्वयं इस मुकद्दमे का अभियोजक है. सबसे पहले स्वयं वाइल्ड ने क्वींस बरी पर मानहानि का मुकद्दमा दायर किया. यदि वह क्वींस बरी पर मुकद्दमा न चलाता तो शायद उसका कुछ भी न बिगड़ता. वाइल्ड जिस युग में पैदा हुआ था, इंग्लैंड का पूरा समाज तब पाखंड में डूबा हुआ था. वाइल्ड के मन में समाज के प्रति आक्रोश और तिरस्कार भरा हुआ होगा. जो अभिजात वर्गीय महानुभावों को आग बबूला कर देता था. वह डगलस नाम के सुंदर सुकुमार और स्त्रैण नवयुवक को हाथ लिए पूरे लंदन में घूमा और अपने अनैतिक संबंधों का जानबूझकर प्रचार करता फिरा. मुकद्दमे की शुरूआत के दौरान अब मजिस्ट्रेट के द्वारा यह पूछा गया कि वाइल्ड नाटककार और कवि हैं तो उसे यह जवाब सुनना पड़ा, "मैं कोई सामान्य नाटककार और कवि नहीं हूं मुझे सारी दुनिया जानती है". जाहिर था कि वाइल्ड यहीं पर न्यायाधीश को नराज कर चुका था. दूसरा सवाल क्वींस बरी से पूछा गया उत्तर में क्वींस बरी ने माना कि उसने जानबूझ कर विजिटिंग कार्ड पर वाइल्ड के लिए गालियां लिख कर भेजी थीं ताकि वह उसके खिलाफ कार्यवाही करने को उत्तेजित हो जाये. और क्वींस बरी अदालत में वाइल्ड को एक घृणित और होमोसैक्सुअल साबित कर सके. क्वींस बरी को शक था कि उसके पुत्र से वाइल्ड के अनुचित संबंध थे. मुकद्दमा चलने से हो सकता है कि उसका पुत्र मजबूरन वाइल्ड से अलग हो जाए. उसने 'पिक्चर आफ डोरियन ग्रे' जैसे उपन्यास को भी अनैतिक बताया. उसने दर्जन भर ऐसे लोगों की फेहरिश्त पेश की जिनसे वाइल्ड ने अनुचित संबंध स्थापित करने की कोशिश की थी 5 अप्रैल, 1895 को मुकद्दमा शुरू हुआ. वाइल्ड के मित्रों ने उस पर बहुत दवाब डाला कि वह मुकद्दमा वापस ले ले किंतु उसने यह सलाह नहीं मानी.

मुकद्दमे की खास बात यह थी कि अनैतिकता के आरोपों का जवाब देने की बजाय वाइल्ड स्वयं को नैतिकता से ऊपर उड़ने वाला महान साहित्यकार साबित करने की कोशिश करता रहा. प्रतिक्रिया स्वरूप लोग वाइल्ड के खून के प्यासे हो उठे. विरोधी वकील ने बहस के दौरान जब वाइल्ड को उत्तेजित करने के लिए पूछा कि क्या कभी उसने एक सुंदर युवक से पागलों की तरह प्रेम किया है...? तब वाइल्ड एक उत्तर था, "किया है लेकिन पागलों की तरह नहीं" इस पर मजिस्ट्रेट ने उसे डांटा भी. वकील ने फिर पूछा "यानी आपने किसी लड़के को वास्तव में पूजा की तरह से प्यार किया है." वाइल्ड ने जवाब दिया, "मैंने अपने अलावा कभी किसी की पूजा नहीं की." वकील ने फिर पूछा, "फिर भी आप समलिंगी प्यार को अच्छा मानते हैं!" प्रत्युत्तर में वाडल्ड ने कहा, "ऐसा प्यार मैंने शेक्सपीयर की कविताओं से सीखा."..... बस अब क्या था लोग शेक्सपीयर की तौहीन पर नफरत से भर उठे. पूरे देश में वाइल्ड के खिलाफ घृणा की लहर दौड़ गयी. वकील ने वाइल्ड से पूछा, "क्या आपने डगलस का चुंबन लिया है?" वाइल्ड ने जवाब दिया, "वह तो इतना बदसूरत है कि उसका चुंबन लिया ही नहीं जा सकता." अदालत में सनसनी फैल गयी. और मजिस्ट्रेट के लिए वाइल्ड के खिलाफ फैसला देने का आसान रास्ता तैयार हो गया वाइल्ड को दो साल की सजा सुनायी गयी.

एजरा पाउंड का देशद्रोह

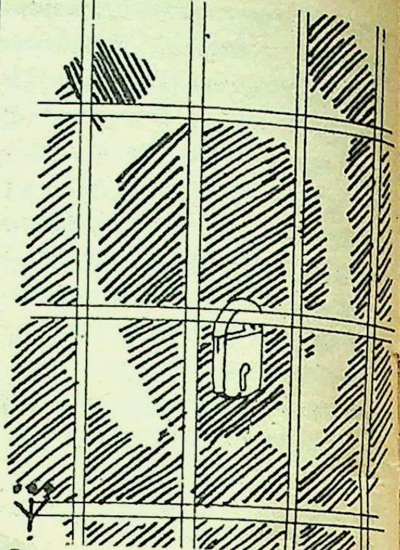

विश्व प्रसिद्ध कवि एजरा पाउंड दूसरे विश्व युद्ध के दौरान लंबे समय तक रोम रेडियो से इंग्लैंड अमरीका और सबसे ज्यादा यहूदियों के खिलाफ जहर उगलते रहे. वे इस बात पर जोर देते थे कि विश्व के यहूदी एक बड़े अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक षडयंत्र में शामिल है जिसका उद्देश्य दुनिया के गैर यहूदियों को लूटना है. ये यहूदी इंग्लैंड और अमरीका की सरकार चलाते हैं...

विश्व युद्ध की समाप्ति पर जब अमरीका में उन पर मुकद्दमा चलाया गया तब ये तमामं रेडियो प्रसारण अदालत के सम्मुख रखे गये. वे अंत तक इस बात पर अड़े रहे कि इटली की फासिस्ट सरकार वैचारिक स्वतंत्रता की हिमायती थी और सही अर्थों में एक प्रजातांत्रिक सरकार थी. मुसोलिनी प्रशासन ने कभी उन पर यह दबाव नहीं डाला कि वे उसकी इच्छानुसार भाषण करें. यह बात चौंकाने वाली थी. इटली से अमरीका लाये जाने से पहले इटली के अधिकारियों ने उनसे बेहद अमानवीय व्यवहार किया. पिंजड़े में बंद करके ऐसी जगह उन्हें रखा गया जहां सुरक्षा गार्ड ही उन पर नजर रख सकें. एजरा पाउंड ने अपने वकील कारनेल को यह सुझाव देकर चौंका दिया कि वह डाक्टरों की मदद से अदालत में उन्हें विक्षिप्त प्रमाणित करके रिहा करवा दे.

अक्तूबर 1945 में इस्तगासे के वकील ने एजरा पाउंड के खिलाफ अदालत में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुकद्दमा दायर करते हुए कहा कि इस व्यक्ति ने अमरीका के शत्रु इटली के पक्ष में रेडियो प्रसारण करके युद्ध में अपने देश का मनोबल गिराते हुए देश द्रोही कृत्य किया है और इसके बदल खासी रकम हड़पी है. जवाब ने एजरा पाउंड के वकील ने उसके दोषी ने होने का दावा पेश किया. पाउंड को जेल से अस्पताल भेज दिया गया क्योंकि उसकी हालत काफी खराब हो चली थी. पाउंड के साथ हो रहे व्यवहार पर अमरीका और यरोप के हेमिग्वे व इलियट जैसे अनेक महान साहित्कार उत्तेजित हो उठे. इन्होंने पाउंड के गुनाहों को नजरअंदाज करने का फैसला करते हुए [illegible] विश्वव्यापी अभियान छेड़ दिया. अदालत के चार मनोचिकित्सकों को यह इस काम के लिए नियुक्ति किया कि वे पाउंड की मानसिक हालत का जायजा लें. मनोचिकित्सकों ने पाउंड को विक्षिप्त घोषित कर दिया. सरकारी वकील ने इसका विरोध करते हुए जिरह किये जाने की बात उठायी. सहसा पाउंड ने बहस के दौरान यह घोषित कर दिया कि उनका जीवन में यह मिशन रहा है कि वे अमरीका की शत्रुओं से रक्षा कर सकें. वकील ने इस आधार पर अदालत ने उनकी रिहायी की मांग की. धीरे-धीरे पाउंड के पक्ष में माहौल तैयार होने लगा. पाउंड विरोधी और दक्षिणपंथी पत्रिका 'लाइफ' ने भी पाउंड पर मुकद्दमा जारी रखने के लिए सरकार की आलोचना की. मुकद्दमे के बाद पाउंड बारह साल तक सैंट एलिजाबेथ अस्पताल में रहे जो जेल से कम नहीं था. मुसीबत के दिनों में रौबर्ट फ्रास्ट ने पाउंड की सबसे ज्यादा मदद की. अंततः सन् 1958 में पाउंड के खिलाफ केस खारिज कर दिया गया. पाउंड समर्थकों का यह मानना था कि पाउंड न सिर्फ मुकद्दमे के दौरान विक्षिप्त था बल्कि वह इटली से प्रसारण प्रारंभ करने के पहले से ही इस अवस्था में था. परिणामतः पाउंड को कोई सजा नहीं मिली.

सुकरात : सत्य की खोज

सुकरात पर चलाये गये मुकद्दमो के बारे में जैनोफोन जैसे उनके शिष्य ने प्रामाणिक लेखन किया है. जैनाफोन सैनिक अधिकारी थे. और सुकरात के बहुत नजकीद भी. उनके अनुसार सुकरात प्रायः इस जोड़-तोड़ में लगे रहते थे कि शासन के ऊंचे पदों पर किस तरह अपने विश्वासपात्रों को बिठा दिया जाये. प्लेटो ने भी इस बात की पुष्टि की है. जाहिर था, ऐसे सत्ता के करीबी लोग सुकरात के दुश्मन बन जाते. ऐथेंस के कुख्यात 'तीन आततायों' से सुकरात की दुश्मनी इसी तरह की थी. इनका नेता कभी सुकरात का शिष्य रहा था. उसने सुकरात की जोड़तोड़वादी नीतियों और ऐथेंस के युवकों को पढ़ाने पर रोक लगा दी. किंतु सुकरात कहां मानने वाले थे! लिहाजा उन पर मुकद्दमा दायर कर दिया गया. प्लेटो ने भी सुकरात के मुकद्दमों का विवरण 'एलोलोजी' में दिया है. यह विवरण इस रूप में अधिक प्रामाणिक है कि स्वयं प्लेटो इस मुकद्दमे के दौरान अदालत में [illegible]

इस मुकद्दमे के दौरान अदालत में मौजूद थे.

इस्तगासे के वकील ने सुकरात पर अनेक दुष्कर्मों व नवयुवकों को गुमराह करने के आरोप लगाये. भूमिगत और आसमानी चीजों की खोजबीन ही नहीं बुरी चीजों को अच्छी और अच्छी चीजों को बुरी साबित करते हुए अपरिपक्व लोगों को चौपट करने के भी आरोप सुकरात पर लगे. किंतु असली कारण था. तत्कालीन सत्ताधारी दल के विरोधी अभिजातवर्गीय दल से निकट का संबंध होना सुकरात के आरोपियों में एनिट्स, मैलिटस और त्वाइकॉन प्रमुख थे. मैलिटस के आरोपों का जवाब देते हुए सुकरात ने कहा यदि यह सच है कि मैं एथेंस के युवकों को गुमराह कर रहा हूं तो क्या मैं इतना मूर्ख हूं कि यह भी न समझ सकूं कि ये लोग एक दिन मुझे भी क्षति पहुंचा सकते हैं. वाक्पटु और बहुत अधिक भाषण देने के आरोप भी सुकरात पर लगाये गये. पर इनके जवाब में उनका कहना था कि वह अपने भाषणों में सत्य बोलता है. धनी परिवारों के युवकों को मैंने तमाम अच्छी बातें सिखायी हैं पर चूंकि इनके पास करने को और कोई काम नहीं है महज़ इसीलिए वे दूसरों की खाल उधाड़ते फिरते हैं. और इससे मेरी बदनामी होती है.'' सुकरात ने अपने जजों से कहा कि यदि वे उसे मत्युदंड देंगे तो यह सुकरात का कम और स्वयं उनका नुकसान अधिक होग्ग. जाहिर है कि एक घटिया आदमी बेहतर आदमी को नुकसान पहुंचा नहीं सकता;'' मैं अपने बचाव में जो दलील दे रहा हूं वह दरअसल आरोपियों की भलाई के लिए ही है क्योंकि यदि मुझे मृत्युदंड या देश निकाल दिया गया या किसी तरह के नागरिक अधिकारों से वंचित किया गया तो यह आरोपियों के ही विरोध में होगा. और वे एक तरह से मुसीबत में पड़ जायेंगे.'' सुकरात ने कहा कि अगर यह सच है कि मैंने अपने शिष्यों को भ्रष्ट कर दिया है कि यह कहां तब ठीक है कि ऐसे लोग मुझ पर मुकद्दमा चलायें!

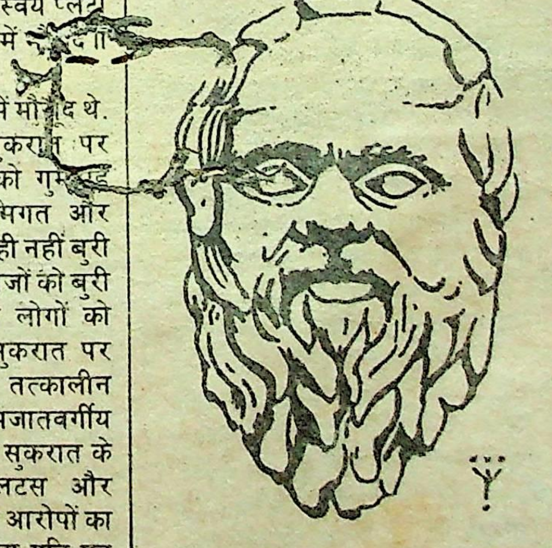

आखिरकार जब सुकरात को मृत्यु दंड दे ही दिया गया तो उसने अदालत से कहा, ''अब मैं मरने जा रहा हूं और मरते वक्त आदमी की जवान पर सरस्वती विराजती है. अतः अब जो मैं कहूंगा वह सच साबित होगा. मैं कहता हूं कि आप मेरे हत्यारे हैं और मेरे मरने के बाद मुझसे भी ज्यादा भयानक सजा भुगतेंगे.'' उसने न्यायाधीशों को संबोधित किया, ''मुझे मृत्यु से भय नहीं है. मृत्यु या तो स्वप्न विहीन निद्रा है या मृतक की आत्मा दूसरे लोक में चली जाती है. दोनों हालतों में मरने से आदमी को कोई तकलीफ नहीं होती. दूसरे लोक में वह उन लोगों से मिलेंगे जिन्हें ठीक उसी की तरह अन्यायपूर्वक मौत के घाट उतारा गया था. वहां भी वह सत्य की खोज जारी रख सकेगा.

सुकरात को जहर देकर मारा गया. इससे पहले उसके कुछ शिष्यों ने उसे जेल से भगा ले जाने की योजना भी बनायी थी किंतु सुकरात ने इस प्रस्ताव को अनैतिक और गैरकानूनी कहकर अस्वीकार कर दिया.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गोपाल चतुर्वेदी

सरकार और 'साकर' दृष्टिकोण

एक हफ्ते के इंतजार के बाद मुझे वर्मा साहब के दर्शन का सौभाग्य मिला. उनके पी.ए. ने मुझे बधाई देते हुए सूचना दी, ''आप तकदीर वाले हैं. साहब के पास दम मारने को फुर्सत नहीं है. मैंने तो एक मंत्रीजी के निजी स्टाफ में भी काम किया है. इतने मिलने वाले तो वहां भी नहीं आते.'' वर्मा साहब अभी दो 'एक्सटेंशन' पाकर रिटायर हुए थे और उसी मंत्रालय में सलाहकार बन गये थे.

''कहिये.'' उन्होंने मुझे कुर्सी पर बैठने का इशारा किया.

''सर! मैं आपके मित्र सक्सेना जी का भतीजा हूं.'' उन्होंने 'हूं' कह कर गर्दन हिलायी. ''कैसे आये,'' उन्होंने जानना चाहा. ''आप तो सरकार के बारे में ज्ञान की खान हैं. अपनी दस साल की नौकरी हो गई है. सारे साथी प्रमोशन पा गये. वह भी जो दफ्तर में सिर्फ मक्खी मारते हैं. जाने क्यों मैं हर मौका चूक जाता हूं. सक्सेना ताऊजी ने कहा कि आपसे सलाह ली जाये,'' मैंने निजी रोना रोया. ''आप दफ्तर में मेहनत से काम करते हैं?'' वर्मा सर ने सवाल किया. मैंने हामी भरी. ''फिर आपका प्रमोशन क्यों हो! जाहिर है कि आप बिना पदोन्नति की स्थिति की स्थिति से संतुष्ट हैं. सरकार क्यों आप पर अधिक पैसा खर्च करे!'' उन्होंने हमें पाठ पढ़ाया. हमसे उनसे अपील की कि हमें इस अंधेरे से उबारें. वर्मा सर का अगला प्रश्न था, ''आप अपने साहब के यहां आते-जाते हैं?'' ''सर! रोज दस घंटे दफ्तर आने-जाने और काम करने में निकल जाते हैं. फिर घर के राशन-पानी और बच्चों की पढ़ाई में वक्त लग जाता है. मेहमानों की खातिर-तवज्जो अलग. दोस्त-रिश्तेदारों से महीनों मुलाकात नहीं होती. कैसे जायें साहब के घर.'' हमने अपनी विवशता बयान की.

'सर' ने निर्णय सुनाया कि हम उल्टी गंगा बहा रहे हैं. साहब को सलामी अनिवार्य है जबकि सरकारी काम ऐच्छिक है, ''आप पी-एच.डी. तकनीक प्रामेशन के लिये लगाइये.'' उन्होंने आदेश दिया. हमें अपने अज्ञान पर तरस आया. यहां एम.ए. के बाद सिर्फ बच्चों की पढ़ाई से ताल्लुक रहा है. और यह पी.एच.डी. की बात कर रहे हैं. वह भी किसी तकनीक की. मैंने याददाश्त पर जोर डाला कि इस पहेली का कोई हल निकले. पर इधर ''मैनेजमेंट' के इतने नये विदेशी शब्द चल निकले हैं कि अपने पल्ले कुछ नहीं पड़ा. ''सर! आपकी पैठ तो हर क्षेत्र में है. यह पी-एच.डी. तकनीक क्या बला है?'' मैंने झख मारकर घुटने टेक दिये. वर्मा सर ने ज्ञान दिया कि शोध और सेवा में मकड़ी और जाले, तोप और गोले अथवा सब्जी और झोले जैसा जन्म-जन्मांतर का साथ है. जो साहसी शोध की लादी अपने कंधे पर लादता है,

> उसूलों पर चलने का उपदेश देने वाले ही यदि चाकर धर्म निभाने से चूक जाएं तो बताइए भला उनका हश्र क्या होगा?

उसे सेवा का भार भी वहन करना पड़ता है. गुरु की चरणसेवा, उनके बच्चों की टाफी या रुचि के अनुसार मिठाई सेवा, गुरुआइन की आज्ञा पर छुटपुट बाजार-सेवा और शोध से पी-एच.डी. ऊंचाई पाने की अनिवार्य सीढ़ियां हैं. यों इसके बड़े फायदे हैं. मन में सेवा की भावना जगती है. मुल्क और सोसाइटी की खिदमत करने-कराने का रिहर्सल होता है. 'छड़ों' का पारिवारिक जीवन की जिम्मेदारियों में गृह-प्रवेश हो जाता है. ''उजड़ों' याने शादीशुदा लोगों की नियमित प्रैक्टिस होती है. इसीलिये पी-एच.डी. की डिग्री पाये व्यक्ति सफल, कामकाजी और उपयोगी पति साबित होते हैं. ''मैं इसी पी-एच.डी. तकनीक का जिक्र कर रहा था. आप भी इसे अपनाइये.'' सर ने अपनी वार्ता समाप्त की.

''आप किसकी नौकरी करते हैं?'' उन्होंने यकायक पूछा. ''भारत सरकार की.'' मैंने हड़बड़ाकर उत्तर दिया. ''गांठ की अक्ल गंवा कर आप नौकरी में आये थे.'' वह गुस्सा हुये. फिर उन्होंने मुझे समझाया कि वह सिर्फ अपने मित्र सक्सेना का लिहाजा कर अपना कीमती वक्त जाया कर रहे हैं. सरकार एक सागर है. इसमें मगरमच्छ रहते हैं, छोटी-मोटी मछलियां भी और विभिन्न कीड़े-मकोड़े भी. समुंदर-वासी को अपनी हैसियत पहचाननी चाहिए. कि आप सरकार हैं. यह भ्रम आप जनता में उत्पन्न कीजिये. जहां तक दफ्तर का सवाल है, आप अफसर के प्रति चाकर भाव रखें. आपने सुना नहीं है कि पानी में रहकर मगर से बैर नहीं करते.'' उन्होंने गुरु ज्ञान आगे बढ़ाया.

''सर! चाकर भाव क्या होता है.'' मैंने गुस्ताखी की. उन्होंने मुझे घूरा और शायद 'गैर-आउट' कर देते कि दरवाजे पर आहट हुई. एक सज्जन, एक अदद पैकट जुड़े हाथों के बीच दबाये, श्रद्धावश आये झुके दाखिल हुये. मुझे सोफे पर शरण लेने का इशारा करते सर ने ''आओ शुक्ला! क्या हाल है.'' कहते हुए आगंतुक का [illegible] किया.

''आपकी कृपा है.'' उत्तर आया. पैकेट मेज पर रखकर वह शुक्ला नामक व्यक्ति 'सर' की मेज के नीचे लपका और अंतर्धान हो गया. जब वह उजागर हुआ तो सर क हाथ सभय और आशीर्वाद की मुद्रा में उठे हुए थे. ''सर! आपके दर्शन पा, चरणस्पर्श कर पुण्य कमाने का लोभ मैं संवरण नहीं कर पाया, ''मेज के नीचे से उभरते शुक्ला बोले. ''इसकी क्या जरूरत थी.'' सर का स्वर गूंजा. वार्ता का विषय मेज पर पड़ा पैकेट था. ''इस मंदिर में खाली हाथ कैसे आता.'' शुक्ला भक्त ने माला जपी. मैं वर्मा सर की दिव्यता का सोचने लगा. जब सलाहकार होने पर यह हाल है तो सचिव रहने पर तो इनका पूरा

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यक्तित्व ही देवत्व से ओतप्रोत रहा होगा. इतने में शुक्ला-साक्षात्कार समाप्त कर सर ने 'आते रहा करो' का आमंत्रण दिया. भक्त शुक्ला ने अपने लायक 'सेवा' जानी चाही और वह 'सर' को बिना पीठ दिखाये आधे झुके सरकते हुये दरवाजे से बाहर हो लिए.

मैं फिर सोफे से उनकी मेज के सामने वाली कुर्सी पर 'प्रमोट' हो गया. ''ऐसा होता है सफल सरकारी नौकर. हाल-फिलहाल तो छोटी मछली है. जरूर एक दिन मगर बनेगा.'' सर ने शुक्ला की तारीफ की.' ''मैं समझा नहीं सर!'' मैंने सच बोला. वर्मा सर के चेहरे पर झुंझलाहट के भाव आये. उन्होंने धैर्य से काम लेकर मुझे समझाया कि शुक्ला अभी अंडर-सैक्रेट्री हैं. अपनी काबलियत से अवश्य सैक्रेट्री बनेगा. ''उनके आने के पहले आप कोई शंका प्रगट कर रहे थे?'' वर्मा सर ने शुक्ला-प्रकरण समाप्त किया. मैंने उनकी स्मृति को सराहा और चाकर भाव के विषय में जिज्ञासा प्रगट की.

उन्होंने तत्काल मेरी क्लास शुरू कर दी, ''अभी आपने शुक्ला को देखा. उसका आचार-व्यवहार कितना मधुर है, [illegible] मिठाई के आता नहीं है. घर पर अचार अलग-दे जाता है. पैर छूकर बड़ों का आदर करता है. सही मायने में शुक्ला चाकर भाव का आदर्श उदाहरण है और आप सरकारी नौकर कैसा नहीं होना चाहिए इसके साक्षात प्रमाण हैं.'' अपने बारे में उनकी गिरी राय से मैं सहम गया. वह मुस्कराये, ''आप घंटे भर से मेरा सिर खा रहे हैं. शुक्ला आया, मिठाई दी और चला गया. आप हैं कि बस जम गये हैं!'' — मेरी उड़ी रंगत को देखकर [illegible] उन्होंने प्रमोशन-पाठ्यक्रम को आगे बढ़ाया.

सरकारी दफ्तरों में 'नाकर' स्थाई स्थिति है. इस उसूल के पालन से कर्मचारियों और अधिकारियों की मानसिक और शारीरिक सेहत चुस्त-दुरूस्त रहती है. कार्यालय के खुशनुमा मुगल गार्डन में लोग अनवरत टहलते-घूमते रहते हैं. 'नाकर' का सीधा-सादा अर्थ है, कुछ न कर. पर 'नाकर' के दर्शन में चाकर भाव का सम्मिलन उपयोगी सिद्ध होता है. ऐसे गाहे-बगाहे जैसे संसद के अधिवेशन के दौरान या महत्वपूर्ण व्यक्तियों के पत्रोत्तर में 'नाकर' की नींद में खोये कुंभकर्ण को 'साकर' का सहारा लेना पड़ जाता है.

वर्मा सर के अनुसार 'साकर' शब्द में उनके ज्ञान और अनुभव का निचोड़ निहित है. जो स्थान हिंदी फिल्मों में 'हिंसा' और [illegible], वही सरकार में 'यस' और 'सर' का. 'साकर' का अर्थ है, अपने से बड़े कुर्सीधारी को 'सर' करना'. इसके मूल में यह विचार है कि 'वह कर जो सर कहें.' साकर दृष्टिकोण वाला व्यक्ति अपने अधिकारी से सिर्फ ''यस सर'' कहेगा. कभी-कभी इस चक्कर में काम भी करना पड़ जाता है. पर उसके भी लाभ हैं. साकर-पंथी सरकारी खर्चे पर देशाटन करते हैं. अच्छी 'रिपोर्ट' पाते हैं. दूसरों को लांघकर प्रमोशन कमाते हैं. वर्मा सर के अनुसार 'चाकर', 'नाकर' और 'साकर' पंथ ही प्रमोशन की मंजिल तक ले जाते हैं. किसका कब कहां और कैसे इस्तेमाल करें, यह अनुभव की परिपक्वता पर निर्भर है. इसीलिये सरकार में पदोन्नति वरीयता अर्थात् उम्र की धूप में बाल पकाने पर होती है.

मैं जब वर्मा सर के सत्संग से लौटा तो मुझे अपने निरे मूर्ख होने कर प्रबल एहसास हो चुका था. उनकी राय मानकर मैंने दफ्तर के समय में घर का रसद-सामान साग-सब्जी लाना शुरू कर दिया. साथ ही अपने सैक्शन अफसर का भी. शुरू-शुरू में थोड़ी आत्मग्लानि हुई. फिर धीरे-धीरे अपनी जिंदगी 'नाकर' दर्शन के ढर्रे पर आ गयी. अब मैं जब भी ''साकर'' दृष्टिकोण अपनाता तो अनुभाग-अधिकारी गदगद हो धन्यवाद देते. वर्ना पहले अपनी कार्यकुशलता पर कोई ध्यान नहीं देता था.

मैं स्वयं जाकर वर्मा सर के प्रति आभार प्रकट करने का सोचा. उन्हीं के उपदेश और प्रवचन से अपने जीवन में 'नाकर' क्रांति आयी थी. मैंने एक ठेकेदार से मिठाई को डिब्बा मंगवाया. उनसे दफ्तर में मुलाकात का समय लिया. वहां पहुंचा तो पी.ए. गायब थे. न कोई भीड़भड़ थी न पुरानी टीम-टाम. कमरे के सामने स्टूल पर बैठे बीड़ी पीते चपरासी का न होना काली बिल्ली के रास्ता काटने ऐसा अपशकुन था. हम श्रीमान् अर्जुन सिंह होते तो शर्तिया इसकी कोई काट करते पर वह न होने के कारण हमने कमरे के अंदर झांका. 'सर' को अकेला पाकर हम शुक्ला स्टाइल में मिठाई थामे और आधे झुके कमरे में प्रविष्ट हुए. पर मेज के नीचे झुक चरणस्पर्श न कर पाये. वर्मा सर उठ चुके थे..हमने मिठाई का डिब्बा उन्हें भेंट किया. वह डिब्बा लेकर बिना कुछ बोले बाहर चले गये.

मैं फिर पी.ए. के पास गया. वह मौजूद था. ''साहब आज जल्दी चले गये.'' मैंने जानना चाहा. ''जल्दी, देरी क्या. अब हमेशा के लिये चले गये.'' उसने प्रफुल्लित स्वर में सूचित किया. ''क्यों?'' मैंने प्रश्न किया. ''सुना है, मंत्री जी से खट-पट हो गई'', वह बोला. मुझे लगा कि देश की यही सबसे बड़ी दिक्कत है. बड़े लोगों की कथनी और करनी में कितना अंतर है. उसूल सब झाड़ते हैं, कोई उन पर अमल नहीं करता. मुझे सर ने लैक्चर दिया और स्वयं चाकर धर्म न निभाने से चल बसे. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'अयार्थ' जैसे उपन्यास और 'पहचान' जैसे कहानी-संग्रह की चर्चित लेखिका.
संपर्क: डी-38, प्रेस एन्क्लेव, साकेत नई दिल्ली-17

कमल कुमार

आखेट

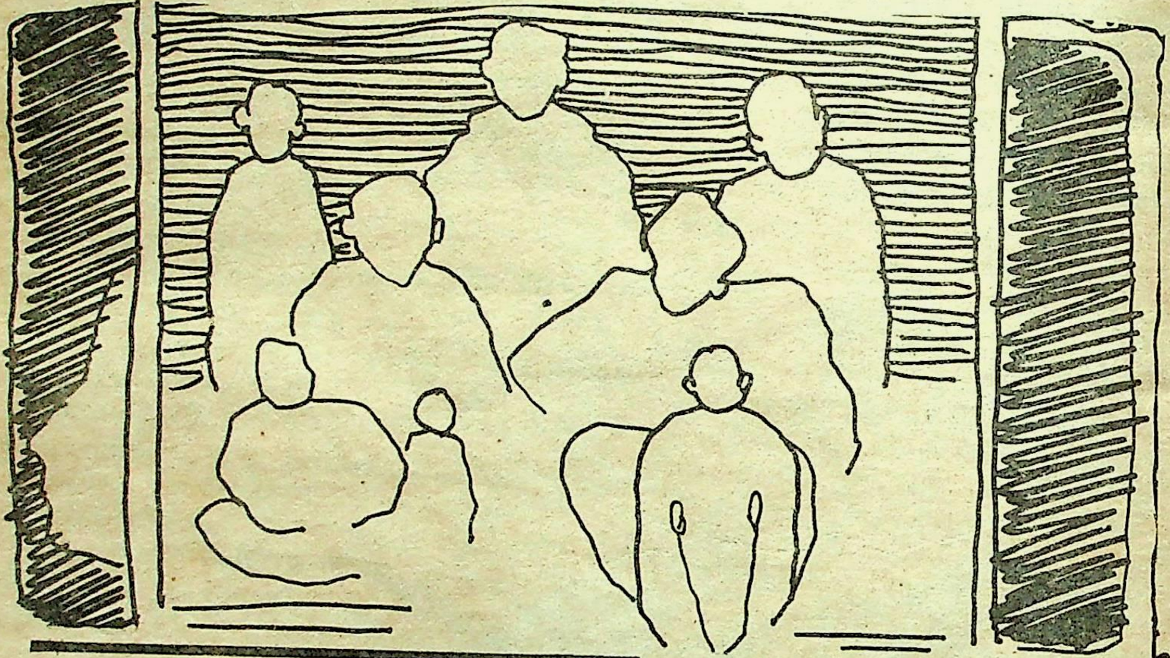

जिंदगी की पहेली भी सुलझा सका है भला कोई! आदमी सोचता कुछ है और होता कुछ और ही है... जैसे वह कोई शिकार हो और हालात शिकारी...

दो हजार के एरियर निकले थे. इतनी बड़ी रकम हाथ में लेते छाती धड़की... ज़रा-सी उंगलियां भी थरथरायीं... फिर झट से लिफाफा उसने जेब में ठूंस लिया. तनख्वाह अलग थी. वह सोच में डूबा रहा... क्या सारे रुपये एक साथ लेकर बस के भीड़-भड़ाके में जाना ठीक रहेगा... अगर कहीं भगवान न करे... जेब कट गयी... उसने अपनी जीभ काट ली... क्यों ऐसी अशुभ बात उसके मन में आयी. सोचा उसने, 'तनख्वाह के पैसे कल ले जाऊंगा... आज यहीं दफ्तर में छोड़ता जाऊं... पर एक साथ तीन हज़ार रूपये पास होने का नशा-सा छाया... जिसे वह तोड़ना नहीं चाहता था. उसने दोनों लिफाफे दो अलग अलग जेबों में रखे—और बटन बंद कर लिये... कुछ छुटटा हाथ में ही रहने दिया... बस के भाड़े के वास्ते. फिर उसने निश्चय बदला वह आज बस से नहीं जायेगा... वह स्कूटर से जायेगा. अगर कहीं स्कूटर वाला ही चाकू के नोक पर...छीः! क्या सोचने लगा वह! लेकिन यह तो महानगर है—ऐसी घटनाएं कोई अनहोनी तो नहीं... रोजमर्रा की बात है. स्कूटर से घर तक चार रुपये लेंगे... बेकार. वह आधा रास्ता पैदल चलेगा... आधे में स्कूटर लेकर घर पहुंचेगा. नहीं, वह यहां स्कूटर लेकर मंडी तक जायेगा, वहां पैदल घर. नाहक पत्नी स्कूटर से जाने पर सौ तरह के सवाल पूछेगी.... रुपयों की हवा से ही उसके नथुने फड़कने लगते हैं.

घर पहुंचकर वह अधिक से अधिक सामान्य दीखने की कोशिश करने लगा था. हमेशा की तरह तनख्वाह के आधे पैसे पत्नी को थमाये घर के खर्चे के लिए.... आधे मकान की किश्त, बिजली पानी के बिल, बच्चों की फीस व अपने जेब खर्च के लिए अपने पास रख लिए. दूसरा लिफाफा बड़ी संभालकर अपने ट्रंक में अखबार के नीचे खिसका दिया. अभी इसे कुछ भी बताने की जरूरत नहीं. पैसों को सूंघते ही शुरू हो जायेगी... चूल्हे चौके की जरूरत से दरी विस्तार तक की जरूरतों के लिए... बसों में सफर करना लानत है. उसने पहले ही फैसला कर लिया था अब की वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने लिए स्कूटर खरीदेगा... कई पुराने स्कूटर देख भी चुका था. जब से उसे पता चला था, एरियर मिलने वाला है, कई दोस्तों को भी कह रखा था. गुप्ता के पास वह अभी जायेगा... सौदा घट गया तो ले लेगा... देखने चलने में स्कूटर ठीक लगा था. बाकी मैकेनिक को दिखायेगा... रोज की चक-चक से छुट्टी. वक्त बरबाद करो... और अब तो पैसा भी बर्बाद करो. बसों में जाना कौन-सा सस्ता रहा अब. एक रूपये से कम का टिकट ही नहीं. कोई कब तक इंतजार करे चालीस पैसे वाली बस का. आ भी जाये तो कुत्ते-बिल्लियों की तरह ऐसे झपटते हैं... न दायें देखते हैं न बायें... धक्का-मुक्की कर-कराके उतरो तो हुलिया ऐसा जैसे कोई कब्र से उठकर आ रहे हों. स्कूटर ही लेगा वह.

वह धोती के पल्लू से गर्दन पोंछती आ गयी थी.

''इस पंखे की तो हवा ही नहीं लगती जी... ज्वा तक हवा छुए... इसकी गर्दन दूसरी तरफ मुड़ जाती है. कब से स्विच खराब हुआ पड़ा है... ठीक कराओ भी तो फिर खराब हो जाता है... इस बार छत्त का पंखा ही ले लो.''

''कूलर न ले लें.'' उसके भीतर हुमक उठी.

''हाय जी... मेरे जी की बात की आपने... देखो तो कितनों के कूलर लगवा लिये... तुम्हारे ही तो दफ्तर में काम करते हैं वे भी. वे घर भी तो ऐसे ही हैं... जैसे जानवरों के लिए बाड़ा. न कोई आंगन... न अगाड़ा, न पिछवाड़ा... दो कमरे बिल्ला-बित्ता भर के. इसमें तो अपना गांव सौ अच्छा था. हवा पानी को तो नहीं तरसना पड़ता था. सूखा मिस्सा अन्न भी मिलता ही था. साक-सब्जी घर की होती थी. नाहक खेती छोड़... नौकरी में पड़ गये...''

''बस-बस... बहुत बड़-बड़ न कर. सिर पर छत्त है न. शुक्र कर भगवान का. कभी घर से बाहर निकलकर देख तो आटे दाल का भाव मालूम पड़े... इसका ही किराया अब पांच सौ से कम नहीं है. तुझे गांव जाना है तो जा. बच्चों की पढ़ाई लिखाई का भी सोचा है या तेरे बाप-दादों की तरह मुह-सवेरे से शाम तक हल्लारे हर्रा चिल्लाते ढोर की तरह जिंदगी ढोते रहते... कभी सूखा... कभी बाढ़... भुखमरी. यहां शहर में कंछ पढ़ लिख जायेंगे तो आदमी बन जायेंगे.... जाहिल कहीं की.''

''मैं तो जी बस यूं ही कह रही थी कि कूलर लग जाता तो सारा घर ठंडा हो जाता... छोटा बार-बार हड़बड़ा कर उठता है. भटटी सा तपता है दोपहर में घर. पाती [illegible] फूलने लगता है—घर प्यास ही नहीं बुझती.''

बात उसकी ठीक थी. कूलर खरीदने की बात सोची थी... पर फिर लगा जैसे तैसे एक डेढ़ महीने की गर्मी और रह गयी... उसके लिए दो हजार रूपये काठ मार लो कोई अक्लमंदी नहीं. बरसात आते ही बेकार हो जायेगा. सारा साल यूं ही पड़ा रहेगा.

उसने धोती उतारकर पलंग पर रख दी थी. दोनों हाथ पीठ के पीछे ले जाकर ब्लाउज के बटन खोलती जा रही थी. उसने देखा उसकी बगलों में दोनों तरफ मांस की थैलियां सी लटक गयी थीं. छोटे के जन्म के बाद वह थुलथुला गयी थी. बार-बार हाथ जाता पर जोर नहीं पड़ता था. ब्लाउज पसीने से बदन से चिपका पड़ा था.

''लाओ खोल दूं.'' तुम आगे बटन वाला ब्लाउज पहना करो न.''

''हां - तो - आजकल आगे बटन वाले ही सिलती हूं.. यह तो पुराना वाला है—सोचा घर में चला दूं.''

''रुको इसे भी खोलता हूं... जरा सांस लो,'' उसकी अंगिया धुल-धुल कर पीली हो गयी थी—मोटे कपड़े की घर की सिली गंधती अंगिया, हाथ से पकड़ते ही उबकाई सी महसूस हुई. बाजार में आते-जाते रंग-बिरंगी जालीदार लटकी अंगियों को देखकर कई बार उसका मन हुआ वह उसके लिए खरीद ले चलें. पर यही सोचकर रुक जाता था कि वह तो अच्छे-बनियान से लेकर कमीज-पैंट-ब्लाउज सब घर पर ही सिलती है. ये भी गया तो रूआब झाड़ेगी...'' बरबाद कर दिए छह रुपये! इतने में तो चंदर की कमीज का कपड़ा आ जाता!''

''तुम बाजार से क्यों नहीं ले आती सिली-सिलाई...''

''हां, अब की लाऊंगी... पटरी बाजार लगेगा वृहस्पति को. अब तो घर में सिलने का भी फायदा नहीं रहा. यू भी वक्त नहीं मिलता. छोटा कुछ करने ही नहीं देता...''

उसकी छाती में पहले सा कसाव अब नहीं रहा था. पर छोटे के दूध पीने से भरी होने के कारण... तनी रहती... उसने चोंचूं उंगली से मसल दिये... वह चिहुकी.

''क्यों—अच्छा लगता है न!''

''हिश...'' उसने उंगली होंठों पर रखी तो नाक में मिटटी के तेल का भभका पड़ा.

''तुमने हाथ क्यों नहीं धोये! देखों कैसे गंधा रहे हैं मिटटी के तेल से.''

''तो क्या करूं जी, स्टोव की बत्तियां उकसा-उकसाकर थक जाती हूं. दूसरा है, उसका वाशर ठीक कराओ तो पंप खराब, पंप ठीक कराओ तो बर्नर खराब... अब की तो बस तुम गैस का चूल्हा ला दो....''

औरत ललसाई होती है... तो पिघलती है.

''सच, ला दोगे न!'' वह अपनी उंगलियां उसकी उंगलियों में फंसाकर उसके गले से झूल गयी... उंगलियों के नाखून पिस गये थे... हथेलियां खुरदरी थीं... रेगमार्क सी... कैसी मख्मली सी देह थी इसकी जब ब्याह कर आयी थी. लहकती, फूलों लदी डाल सी. और अब... जी भर आया उसका... कितना खटती है... बेचारी दिन-रात इस गृहस्थी के लिए. हो न हो, इस बार वह गैस का चूल्हा ही ला देगा. कई दिनों तक बाजार में दुकानों पर डौलता रहा... तरह-तरह के चूल्हे देखे बदले जमाने के मुताबिक नयी तरह के.... अरामदायक. खट से स्विच घुमाया... दिया सलाई दिखते ही गैस की अंगीठी तैयार... जो चाहे पकाओ.... न धुआं न कोयले से हाथ-मुंह काले. जरूर ला देगा वह.

पप्पू रोता कलपता भीतर घुसा तो उसने बढ़कर दो-चार थप्पड़ और जड़ दिये... बीच में पड़कर किसी तरह पप्पू को छुड़ाया... लेकिन उसका गुस्सा कम ही नहीं हो रहा था.

''इस मुए को कितनी बार कहा न जाया कर लोगों के घर में. फिल्म देखने... लेकिन यह मानता ही नहीं. अगर फिल्म नहीं देखेगा तो क्या मर जायेगा! दूसरों के यच्हां जाकर अपनी बेइज्जती करवाता है. अब जाना तू बहां... तेरी टांगें न तोड़ी तो!''

वह दांत पीसती अंदर चली गयी थी. पप्पू को प्यार से बहलाता रहा. व सुबक रहा था... ''पापा, हमें भी टी.वी. ला दो... हम भी फिल्म देखेंगें.'' पप्पू की मासूम आवाज भीतर तक कोंध गयी. ठीक हो तो कहता है पप्पू... सभी के घर में टी.वी. है. वह भी टी.वी. ला देगा. बच्चों का मन बहलेगा... पत्नी भी फुरसत में आराम से बैठकर फिल्म देखेगी. वह जानता था, उसे फिल्म देखने का कितना शौक है... फिल्म की कहो तो सारे काम छोड़कर तैयार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो जायेगी. लेकिन अपनी नाक [illegible] नहीं जाती. टी.वी. ही ला देगा.

कई दिनों तक वह दूकानों पर तरह-तरह के टी.वी. देखता रहा... कीमतें पूछता. कीमतों तक एक-दूसरे से मिलान करता रहा. अलग-अलग कंपनियों के टी.वी. के गुण-दोषों पर चर्चा करता रहा. गोया के चार-छह रोज में ही सभी तरह के टी.वी. सेट से पूरी तरह वाकिफ हो गया था... एक निपुण सैलसमैन की तरह. घंटों बात कर सकता था. फिर उसने सोचा था, बेकार टी.वी. खरीदना. आंखों को नुकसान पहुंचता है. बच्चों की पढ़ाई का हर्जा होगा वह अलग. कचरा फिल्में देखकर बच्चों पर जो बुरा प्रभाव पड़ेगा वह अलग. पहले ही चंदर हाथ से निकला जा रहा है... कालेज जाने के नाम पर आवारागर्दी. इन फिल्मों ने तो देश पर बेड़ागर्क कर दिया... वह हमेशा सोचता. अब घर में टी.वी. लाकर इन्हीं गैरत फिल्मों को बच्चों को देखने दें...

उसे पहाड़ देखने का कितना शौक है. ऊंचे-ऊंचे बर्फ से लदे पहाड़ों की कल्पना ही उसके दिलो-दिमाग को हिलोर देती है. पूजाघर में रखी भगवान शिव-पार्वती की तस्वीर के पीछे दिखने वाले पहाड़ों को देख... कैसा-कैसा होने लगता है उसका जी... अमरनाथ जाने की कितनी लालसा है उसके दिल में. वैसे भी सभी भले लोग-गर्मी गुज़ारने या सर्दी में बर्फ देखने झट से पहाड़ों पर पहुंच जाते हैं... खाते-पीते हैं-घूमते हैं... आराम फरमाते हैं... फिर लौटकर वहां के किस्से सुनाते हैं. ज़िंदगी में अनुभव...और अनुभवों की यादें कितनी महत्वपूर्ण होती है. आदमी का सब कुछ चूक जाता है तो भी ये यादें ही तो साथ रहती हैं. यहां सा...ला...घर से दफ्तर और दफ्तर से घर और घर से फिर दफ्तर.... बस! ज़िंदगी में इसके सिवा और कुछ है ही नहीं. अब की बार शिमले ही चला जाये. पर पत्नी का राजी होना आसान नहीं था. वह तो घर से बाहर एक प्याला काफी तक का नहीं पीती. ''इतने पैसों में तो पूरी शीशी आयेगी काफी की... पूरा महीना चलेगी.'' उसे कैसे समझाया जाये कि रेस्तरां में पैसे सिर्फ काफी के नहीं होते... उस वातावरण के होते हैं... जिसमें आदमी दो पल बैठकर सुकून पाता है... पर उसके दिमाग में कितना ठोको, ये बात नहीं आयेगी. उसकी दलीलें ऊकाट्य होती हैं. वह कोशिश करेगा... फिर ध्यान आया, जायेगा. तो वहां पहनेगा क्या... ! कब से वही दो स्वेटर, एक पूरी बांह और एक बांह बगैर, चले आ रहे हैं... वही पुराना कोट... यहां तो जैसे-तैसे चल जाता है—पर वहां तो ठंड भी काफी होगी. और वह... उस बेचारी का तो पूछो ही नहीं. ''मैंने कौन-सा दफ्तर जाना है,'' कहकर अपनी जरूरतों को टालती चली जाती है... वह तो चला भी लें... उन्हीं से... लेकिन उसे तो गर्म जरूर कुछ चाहिए ही... और बच्चे... स्कूल यूनीफार्म के अलावा तो ढंग का एक भी कपड़ा नहीं. हफ्ते दस दिन में कितना पैसा फुक जावेगा... घर से बाहर तो सांस लेने को भी पैसा चाहिए... हालत फिर वहीं फंक की फंक.

न मन का खाया.. न मन का पहना.. वह जरूरत अपने और पत्नी के लिए नये कपड़े सिलवायेगा... घर, बच्चों के खर्चे, और दुनियादारी के बाद अपने तक तो बात पहुंचती ही नहीं... जिंदगी का पहनने, ओढ़ने, खाने का वक्त तो यूं ही मारा मारी में निकला जा रहा था... वह रोज बाजार में दूकानों पर कांच की बड़ी-बड़ी अलमारियों के सामने खड़ा होकर तरह-तरह के नये-नये डिजाइनों के कपड़े देखता... कितना क्रांतिकारी परिवर्तन आया [illegible] और नये फैशन के कपड़े बनने लगे हैं... अपने मुल्क में... ये तो किसी भी बाहरी देश के कपड़ों के मुकाबले उन्नीस नहीं हैं. हां, कीमतें जरा ज्यादा जरूर हैं पर चीज तो अच्छी है... फिर अपने ही देश में बनी... कपड़े ही तो व्यक्तिगत का निर्धारण और व्यक्ति की हैसियत की पहचान कराते हैं... उस दिन, घर पर साहब... बनियान और जांघिये में कैसे चुगद दिख रहे थे... कोई सोच सकता है ये वही साहब है—जिन्हें दफ्तर में देख-सुनकर ही लोगों की हवा खुश्क हो जाती है.

चंदर अंदर आया तो मंद-मंद मुस्करा रहा था. उसे देखते ही पत्नी का पारा चढ़ जाता था. उसे उसकी हरकतें कतई पसंद नहीं थी. तंग मोहरी की बदन से सटी पैंट, छाती के बटन खुले, गर्दन तक लहराते बाल, गले में बंधा रंगीन रूमाल और सिगरेट का धुंआ उड़ाता वह जब तब मां और भाइयों पर रूआब डालता-झगड़ता. कुछ भी कहने पर या तो कोई फरमाइश पूरी न होने पर तपाक से बंदूक दागता. ''जब हमारी जरूरतें पूरी नहीं कर सकते थे. तो पैदा क्यों किया?''... वह अपनी धोती का पल्लू मुंह में ठूंस कर घंटों सिसकती थी. ''अब कोई इस कोख से जने बेटे को बताये कि पैदा क्यों किया था. इसी दिन के लिए इसे पालपोसकर बड़ा किया था! अवपना तन मन काटकर कालेज में दाखिल किया था कि पढ़-लिखकर कुछ बनेगा... पर यह तो जोंक की तरह हमारा ही खून चूसने पर आमदा रहता है. नित नयी फरमाइश... कभी नये जमाने के जूते.. कभी कमीज... कभी पैंट... कभी सिनेमा... कभी होटल. जब घर के लोगों की जरूरतें तक पूरी नहीं होतीं तो इसे ये सब बातें सूझती हैं... कोई भी फरमाइश पूरी न होने पर वह गुर्राता... बार बार पैदा किये जाने की जुर्म की सजा सुनाता... फिर पैर पटकता हुआ घर से निकल जाता... उसे न बाप का डर था न मां की शर्म और न भाई बहिनों का लिहाज...

उस दिन वह घर पर आया तो उसके चेहरे पर एक कुटिल मुस्कान थी. उसके हाथ में एक बड़ा-सा पैकेट था जिसे खोलने व रस्सी काटने के लिए मां से कैंची मांग रहा था... उसने पैकेट खोला... रिकार्ड प्लेयर का स्विच लगाया. कोई अंग्रेजी नंबर था... वह और उसके हाथ आये दोनों उसकी धुन पर नाचने लगे...टांगे...बाहें... कूल्हे... हिला-हिलाकर. आवाज से पप्पू व छोटू भी कमरे में आ गये—जिन्हें उसने डांटकर भगा दिया था... गाने की रिद्म पर उनके अंग-अंग थिरक रहे थे. वह अंदर आया तो उसने एक पर्चा उसने हाथों में थमा दिया और बोला, ''आपको दो हजार के ऐरियर मिले—हफ्ते से ज्याद हो गया—हवा तक नहीं लगायी पैसों को! ये रिकार्ड प्लेयर खरीदा है—''गुप्ता एलेक्ट्रानिक से—इसका बिल चुका देना...आज ही... '' कहकर वे फिर थिरकने लगे थे. □

चलते-चलते

क्या आप किसी को पहली नजर देखकर ही प्यार करने लगी थीं?'' किसी ने एक अभिनेत्री से पूछा.

''बेशक!'' अभिनेत्री ने कहा, ''और ऐसा सुअवसर मेरे जीवन में केवल एक ही बार आया था.... जब मैंने पहली बार खुद को आइने में देखा था.'' □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रहसन

महाराज कृष्ण काव

पंडित जी आ गये

> कितने हीले-हवाले करके तो विमला जी ने सहेली को राजी किया था... उन्हें क्या पता था कि पंडित जी के बताये ग्रहों की मार से भी ठीक उसी रोज बचा जा सकता है... हंसते-हंसाते अच्छी-खासी जिंदगी का हुलिया बदलती 'प्रहसन' की दूसरी किस्त-

कमला: फिर क्या फैसला हुआ, विमला?

विमला: किस बात का कमला?

कमला: अरे वही जो मैंने पहले पूछा था. तुम मेरे घर किस दिन खाना खाने आओगी?

विमला: छोड़ो भी. खाने के बगैर क्या अपनापन कम हो जाता है?

कमला: यही कहकर तुम पहले भी मुझे टाल चुकी हो. अबकी मैं नहीं मानूंगी.

विमला: टालती थोड़े ही हूं. हम तो इतनी अच्छी दोस्त हैं.

कमला: यह एकतरफा दोस्ती क्या हुई? मैं तुम्हारे पास कई बार खाना खा आयी हूं. तुम कभी नहीं आयीं.

विमला: नहीं, ऐसा तो नहीं. एक बार तो आयी थी.

कमला: हां, हां, छह महीने पहले. वह तो अब तक पच गया होगा.

विमला: अच्छा बाबा, आ जाऊंगी. बताओ, कब आना होगा?

कमला: नेक काम में देर क्यों? इसी हफ्ते में आ जाओ ना.

विमला: इसी हफ्ते?

कमला: हां, हां, इसी हफ्ते. फिर मैं मैके जा रही हूं, एक महीने के लिए.

विमला: चलो, इसी हफ्ते सही.

कमला: कल के बारे में क्या खयाल है?

विमला: कल? कल क्या वार है?

कमला: मंगलवार.

विमला: ओफ्फोह! मंगलवार है? तब तो भई मुश्किल होगी. मेरा मंगलवार को व्रत होता है.

कमला: काहे का व्रत है?

विमला: वह क्या है कि विक्रम के मंगल पर राहू की दृष्टि है.

कमला: अच्छा?

विमला: हां. पंडितजी ने कहा है कि विक्रम की सेहत को खतरा है.

कमला: तो फिर?

विमला: फिर क्या? मैंने पंडितजी से उपाय पूछा.

कमला: क्या बोला पंडित?

विमला: बोले एक ही उपाय है. विक्रम को हर मंगलवार को व्रत रखना होगा.

[illegible]: चलो, यह तो उसने कह दिया. लेकिन तुम कहां से बीच में टपक पड़ीं?

विमला: भई, क्या है कि विक्रम तो बहुत बिजी रहते हैं ना? दफ्तर जाते हैं, पार्टियों में जाते हैं, दौरे पर जाते हैं. तो उनके लिए व्रत रखना मुश्किल था. इसलिए मैंने रख लिया.

कमला: पंडित ने इसकी इजाजत दे दी?

विमला: हां, दे दी. थोड़ी दक्षिणा बढ़ाकर देनी पड़ी.

कमला: यह नहीं सोचा तुमने कि ग्रह विक्रम के खराब हैं तो तुम्हारे मंगलवार के व्रत से उसका ग्रह कैसे शांत होगा?

विमला: तुम नहीं समझोगी.

कमला: क्या?

विमला: ये पुरानी रिवायती बातें हैं हमारे घर में यह रिवाज कई पीढ़ियों से चला आ रहा है. इसीलिए मैं मानती हूं. तुम नये फैशन की हो, नहीं समझोगी.

कमला: अच्छा भई मैं तो मूर्ख हूं. नही समझूंगी. तो फिर बुधवार को आ जाओ.

विमला: बुधवार को क्या तारीख है?

कमला: सत्ताईस है ना?

विमला: सत्ताईस तारीख है? फिर तो मैं आ जाऊंगी. कितने बजे आऊं?

कमला: यही कोई ग्यारह बजे आ जाना. बैठेंगे, गप्पें मारेंगे, फिर खाना भी खा लेंगे.

विमला: ओफ्फोह! सत्ताईस तारीख है? उस दिन तो भई मैं नहीं आ सकूंगी.

कमला: अब क्या हुआ?

विमला: मैं एक मिनट के लिए भूल गयी थी. उस दिन मैं खून देने अस्पताल जा रही हूं.

कमला: खून देने क्यों? वैसे ही शौकिया?

विमला: नहीं नहीं, शौकिया क्यों देने लगी? मेरे पास कौन-सा फालतू है देने के लिए!

कमला: तो फिर क्या वजह है?

विमला: विक्रम के पेट में अलसर हो गया था. एक-दो बार खून भी आया. मैं तो घबड़ा ही गयी थी.

कमला: डाक्टरों ने क्या कहा?

विमला: उन्होंने कहा सिगरेट छोड़ दो, शराब छोड़ दो, मीट छोड़ दो. मगर यह मानें तब ना?

कमला: नहीं छोड़ा विक्रम ने कुछ भी?

विमला: नहीं, ऐसा तो नहीं है. कुछ दिन के लिए छोड़ा था. मगर क्या है कि उनकी विलपॉवर कमजोर है. वह ज्यादा देर तक किसी बात पर ठहर नहीं पाते. फिर शुरू कर दी.

कमला: फिर क्या किया तुमने?

विमला: करना क्या था? मैंने पंडितजी से मश्वरा किया. बोले, मुझे साल में दो-तीन बार रक्तदान करना चाहिए. इससे विक्रम की समस्या हल हो जायेगी.

कमला: तो सत्ताईस को तुम खून देने जा रही हो?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विमला : हां, और उसके बाद ज्यादा हिलना-डुलना ठीक नहीं. आराम करना होता है.
कमला : तो सत्ताईस को भी तुम नहीं आ सकती? फिर उसके अगले दिन?
विमला : अगले दिन? यानि ब्रहस्पतिवार को? मुझे तो कोई एतराज़ नहीं है. मगर तुम सोच लो. ब्रहस्पतिवार को मैं पूरी तरह शाकाहारी हूं.
कमला : क्यों उस दिन क्या है?
विमला : अब तुमसे क्या छिपाना? पिछले छह माह से मैं बाबा को मानने लगी हूं. यहां पड़ोस में ही ब्रहस्पतिवार का भजन होता है. कहते हैं कि बाबा के भक्त उस दिन मीट नहीं खाते. इसलिए मैंने भी छोड़ दिया.
कमला : फिर तो वह दिन रहने दो. साल में एक बार तो तुम्हें यहां आना है. उस दिन भी शाक-सब्जी देकर रवाना करूं, यह मुझसे नहीं होगा.

विमला : तो फिर शुक्रवार का रहा.
कमला : ठीक है.
विमला : एक सेकिंड, मैं ज़रा कैलेंडर देख लूं. कहीं उस दिन अष्टमी तो नहीं? भई कमला, आई एम सॉरी. शुक्रवार को तो अष्टमी है.
कमला : तो?
विमला : तो यह कि उस दिन मेरा व्रत है.
कमला : फिर व्रत है? अब किस बात का है?
विमला : अष्टमी का व्रत किसी खास वजह से नहीं होता. वह तो पंडितजी ने कहा है ताकि परिवार के सब लोग राजी खुशी रहें.
कमला : तुम और तुम्हारे पंडितजी!
विमला : अरे, पंडितजी की इसमें क्या गलती है? वह बेचारे ये सारे उपाय हमारे लिए ही तो बताते हैं?
कमला : वाकई? विमला मुझे तुम पर दया आती है.
विमला : अच्छा, यह सब छोड़ो.
कमला : हां, छोड़ दिया. फिर शनिवार का पक्का रहा.
विमला : शनिवार? भई, अब तुम हंसोगी. शनिवार को मैं नहीं आ पाऊंगी.
कमला : क्यों, उस दिन क्या है?
विमला : यह मेरा टिटकू है ना? पिछली बार उसके नंबर कम आये थे. मैंने पंडितजी को उसकी पत्री दिखायी तो बोले उस पर शनि की दृष्टि है.
कमला : यह तो बड़ा अनर्थ हुआ!
विमला : हां, हां, तुम तो बात को मजाक में टाल सकती हो. मानती नहीं हो ना? लेकिन मेरे लिए यह एक गंभीर समस्या थी.
कमला : फिर क्या उपाय निकाला पोंगाजी ने?
विमला : कमला, तुम उनका मजाक मत उड़ाओ. वह बहुत ज्ञानी हैं. उन्होंने कारगर उपाय बताया. अब मैं हर शनिवार को नदी में दस किलो कोयला बहाती हूं और काले पुल के नीचे बैठ शनि देवता को तेल दान करती हूं.
कमला : मगर नदी यहां कहां?
विमला : तभी तो मुझे शहर से काफी दूर बाहर जाना पड़ेगा. बड़े गांव के पास एक नाला-सा बहता है. आने-जाने में समय लगेगा.
कमला : अब रविवार को तो तुम आने से रहीं. न मैं ही कहूंगी.
विमला : हां, उस दिन विक्रम भी घर पर होंगे. उस दिन तो तुम्हारे साहब भी घर ही होंगे.
कमला : हां, सो तो है ही. छुट्टी का दिन जो ठहरा.
विमला : अच्छा, फिर सोमवार का बिल्कुल पक्का रहा. मैं ग्यारह-साढ़े ग्यारह तक आ जाऊंगी.
कमला : ठीक है, मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूंगी.

(विक्रम का प्रवेश)

विक्रम : नमस्ते, कमला जी.
कमला : नमस्ते. अच्छा, मैं चलती हूं.
विक्रम : अरे, हम आये और आप चल दीं.
कमला : नहीं, भाई साहब. चलती हूं. बहुत देर से बैठी थी.
विक्रम : अच्छा, कमला. सी यू. बाई बाई....

(कमला का प्रस्थान)

विक्रम : ओह... ओह...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विमला: क्या हुआ, जी? क्या हुआ?

विक्रम: पता नहीं, क्या हुआ. सर दर्द से फटा जा रहा है.

विमला: कबसे?

विक्रम: अभी-अभी शुरू हुआ. अचानक ही. ओह....

विमला: चलिए, चलिए. आप कपड़े उतारकर बिस्तर में लेट जाइये. मैं चाय लाती हूं.

विक्रम: जल्दी आना. बहुत दर्द हो रहा है (अंदर जाता है)

विमला: (स्वगत) पता नहीं इन्हें क्या हो गया! इस वक्त पंडितजी होते तो कितना अच्छा होता.

(पंडितजी का प्रवेश)

पंडितजी: अरे विमला जी, खड़ी क्यों हैं? कुछ परेशान-सी नजर आती हैं.

विमला: पंडितजी! आप आ गये? मैं आपको देखकर कितनी खुश हूं! मैं अभी आपको ही याद कर रही थी.

पंडितजी: अच्छा? फिर तो अच्छा हुआ मैं आ गया. बताइए क्या बात है?

विमला: पंडितजी, अभी विक्रम दफ्तर से आये तो पसीने-पसीने थे, सर दर्द से फटा जा रहा था. आते ही बिस्तर में लेट गये. मैं उनके लिए चाय बनाने जा रही थी.

पंडितजी: फिर जाइए, उनके लिए चाय बना लीजिए.

विमला: नहीं, नहीं, पंडितजी. पहले जरा कोई उपाय तो बताइए.

पंडितजी: लेकिन बहनजी, बिना उनकी पत्री देखे मैं कैसे उपाय बता सकता हूं? आप पत्री तो लाइए.

विमला: मेरे पास यहीं रखी है. मैं उसे हमेशा पर्स में रखती हूं. (निकाल कर देती है)

पंडितजी: (पत्री खोलते हुए) वाह, बहन जी, वाह, यजमान हो तो ऐसा, आपका विश्वास देखते ही बनता है. हूं... अष्टम में चंद्रमा है. उसको बुध बक्र दृष्टि से देख रहा है. हूं... यह तो मामला ठीक नहीं है.

विमला: क्या ठीक नहीं है? क्या ठीक नहीं है?

पंडितजी: नहीं, नहीं, ऐसी कोई बात नहीं है. मगर यह सर दर्द कोई साधारण बीमारी नहीं. नहीं, बिल्कुल नहीं... इसको हम नजरंदाज नहीं कर सकते. भृगुजी कहते हैं:

विमला: क्या कहते हैं?

पंडितजी: भृगु महाराज कहते हैं:
अष्टम घरे चंद्रो, तत्परं बुधं दृष्टि जातकाम् शरीरम् च अतिरोगम् संभावनाम्.

विमला: अर्थात?

पंडितजी: अर्थात, यदि आठवें घर में चंद्रमा है और उस पर बुध की दृष्टि हो तो जातक के शरीर में रोग की संभावना रहती है.

विमला: यह कैसा रोग है, पंडितजी?

पंडितजी: कहना कठिन है, विमलाजी, बहुत कठिन. यह बहुत खतरनाक रोग लगता है. ऐसी अवस्था में कुछ भी हो सकता है. सन्निपात भी!

विमला: हे भगवान! अब क्या होगा?

पंडितजी: घबराइए नहीं. हम किसलिए हैं? इसका उपाय है.

विमला: ऐसे असाध्य रोग का?

पंडितजी: हां, हां, असाध्य रोग का भी. अरे विमलाजी, यह प्राचीन ज्योतिष-शास्त्र है, कोई मजाक नहीं.

विमला: तो फिर वह उपाय कीजिए, पंडितजी.

पंडितजी: हां, करेंगे, करेंगे. थोड़ा-सा उसमें समय लगता है. मगर जल्दी कराना पड़ेगा.

विमला: हां, पंडितजी, जल्दी करा लेंगे. उसके लिए क्या लाना होगा?

पंडितजी: वह कुछ खास नहीं है. आपको मैं चीजों की सूची दिये देता हूं.

विमला: देखिए, मैं कहां से लाती रहूंगी. आप ही ले आइए ना. कितना दूं?

पंडितजी: फिलहाल 500 रुपये दे दीजिए. फिर मैं देख लूंगा.

विमला: आप करेंगे क्या?

पंडितजी: इसमें तो महामृत्युंजय पाठ कराना पड़ेगा. यदि वह शीघ्र न कराया गया तो कुछ भी हो सकता है.

विमला: यह पैसे रख लीजिए. कब कराना चाहेंगे?

पंडितजी: (डायरी निकालकर) देखिए, अभी तो कुछ दिन मैं व्यस्त हूं. मंगलवार को मुख्य मंत्री जी ने बुलाया है. वह यह जानना चाहते हैं कि चुनाव के लिए सबसे अच्छा मास कौन-सा रहेगा?

विमला: लेकिन पाठ तो जल्द करना चाहिए.

पंडितजी: सो तो है. बुधवार को राज्यपाल महोदय के यहां पेशी है. उनका दूसरा बेटा बुरी संगत में फंस गया है. कोई उपाय चाहते हैं जिससे वह ड्रग्ज खाना छोड़ दे.

विमला: नहीं, वहां आप जरूर जाइए. मगर हमारे लिए भी कोई समय निकालिए ना.

पंडितजी: वही तो. वही देख रहा हूं. बृहस्पतिवार को विपक्ष के नेता ने बुलाया है. वह मुख्य मंत्री को गद्दी से उतरवाने का तांत्रिक उपाय चाहते हैं.

विमला: लेकिन महामृत्युंजय पाठ...

पंडितजी: शुक्रवार को सेठ जमनादास यज्ञ करवा रहे हैं ताकि आयकर अधिकारी उन पर छापा न मार सकें.

विमला: मगर...

पंडितजी: हां, हां, उसी पर आ रहा हूं. शनिवार को किसान सभा ने बुलाया है. वे हवन करा रहे हैं ताकि वर्षा हो और सूखे की समस्या न रहे.

विमला: पंडितजी! पंडितजी! मुझे मालूम है आप बहुत व्यस्त हैं. मगर विक्रम के स्वास्थ्य का भी तो खयाल कीजिए.

पंडितजी: मिल गयी, मिल गयी.

विमला: क्या मिल गयी?

पंडितजी: डायरी में एक खाली तिथि मिल गयी. अब बताइए, सोमवार को यह पाठ रख लें?

विमला: सोमवार को? सोमवार को? क्यों, रविवार को नहीं हो सकता क्या?

पंडितजी: अरे बहनजी, अगर तिथि खाली होती तो आपसे बढ़कर हमारे लिए कौन है? उस दिन हम आई.जी. (रूल्ज) श्री खन्ना के घर पर पाठ करा रहे हैं, ताकि उनको दरबार में पुनः प्रतिष्ठा प्राप्त हो.

विमला: दरअसल सोमवार को मैंने अपनी एक सहेली के पास जाना था.

पंडितजी: वह तो आप देख लें. सोमवार के बाद फिर मैं दस दिन के लिए दिल्ली जा रहा हूं. वहां से हवाई जहाज की टिकट आयी है. अब वहां किसने बुलवाया है यह तो नहीं बता सकता. मगर आप समझ ही गयी होंगी.

विमला: अरे, क्या उन्होंने...?

पंडितजी: जी, हां, उन्होंने ही...

विमला: अच्छा? हूं. चलिए, फिर और क्या हो सकता है? आप सोमवार को ही पाठ रख लीजिए.

पंडितजी: अच्छा, तो मैं चलता हूं.

विमला: अच्छा....

(पंडितजी का प्रस्थान)

विमला: (स्वगत) चाय बनाने से पहले कमला को फोन ही कर दूं. (चोंगा उठाकर डायल करती है) हेलो, कौन कमला. सुन, वह सोमवार का खाना अब तू रहने ही दे.

कमला: (फोन पर उधर से) क्या हुआ?

विमला: अरे होना क्या था? पंडित जी आ गये. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'कहानी खुराफात की जड़ है'

नामवर सिंह

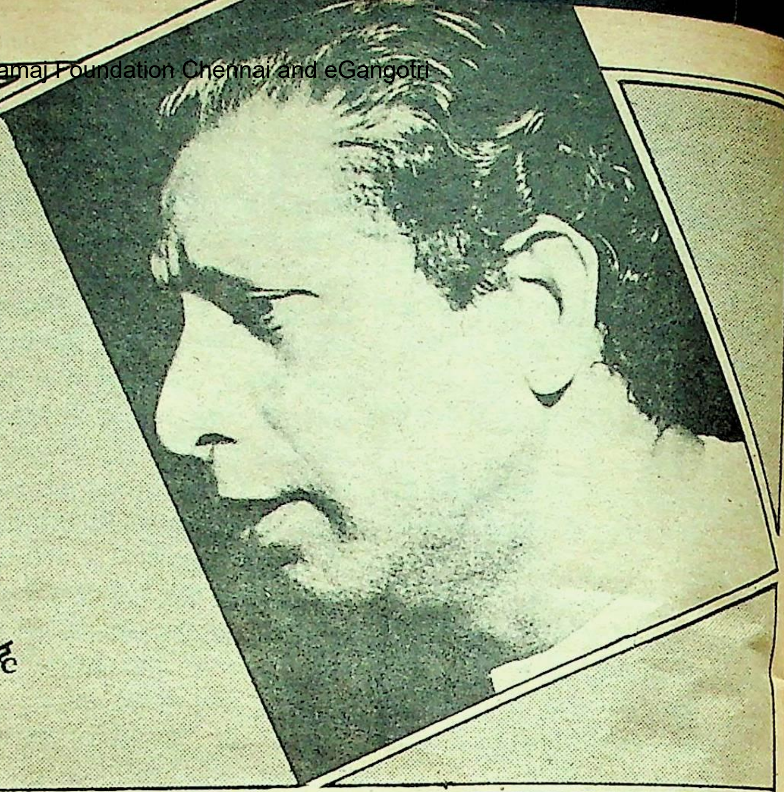

प्रख्यात आलोचक नामवर सिंह से उदय प्रकाश और सुधीश पचौरी की बातचीत

□ आपने आज से लगभग 30-32 वर्ष पहले, उस समय की महत्वपूर्ण कहानियों पर कुछ लिखा, उनकी व्याख्या की और उन्हें समझने की कोशिश भी की, जाहिर है इससे एक तरफ कहानी आलोचना का विकास हुआ तो दूसरी ओर कहानीकारों को भी इससे ऊर्जा मिली. तब से लेकर अब तक सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीनिक हर स्तर पर परिवर्तन हो चुका है. क्या आपको इन 30-32 वर्षों में कोई बड़ा बदलाव नजर आता है? कथा आलोचना के पहले वाले अपने उपकरण क्या अब आपको नाकाफी नहीं लगते? कहानियों पर इतने लंबे समय तक कुछ न लिखने की वजह कहीं यह तो नहीं कि आपकी आलोचना की प्राथमिकता नहीं रही?

कहानी पर आखिरी लेख मैंने 64 या 65 में लिखा था. उस समय कहानी चर्चा जिस मोड़ पर आ गयी थी, उस समय एक पक्ष था व्यावसायिकता. और रहा दूसरा पक्ष, तो आपको याद होगा कि '**धर्मयुद्ध**' में '**एक कहानी दशक**' के नाम से एक लेखमाला एक साल से भी ज्यादा, लगातार प्रकाशित हुई थी. जिसमें अनेक कहानीकारों के वक्तव्यों के साथ उनकी कहानियां भी छपी थीं. इनमें से कुछ कहानीकार ऐसे थे जो कहानी की अब तक की उपलब्धियों को अपने हित और फायदे में भुनाने की कोशिश कर रहे थे. मैं इसे न तो कथा आलोचना कहूंगा, न साहित्यिक राजनीति, बल्कि असल में कहानी की व्याख्या गुटबाजी के तहत होने लगी थी.

□ ऐसे में अपनी आलोचना के माध्यम से आप इसमें हस्तक्षेप कर सकते थे.

देखिए, मैंने जिस नेक इरादे से, कहानीकारों के साथ संवाद करते हुए, एक सहयोगी प्रयास के रूप में अपनी कथा आलोचना और कहानी चर्चा की शुरूआत की थी, मुझे लगा कि वह अब संभव नहीं रही. मैं तो अपने इन लेखों को कभी छपाता भी नहीं. लेकिन होने यह लगा कि मेरे लेखों के टुकड़े यहां-वहां, बिना संदर्भ के उद्धत करके मेरे नाम से तमाम बातें की जाने लगीं. इसीलिए इन लेखों को ज्यों का त्यों, बिना एक भी शब्द बदले, एक दस्तावेज की तरह सबके सामने रखने का मैंने निर्णय लिया.

□ उस समय क्या कोई बदलाव कहानियों में भी दिखायी दे रहा था?

हां, मैंने अंतिम लेख 'एक और शुरूआत' में इसका जिक्र किया था. उस समय **रवींद्र कालिया, महेंद्र भल्ला, काशीनाथ सिंह, ज्ञानरंजन, दूधनाथ सिंह** आदि लिखने लगे थे. कहानीकारों की एक नयी पीढ़ी आ गयी थी. इनकी कहानियों की भाषा और कथा दृष्टि भी, तथाकथित नयी कहानी के उम्मीदवारों के भिन्न थी, मैंने सोचा था कि यह थोड़ी और स्पष्ट होगी तो मैं इस पर लिखूंगा. शायद लिखता भी. लेकिन तभी, आपको याद होगा कि 'समांतर कहानी' नामक एक आंदोलन चला और फिर 'आम आदमी की तलाश' होने लगी...

□ कहीं सही क्रम यह तो नहीं है कि 'आम आदमी की तलाश' पहले शुरू हुई और 'समांतर आंदोलन' बाद में चला?

इससे क्या फर्क पड़ता है कि आगे या पीछे कौन हुआ? यह कहना भी कठिन है. वैसे, एक ही आदमी और एक ही दल ने यह सब शुरू किया था. फिर यह महसूस हुआ कि एक खास तरह की व्यावसायिकता अब चल रही है, इसलिए लिखने का उत्साह हुआ नहीं. फिर साहित्य संबंधी मेरी दूसरी

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविता तक सीमित हिन्दी आलोचना के दायरे को बढ़ाने की गर्ज से जिस समय नामवर जी ने कहानी की आलोचना के क्षेत्र में पदार्पण किया था तब कहानी-समीक्षा की एक व्यापक और निश्चित 'भाषा' के निर्माण की दिशा में विचार करने का एक सार्थक सिलसिला शुरू हुआ था. 'कहानी' विधा के प्रति उनकी मूलभूत चिंताएं 'नयी कहानी : नये प्रश्न' जैसे अनेकों लेखों से उजागर होती रही हैं. इधर लंबे समय से कहानी-आलोचना के प्रति उनका झुकाव कुछ कम जरूर होता नजर आया है... फिर भी यदा-कदा वे साक्षात्कारों व व्याख्यानों के जरिए कथा-लेखन पर अपनी राय जाहिर करते रहे हैं. प्रस्तुत है पिछले दिनों अपने जीवन के साठ वर्ष पूरे कर चुके नामवर जी से लंबी बातचीत की पहली कड़ी....

चिंताएं भी थीं. मैं उनमें लग गया. यह बात जरूर है कि उसके बाद परिवर्तन बहुत हुए. हमारे राजनीतिक जीवन और सांस्कृतिक जीवन में छोटे-बड़े कई मोड़ आये और फिर संपूर्ण साहित्यिक संवेदना में भी परिवर्तन आया है, कहानियां भी बदली हैं, लेकिन जब तक बहुत बड़ी संख्या में और व्यवस्थित ढंग से कहानियों को न पढ़ा जाये, तब तक कुछ छिटपुट कहानियों को देखकर अगर कोई राय बनायी जाये, तो वह राय बड़ी भ्रामक होगी. साहित्य के लिए भी और अपने लिए भी. लेकिन ऐसे व्यवस्थित अध्ययन का मौका मैं निकाल नहीं सका. फिर कुछ हमारे शुभचिंतकों-मित्रों ने कहा कि आपको लिखना चाहिए, मैंने भी सोचा कि इधर की कहानियों को व्यवस्थित ढंग से पढ़ा जाये—लेकिन फिर कुछ विघ्न आ गये. जैसे एक सज्जन ने एक लेख ही लिख डाला कि वे कहानियों पर आखिर क्यों लिखना चाहते हैं...? तो मुझे लगा कि कहानी तो खुराफात की जड़ है...

□ आपके लेख देखकर यह लगता है कि आलोचक और रचनाकार के बीच एक संवाद वहां है, मतभेद भी हैं तो एक गहरी चिंता भी है. जाहिर है साहित्य की गहरी चिंताएं जीवन की गहरी चिंताओं से जुड़ी हुई हैं.. तो ऐसा क्या हो गया इस बीच में, कि साहित्यकारों की वे चिंताएं बिल्कुल ही समाप्त हो गयीं और एक तलछट, एक छिछलापन और एक तरह की क्षुद्रता उसकी जगह आ गयी और पूरा माहौल गड़बड़ा गया. क्या माहौल में कोई बदलाव आपको नजर आता है. क्या आपके न लिखने का कारण यह माहौल... आप कुछ इस माहौल के बारे में कहें...

भई, माहौल के बारे में मैं क्या कह सकता हूं. मेरे मन में स्थिति बहुत स्पष्ट नहीं है इसकी. आप 1974-75 से देखें, क्योंकि निकट अतीत यही है, इन पिछले पंद्रह सालों के दौर में कहानियां ही नहीं, बल्कि उपन्यासों और कविता संग्रहों की भी समीक्षाएं तो होती रही हैं. शायद ही कोई लेखक ऐसा होता हो, जिसकी चर्चा न होती हो, नोटिस न ली जाती हो. लेकिन इसके बावजूद कुल मिलाकर एक बड़े परिप्रेक्ष्य में उपन्यास, कविता या कहानी की कोई एक मुकम्मल तस्वीर नहीं बनती दिखाई देती. ये समीक्षाएं न तो पाठक और न लेखक के मन मस्तिष्क पर कोई असर डालती हैं. दरअसल हमारा चिंतन इस मामले में इतना खंडित, इतना एटॉमिस्टिक हो गया है कि हम चीजों को समग्रता में देखने की आदत ही छोड़ चुके हैं. अभी पिछले दो सालों से भ्रष्टाचार के जितने विवाद हुए हैं—बोफर्स, एच.डब्ल्यू.डी. सबमेरिन, फेयरफैक्स आदि. इन पर अलग-अलग खूब चर्चा हुई है. लेकिन भारत का 'राजतंत्र' किस दिशा में जा रहा है, उसकी अर्थनीति और अर्थव्यवस्था किधर जा रही है—इसके समग्र विश्लेषण का ही एक हिस्सा होना चाहिए बोफर्स... लेकिन ऐसी गंभीर चर्चा राजनीति में भी कहीं दिखाई नहीं देती. ठीक इसी के समानांतर साहित्य में भी देखिए, अलग-अलग कहानियों पर तो चर्चा हुई है लेकिन समग्रता में आज की कहानी के बदलाव को रेखांकित करने या उसका विश्लेषण करने की कोई गंभीर कोशिश मुझे कहीं दिखाई नहीं देती. मैं सिर्फ दूसरों पर दोष नहीं लगा रहा हूं, शायद मैं भी उतना ही दोषी हूं...

□ आपने कहा कि आपकी कथा आलोचना कहानीकारों के साथ संवाद करते हुए विकसित हो रही थी और जब यह संवाद संभव नहीं रहा तो आपने लिखना बंद कर दिया. लेकिन 'नयी कहानी' के बाद जो कहानीकार आये थे—काशीनाथ सिंह, ज्ञानरंजन, दूधनाथ सिंह आदि उनसे तो आपका संवाद बना रह सकता था. फिर तब तक कहानी आलोचना में आपकी स्थिति केंद्रीय बन चुकी थी. अशोक वाजपेयी ने तो कहानी आलोचना का जनक आपको कहा था. तो ऐसे कई कहानीकार जैसे निर्मल वर्मा, श्रीकांत वर्मा आदि आपकी प्रतिक्रिया के मुखापेक्षी तो रहे ही होंगे, फिर अगर संवादहीनता की स्थिति सचमुच थी, तो वह तो कवियों के साथ भी रही होगी. लेकिन आपने कविताओं पर लिखना जारी रखा. सिर्फ कहानी आलोचना ही क्यों बंद कर दी?

मुझे ऐसा लगता है कि जब मेरी किताब **'कहानी : नयी कहानी'** छपी और जब मैंने अपना लेख **'इत्यलम्'** लिखा, तब तक लगभग संवाद बंद होने की स्थिति आ गयी थी. और जहां तक ज्ञानरंजन वाली पीढ़ी का सवाल है, तो उनके साथ कहानी को लेकर सचमुच मेरा कोई संवाद नहीं रह गया था. यह एक तथ्य है. मुझे तो ऐसा लगता है कि पिछले बीस वर्षों में संवाद तो खत्म हुआ ही है, विवाद का भी रूप बदल गया है. **कीर्ति चौधरी** ने बहुत पहले एक कविता लिखी थी: 'कैसा जमाना आ गया है कि किसी को कड़ी बात भी कहो, तो वह बुरा नहीं मानता.' आज मूल्यों, सिद्धांतों, विचारों का दृढ़ता से खंडन-मंडन करने वाले साहित्यिक विवाद खत्म हो गये हैं. विवादों का स्तर और रूप बिल्कुल दूसरा हो गया है. वैयक्तिक तो नहीं कहूंगा लेकिन लोग साहित्यिक मान्यताओं पर नहीं, अनावश्यक और फालतू बातों पर बहस करते हैं. इसके सामाजिक कारण हैं. वातावरण में भी बदलाव हुआ है. लेखकों के बीच जो एक 'कम्यूनिटी लाइफ' होती है, उसमें भी संवादहीनता बढ़ी है. विवादों का संबंध साहित्यिक गोष्ठियों की जीवंतता, पत्र-पत्रिकाओं में चलने वाले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विवादों से होता है...

□ लेकिन यह भी तो हो सकता है कि आपने कहानी पर लिखना इसलिए बंद किया हो कि आपने एक बार कहीं लिखा था कि आज तक कहानी को आधार बनानेवाला कोई आलोचक बड़ा आलोचक नहीं हुआ. और इसकी वजह आलोचना नहीं, स्वयं कहानी की दरिद्र स्थिति है.

नहीं, यह तो मैंने पूर्वपक्ष के रूप में कहा था. क्योंकि यह मान्यता मेरी नहीं है. यह मत तो परिमलवादियों और प्रयोगवादियों का था जो उन दिनों कहानी और कहानी आलोचना दोनों का विरोध कर रहे थे. मैंने तो इसका खंडन किया था.

□ लेकिन उस समय कहानी आलोचना का 'पोस्ट नामवर जेनरेशन' भी तो सामने आने लगा था, जिसमें एक तरफ देवीशंकर अवस्थी थे. उन्होंने गंभीरता के साथ अपने समय की कुछ कहानियों पर लिखा. आपके साथ उनके कुछ मतभेद भी थे, लेकिन उनकी चिंता फिर भी गंभीर थी. फिर सुरेंद्र चौधरी, परमानंद श्रीवास्तव, चंद्रभूषण तिवारी, विजयमोहन सिंह जैसे लोग थे, जो कहानियों पर लगातार लिख रहे थे, इतने लोगों के होने के बावजूद कोई ऐसा माहौल क्यों नहीं बन पाया जो कहानी को आपकी चिंता के केंद्र में या दायरे में ले आता...?

ठेठ आलोचना का विकास तब होता है, जब आप किसी ठोस कृति को लेकर यह कहें कि देखिए, मैं इसमें यह देख रहा हूं, इसमें यह अच्छा है, यह बुरा है. फिर आप दूसरे की राय पूछें. यानी सवाल 'परसेप्शन' का है, मत-अभिमत का है. मैंने इसीलिए कुछ ठोस कहानियों को लेकर उनसे जुड़े कुछ निश्चित सवाल उठाये थे. लेकिन मैंने देखा कि ऐसी चर्चा अचानक बंद हो गयी. मैं कहानी या साहित्य से बाहर जाकर किसी कृति पर बहस नहीं करना चाहता. लेकिन जब चर्चा यह हो रही हो कि अमुक कहानी में आम आदमी है या नहीं है—बताइए भला इससे फर्क क्या पड़ता है? यानी चर्चा कहानी की विषयवस्तु पर केंद्रित हो गयी. आज भी हम देखें तो आश्चर्य होता है कि चर्चा ज्यादातर कहानी के उपादान, मैटीरियल्स, स्रोत और सामग्री पर होती है, जबकि कहानी एक कलारूप है और कौन लेखक उसे कैसे साधता है, बहस इस पर

ठेठ आलोचना का विकास तब होता है, जब आप किसी ठोस कृति को लेकर यह कहें कि देखिए, मैं इसमें यह देख रहा हूं, इसमें यह अच्छा है यह बुरा है. फिर आप दूसरे की राय पूछें.

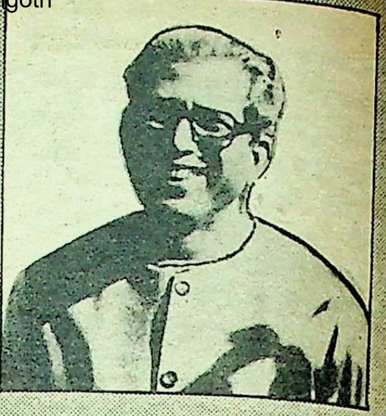

होनी चाहिए.

अभी पांच-छह महीने पहले इलाहाबाद में भैरवप्रसाद गुप्त की सत्तरवीं वर्षगांठ पर एक आयोजन हुआ. एक गोष्ठी समकालीन कहानी की समस्या पर आयोजित थी. इसमें दूधनाथ सिंह, ममता कलिया, शैलेश मटियानी आदि कहानीकार भी बोले थे. 'हंस' के संपादक राजेंद्र यादव भी मौजूद थे. मैंने उसमें सवाल उठाया कि राजेंद्र यादव ने कुछ दिनों पहले एक विशेष कहानी 'तिरिया चरित्र' को अपनी पत्रिका में सर्वश्रेष्ठ कहानी घोषित किया है. 'हंस' में और भी अच्छी कहानियां प्रकाशित हुई हैं, जिन्हें उन्होंने इतना श्रेष्ठ नहीं माना. मैंने कहा कि अगर वे यह बतायें कि यह कहानी उन्हें क्यों सर्वश्रेष्ठ लगी तो हमारी और उनकी कहानी की समझ का जो अंतर है, वह स्पष्ट हो जायेगा. मैं इस पर विचार-विनियम के लिए तैयार हूं. तभी यह पता चलेगा कि हममें से कौन आदमी कहां पर गलत है. दरअसल दो कहानियों को लेकर यह बात उठी थी—'तिरिया चरित्र' और 'तिरिछ'. लेकिन वे बहस के लिए तैयार नहीं हुए. गोष्ठी के बाद भी तैयार नहीं हुए. उन्होंने 'हंस' में भी इस पर कोई चर्चा नहीं करवायी, भले आदमी ने इसके बदले निर्मल वर्मा की 'सूखा' पर जरूर चर्चा करवा दी.

मैंने इस घटना का उदाहरण इसलिए दिया कि पिछले पंद्रह साल से कुल मिलाकर यही स्थिति रही है. बहस या संवाद के लिए ये लोग कभी तैयार नहीं हुए.

□ दिक्कत यह है डॉक्टर साहब कि जिनसे आप बहस चाहते हैं, वे पहले भी कोई बहस नहीं चाहते थे और अब तो उनके लिए बहस और भी मुश्किल है. खैर, आप अपने बाद के कहानी आलोचकों के बारे में कुछ बताइए... देवीशंकर अवस्थी के बाद...

मैं पहले भी कह चुका हूं, फिर कहूंगा कि कहानी पर थोक के भाव पुस्तकें भी बहुत से लोगों ने लिखी हैं. लेकिन इस बीच कुछ ऐसे लेख मुझे जरूर देखने को मिले, जिनके लिखने वाले कुछ स्वयं कहानीकार भी हैं, उनमें गहरी अंतर्दृष्टि मुझे दिखाई पड़ी है. अभी 'आलोचना' में **रवींद्र वर्मा** के कुछ लेख मैंने छापे हैं. '**कफन**' के बारे में **निर्मल वर्मा** की जो व्याख्या है, एक लेख में उस पर उन्होंने लिखा है. इससे लगता है कि कुछ लोगों में आज भी कहानी संबंधी ऐसी समझ मौजूद है, जो आलोचकों में नहीं दिखाई देती. **विजयमोहन सिंह** की तो किताब ही है-'**आज की कहानी**'. उन्होंने **मुक्तिबोध** और **गुलेरी जी** की कहानियों पर भी लिखा है और **महेंद्र भल्ला**, **ज्ञानरंजन** की कहानियों पर भी. बल्कि **काशीनाथ सिंह** की कहानियों की उन्होंने बड़ी सख्त आलोचना की है. और सही आलोचना की है. अभी '**हंस**' के अंक में **वीरभारत तलवार** ने '**सूखा**' पर अच्छी टिप्पणी की है. '**दिनमान**' में **उदयप्रकाश** ने इधर की कहानियों पर कुछ समय पहले एक लेख लिखा था. मेरा उसमें आलोचना भी की थी. लेकिन उस लेख में कहानियों के बारे में एक अच्छी अंतर्दृष्टि का आभास मुझे मिला, जो इधर के लोगों में नहीं दिखाई देता. जिस समय मैं लिख रहा था, उस समय कहानी आलोचना की जो दुर्दशा थी, उसकी तुलना में आज के लेखकों में कहानी के बारे में ज्यादा गहरी समझ है.

□ क्या आपको नहीं लगता कि इस बीच कहानी का दायरा बहुत विस्तृत हुआ है?

कुछ लोग इसे विविधता कहकर मुदित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जरूर हो सकते हैं लेकिन मुझे लगता है कि कहानी की रचनाधर्मिता के क्षेत्र में बिखराव बहुत ज्यादा है. कुछ मिलाकर कोई एक स्वर या कोई प्रमुख स्वर या कोई एक प्रवृत्ति का नाम आप नहीं ले सकते.

□ लेकिन कहानियों के लेखन की दृष्टि से आज ज्यादा संख्या में कहानियां लिखी जा रही हैं. और ज्यादा कहानीकार हमारे सामने हैं. भले ही वे 'नयी कहानियों' में फ्रेम के भीतर ही कहानियां लिख रहे हों.

नहीं. ऐसा मैं नहीं मानता. बल्कि आज की कहानी की यह बहुत बड़ी सफलता है कि इधर के कुछ नये कहानीकारों के आने से 'नयी कहानी' का बचा-खुचा मुलम्मा भी उतर गया है. यह अच्छा ही हुआ.

□ लेकिन यह भी सच है कि अभी भी 'नयी कहानी' के फ्रेम को सिर्फ कुछ अच्छे कहानीकार ही तोड़ पाते हैं. वर्ना आज भी ज्यादातर कहानीकार नयी कहानी की सीमाओं को अतिक्रमित नहीं कर पाते.

हां, यह सच है कि लेखक बहुत ज्यादा हैं, वैसे एक बात यह भी है कि ऐसा हर दौर में होता है कि कुछ लोग दावे बहुत ज्यादा करते हैं और कहानियां बड़ी खराब लिखते हैं और कुछ लोग चुपचाप बहुत अच्छी कहानियां लिखते हैं. इस गड़बड़ी का स्रोत कहीं और है. देखिए, पत्रिकाओं और प्रकाशन संस्थानों का सबसे बड़ा दायित्व यह होता है कि वे प्रकाशन में अच्छे और बुरे, सार्थक और निरर्थक की तमीज रखते हुए रचनाओं को सामने लायें, लेखक तो चाहता है कि उसका लिखा हर कूड़ा-कचरा भी छप जाये. आज पत्रिकाओं की हालत यह है कि एक अंक में अगर कोई एकाध अच्छी कहानी भी हुई तो उसी अंक की दर्जन भर खराब कहानियों में वह भी नहीं, मुझे खेद है कि वह संपादकीय विवेक हमेशा जरूरत होती है. विवेकवान संपादक हमेशा आलोचकों का मार्गदर्शक होता है. उदाहरण के लिए भैरवप्रसाद गुप्त स्वयं बहुत अच्छे कहानीकार नहीं थे लेकिन वे बहुत विवेकवान संपादक थे, 'कहानी' के अंकों में उन्होंने जिस तरह कहानियों का चयन किया, वह एक मिसाल है.

□ इस समय कहानियों की जो दो-तीन प्रमुख पत्रिकाएं निकल रही हैं.. उनमें...

नहीं मुझे खेद है कि वह संपादकीय विवेक मुझे कहीं नहीं दिखाई देता, वर्ना कहानी और कथा आलोचना की हालत आज यह न होती, अकेला आलोचक सब कुछ नहीं कर सकता, कहानियों के 'क्लियरिंग हाउस' का काम पत्रिकाएं करती हैं, और वह नहीं हो पा रहा है.

और अगली किस्त में

'परिंदे' से लेकर 'सूखा तक निर्मल वर्मा की कथा यात्रा पर विवादास्पद टिप्पणी, गोर्बाचौफ की परेस्रोइका और भारतीय वामपंथी लेखकों की समस्याएं, भारत-भवन और सरकारी साहित्य-संस्कृति का उभरता चरित्र...

और वे गुत्थियां जिन्हें उलझाते चलना नामवरजी की आदत में शुमार है...

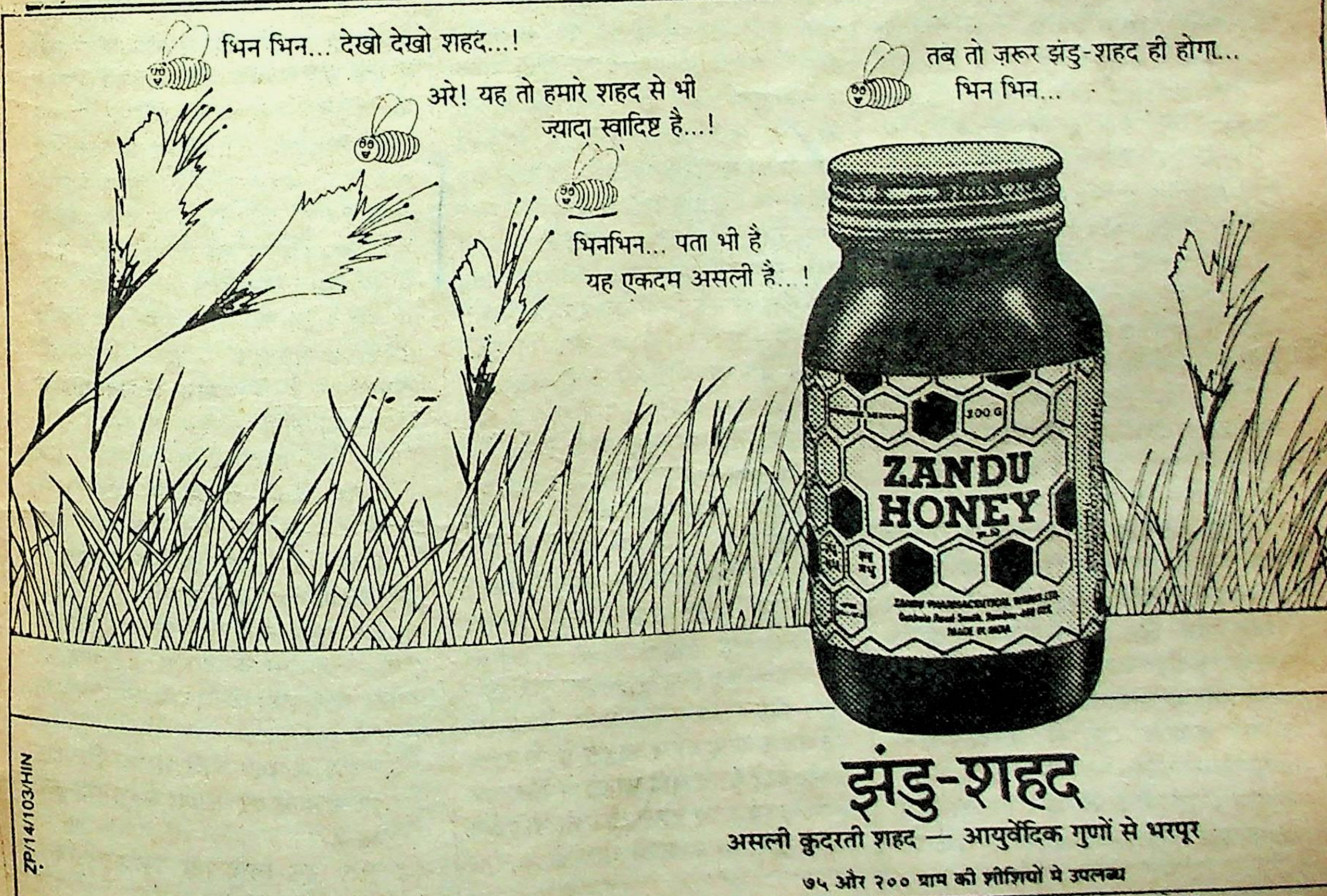

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होशंगाबाद की मेनका—गंगा

गंगा देई के आकर्षण ने बेंसले को ऐसा बांधा कि वह उसे अपनी पत्नी ही बना बैठा... पर उसके विलायत लौटते वक्त गंगा देई के भीतर कौन सी चीज़ जाग उठी कि वह उसके साथ जाने से साफ इनकार कर बैठी...?

महाराष्ट्र का शाहजहां— बाजीराव. उसको भी शाहजहां की भांति पर स्त्री से खिलवाड़ का शौक था. उसके हितैषियों ने बाजीराव को बुज़ुर्गों की सीख कई बार सुनायी... 'परनारी पैनी छुरी...' पर बाजीराव को पैनी छुरियों से खेलने की चाह. लग गयी. जो कुल्हाड़ी शाहजहां ने अपने पांवों पर मारी थी, वही कुल्हाड़ी बाजीराव के हाथ लग गयी थी शायद. वह भी अपने सामंतों की पत्नियों के साथ रमण करने लगा था— मोरो दीक्षित की पत्नी, चिमनाजी नारायण की पत्नी और न जाने कौन-कौन... और जब मराठों के भाग्य-रथ के घोड़े धमके तो लाख रास खींचने पर भी काबू में नहीं आये. और फिर वही हुआ— मराठों का शीराजा बिखर गया. और तभी अंग्रेजों ने अपने पंख फैलाये और चारों ओर फैली हुई जमीन को अपने पंख तले ढक लिया.

पिंडारियों की लाल-पीली आंधी को समेटने वाले योद्धा कर्नल बेंसले ने होशंगाबाद के फैले-फैले आंगनों में अपना त्रिशूल गाड़ दिया था. वह अपनी सेना का कमांडेंट एवं होशंगाबाद क्षेत्र का डिस्ट्रिक मैजिस्ट्रेट बन बैठा था. देखते ही देखते 'काले आदमियों' ने उसके लिए एक विशाल छप्पर वाला बंगला बना दिया और अहाते में एक कुआं भी खोद दिया था. एक 'मिनिएचर' बादशाह की भांति कर्नल बेंसले रह रहा था. नौकर-चाकर, प्यादे-पिछलगुए— सभी उसके सामने भेड़ जैसे बनकर मिमियाते. कर्नल बेंसले के हाथ में नौ गजा हंटर रहता था, जिसकी फटकार बिजली की तरह कड़क उठती. उस वक्त तो सभी की नानी मर जाती. और जब कर्नल बेंसले अच्छे मूड में होता तो वह टोकरियां भर भर कर मिठाई बांटता. उस वक्त सुमेरा अपने पीले पीले दांत निपोर कर अपने साथियों से कहता 'बंसरी साब आज खुस है भैया— भगवान की किरपा है.'

कर्नल पर्सिवल जॉन बेंसले— पेंतीस वर्ष का मेघनाद जैसा, शेर जैसी कमर, चकला सीना, आंखों में चमक, भूरी-भूरी छोटी मूछें. वह बदमाश घोड़ों को दस मिनट में पालतू बना डालता था. घुड़सवारी का शौक उसके जीवन की निधि थी. पौ फटने से पहले वह घोड़े की पीठ पर सवार हो जाता और जिधर तबियत करती उधर ही चल पड़ता. डेढ़-दो घंटे बाद वह पसीने से नहाये घोड़े से उतरता, उसे अपने हाथों से गुड़ खिलाता और फिर सईसों को सौंप देता. बड़ा अचरज तो इस बात का था कि कर्नल बेंसले के जीवन में कोई मेनका उसका मन मोहने अभी तक पैदा नहीं हो पायी थी. जब वह अपने अफसरों में बैठता तब 'हो हो' हंसकर कहता 'किसी लड़ाकू को अगर खत्म करना हो तो उसके पल्ले एक खूबसूरत औरत को बांध दो, जल्द ही मारा जायेगा.' और स्त्री जाति से सतर्क कर्नल बेंसले ने अभी तक अपने दिल के दरवाजे बंद कर रखे थे. कोई भी सुंदरी उसके मन मंदिर के आसपास फटक नहीं पायी.

उस दिन कर्नल बेंसले कोई चार बजे ही घोड़े पर सवार होकर नर्मदा के बल खाते किनारों पर घोड़ा दौड़ाता रहा. नर्मदा के तट पर तपस्वी घाट पर अक्सर सन्नाटा छाया रहता था. इसी घाट का नाम बाद में सेठानी घाट पड़ गया था. जब कर्नल बेंसले अपने घोड़े पर आया तो उसने नर्मदा के तट पर कमर-डुबा पानी में नहाती एक छाया देखी. बेंसले और पास आया. और तभी उसे एहसास हुआ कि नहाने वाली छाया कोई औरत है. बेंसले और पास आया. पास के सतपर्णी के पेड़ की ओट में उसने घोड़े को बांधा और आगे बढ़ा.

हां— वह स्त्री नग्न नहा रही थी. ब्रह्म-बेला के सुरमई उजालों में नहायी हुई वह गंधर्व-कन्या-सी लग रही थी. कमल की पंखुड़ी जैसा शरीर, भादों की रात जैसे काले केश, मुंह बंधी कली जैसे होंठ, बड़े-बड़े कजरारे नेत्र. कर्नल बेंसले एक बार को ठिठक गया और विस्मय से उसे देखता रहा. जब वह पानी में हाथ मार कर पानी उलीचती तो हजारों मोती उसके रेशमी शरीर पर टंक जाते जैसे केले के पत्ते पर सुबह की शबनम ठहर जाती है. आज बेंसले को मालूम हुआ कि औरत कितनी खूबसूरत होती है. और ना जाने क्यों वह बेधड़क उसकी ओर बढ़ता चला गया. और जब उसने पांवों की आहट सुनी तो घबराकर उसने पास पड़ी भीगी धोती अपने शरीर पर लपेट ली. उस वक्त तो वह सचमुच ही मेनका लगने लगी थी.

कर्नल बेंसले उसके पास आ गया था. उसने मुस्कराकर पूछा, "तुम्हारा नाम?"

"गंगा देई, हजूर. हम परसादी राम जुझौतिया की बेटी हंय."

'गंगा देई!' उसकी महीन आवाज कर्नल बेंसले के दिल में धंसती चली गयी. कर्नल ने उसे गौर से देखा. उसे गंगा ग्रीक पुराणों की डैफनी जैसी लगी. और तभी मानों उसके बंजर मन में अनुराग की वर्षा जैसी होने लगी. उसके मन के गुंबद में उसी की आवाज गूंज उठी 'पर्सीवल, डैफनी को खो मत देना. बड़ी देर बाद तेरे अंधियारे जीवन में यह जुगनू चमका है.'

और कर्नल बेंसले ने अपने हाथ से गंगा देई की ठोड़ी उठाकर कहा, "डरो मत गंगा बीबी. अम तुमसे शादी करना मांगटा. अम टुमारा फादर को बुलाना मांगटा."

भयभीत हिरनी ने कर्नल को निहारा और फिर पलकें गिरा कर बोली, "हम ब्रामन हंय साहिब."

"टुम ब्रामन से भी जाडा है गंगा बीबी. टुम बेंसले का ड्रीम क्वीन है."

और बेंसले ने अपने हाथों से गंगा देई को उसी की धोती से उलटा-सीधा लपेटा और अपनी बांहों में भरकर उठाया. घोड़े की पीठ पर उसे बैठाकर फिर वह होशंगाबाद की ओर चल पड़ा. गंगा देई को ऐसा लग रहा था मानो वह संयोगिता हो जिसे उसका पृथ्वीराज घोड़े पर बैठाकर ले जा रहा हो.

बंगले पर सभी नौकर-चाकर दबी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जुबान से कम, पर आंखों से ज्यादा बोलते लगे. वैसे कर्नल बेंसले था एक आदर्श चहेता ही. उसने अपने नौकरों को इकट्ठा करके कहा, "आज से टुम सब गंगा बीबी को सलाम करेगा. गंगा बीबी अमारा मेम साब है– समझे!" सब ही नजर नीची किये हाथ बांधे– 'जो हुकुम सरकार' कहकर खड़े रहे.

और उसी दिन से कर्नल बेंसले के जीवन में एक नये वसंत ने जन्म लिया. वैसे गंगा बीबी भी उसको अपना प्राण नाथ मानती थी. उसकी सेवा करती, तरह-तरह के भोजन बनाकर खिलाती और जब वह अपने इलाके की कहानियां कर्नल बेंसले को सुनाती तो वह बड़े ध्यान से सुनता रहता. गंगा बीबी उसके जीवन की बैसाखियां बन चुकी थी.

और जिस दिन कर्नल अपनी रेजीमेंट के साथ युद्ध पर गया था, उस दिन गंगा बीबी ने श्रृंगार किया था. फिर थाल में दही-पेड़ा और घी का दीपक जलाकर उसने कर्नल की आरती उतारी और उसके चौड़े माथे पर तिलक लगाकर कहा था, "आप विजयी होकर लौटेंगे– जरूर लौटेंगे." तब गंगा बीबी की आवाज से ना जाने कौन-सा स्वर गूंजा था– मानों आकाशवाणी की गूंज सुनाई दे रही हो. वह न तो विचलित थी और न ही उसकी आवाज कांपी थी. उसकी आंखों में न कोई आंसू था और न कोई भय का आभास.

गंगा बीबी की भविष्यवाणी बिलकुल सत्य हुई. जब कर्नल बेंसले की रेजीमेंट ने आक्रमण किया था तब कितने लोग गिरे थे. उसके ही बगल में चल रहा मेजर पैट्रिक गोली खाकर धड़ाम से गिरा था. और फिर कैप्टिन जैनट भी उसी की आंखों के सामने मारा गया. पर कर्नल बेंसले को ऐसा एहसास हुआ मानों गंगा बीबी ने उसे कोई अदृश्य कवच पहना दिया हो. उसने भी गंगा बीबी के हाथों लगाये तिलक को पोंछा नहीं था. शायद इसी तिलक में उसका अमृत-कुंड भरा हो. कर्नल बेंसले कटकटाकर लड़ा और जब बिगुल की आवाज उसके कानों में पड़ी तब उसे विजय का आनंद मिला. विजय प्राप्त करके जब वह लौटा तब भी उसे गंगा बीबी देहरी पर दीपकों भरा थाल लिये मिली थी. उसने आरती उतारते समय कहा था, "हमने कहा था ना, विजयी होकर ही लौटे." और तब गंगा बीबी की आंखों से पिघलते मोती टपके थे–हर्ष के आंसू, उसके सुहाग के हिमायती जैसे.

कई वर्ष दिन की भांति बीत गये. फिर वह समय भी आया जब कर्नल बेंसले को वापस विलायत जाने की तैयारी करनी पड़ी थी. उसने गंगा बीबी से कहा, "तुम हमारे साथ चलोगी."

गंगा बीबी के सामने काबा और कलीसा वाली पहेली आ खड़ी हुई. वह बहुत रोई और फिर यही तय किया, "हम अपनी धरती माता को नहीं छोड़बे साहिब."

एक लंबी सांस खींचकर कर्नल बोला, "ठीक है गंगा बीबी. तुम्हारी मर्जी के बगैर हम कुछ नहीं करेंगे."

और दूसरे ही दिन कर्नल बेंसले ने अपना बंगला और जायदाद गंगा बीबी के नाम कर दी. गंगा बीबी निहाल हो गयी. जाने से कोई हफ्ता भर पहले उदास होकर गंगा बीबी बोली, "एक डर हमें सताइत है साहिब, आपके जाने के बाद हमें जात बिरादरी वाले कहीं तंग नहीं करें."

कर्नल बेंसले चौंका. और फिर उसके दिमाग में खयालों की आंधी चलने लगी. पर वह योद्धा के अतिरिक्त एक प्रशासक भी था. उसने शीघ्र ही गंगा बीबी की शंका का समाधान ढूंढ निकाला.

दूसरे दिन उसने अपने बंगले पर एक दरबार किया और दो हुक्म सुनाये– पहला तो दस-बारह हलवाई बुलवाकर ज्यौनार का फौरन बंदोबस्त किया जाये और दूसरा आसपास के सभी जुझौतिया ब्राहमणों को घेरकर ले आया जाये.

कर्नल के आदमी इधर-उधर फैल गये. देखते ही देखते बंगले के कुएं के पास भट्टियां खुद गयीं और पकवान-भोजन बनने लगा. उधर उसके सिपाही-चपरासी जुझौतिया ब्राहमणों के दलों को पकड़कर ले आये. जो भाग गये. सो भाग गये पर जो पकड़ में आ गये उन्हें बंगले में इकट्ठा कर दिया गया.

तब हाथ में अपना नौ गजा हंटर लेकर कर्नल बेंसले आया और हंटर फटकारकर बोला, "हम वापस विलायत जाता है. गंगा बीबी हमारा घरवाली है. वह यहीं रहेगा. अगर किसी ने हमारे जाने के बाद उसे तंग किया तो हमसे बुरा कोई नहीं होगा."

और फिर कर्नल बेंसले ने अपना असली काम शुरू किया. सब जुझौतिया ब्राहमणों को पंगत में बैठा दिया गया. पत्तलें बिछा दी गयीं और फिर सब को गंगा बीबी के हाथों द्वारा भोजन परसा गया. बंगले के कुएं से पानी भी गंगा बीबी ने उनके कुल्हड़ों में डाल दिया. सब ब्राहमण सन्नाटे में आ गये. कर्नल बेंसले ने फिर एक बार हंटर फटकारा और जोर से बोला, "खाना शुरू करो!"

भयभीत ब्राहमण खाने लगे. कर्नल बेंसले ने फिर चैन की सांस ली और गंगा बीबी से बोला, "अब तुम्हें कोई भी तंग नहीं करेगा."

आज भी होशंगाबाद के कलक्टर के पुराने बंगले में एक कुआं आपको दिखाई देगा जिसे लोग 'बंसरी साब का कुआं' कहते हैं. और आज भी जुझौतिया ब्राहमण के दो दल मध्य प्रदेश में पाये जाते हैं– जुझौतिया ब्राहमण और 'गंगाबीबी जुझौतिया ब्राहमण.' □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपराध कैसे, कब और क्यों हो जाते हैं? क्या आदमी स्वभावतः अपराधी होता है? प्रस्तुत है प्रति माह प्रकाशित होने वाली सच्ची अपराध-कथाओं के सिलसिले की एक और कड़ी...

मित्र द्रोही

पांडुरंग खोत
पुलिस उपनिरीक्षक, बंबई

माता-पिता के प्रेम, भाई-बहन के प्रेम, पति-पत्नी के प्रेम की बड़ी प्रशंसा की जाती रही है. लेकिन, इन सबसे ऊपर है—मित्र-प्रेम, जो निःस्वार्थ-भावना से किया जाता है, और जिसमें कोई भी मित्र बदले में किसी पुरस्कार या प्रेम के प्रतिफल तक की भी आशा नहीं करता. ऐसे ही सच्चे मित्र-प्रेम की सत्यकथा है यह! यह घटना तब घटी थी, जब मैं घाटकोपर (बंबई) पुलिस स्टेशन से संबद्ध था.

1980 में जब घाटकोपर की पार्कसाइट कॉलोनी में रहने वाले सिल्वेस्टर लारेंस संथुमेअर सपत्नीक कुवैत गये तो अपना फ्लैट ही नहीं, अपना पूरा सामान भी वापस लौटने तक अपने मित्र जोसेफदास एंथोनी स्वामी को सौंप गये थे. 1982 के अप्रैल महीने के मध्य में उनकी पत्नी रोज़ी बंबई आयी और दो-तीन महीने बंबई में रहकर जून में वापस कुवैत चली गयीं. जाने से पहले वे अपने सारे गहने व कीमती साड़ियां स्टील की आलमारी में बंद करके गयी थीं.

नौ जून, 1983 को किसी काम से संथुमेअर को बंबई आना पड़ा. घर आकर जब उन्होंने अपनी आल्मारी खोली तो चकित-स्तब्ध रह गये. न उसमें कोई गहना था, न कीमती साड़ियां. 22650 रु. के जेवर थे और तीन हज़ार की कीमती साड़ियां थीं. जून, 1982 से 5 जून, 1983 के बीच यह चोरी हुई थी. इसकी रपट लिखवाने वे घाटपोकर पुलिस स्टेशन पर गये. वहां उनकी सब बातें सुनकर मैंने उनसे कहा, "मेरा शक आपके मित्र जोसेफदास पर जाता है. किसी बाहरी आदमी का काम नहीं है यह. अगर बाहरी आदमी ने चोरी की होती तो वह आल्मारी के सामान के अलावा घर का भी थोड़ा बहुत सामान ले जाता. इसके अलावा, ऐसी हालत में जोसेफ के घरवालों में से किसी ने इसकी रपट यहां अवश्य लिखवायी होती."

"आपका कहना सही है लेकिन मेरा शक जोसेफ की मां और बहन पर जाता है. मेरे एक पड़ोसी ने मुझे बताया था कि उन्होंने मेरी पत्नी का सोने का हार जोसेफ की बहन के गले में देखा था."

"लेकिन वह हार उसका भी तो हो सकता है," मैंने कहा.

"जोसेफ की आर्थिक स्थिति से मैं परिचित हूं. उसकी हैसियत अपनी बहन को सोने का हार खरीदने की नहीं है और न ही किसी. और ने उसे वह कीमती हार पहनने को दिया होगा. चोरी मां-बेटी दोनों ने मिलकर की है, मेरे मन में इस बारे में कोई संदेह नहीं है."

संथुमेअर की बात ही संभवतः सच्ची हो, यह सोचकर मैंने उससे कहा, "ठीक है. मैं आपके कहने के अनुसार, जोसेफदास एंथोनी स्वामी के अलावा उसकी मां सिल्वरअम्मा और बहन कुमारी मेरी के खिलाफ इस शिकायत को थाने के रजिस्टर में क्रमांक 290/83 के अंतर्गत दर्ज कर लेता हूं."

जोसेफदास के घर पहुंचने पर मैंने सबसे पहले मेरी को देखा मैंने उससे सीधे पूछा,

"रोज़ी के कुवैत जाने के बाद जो हार तुम पहना करती थीं, वह इस वक्त कहां है?"

"कैसा हार? कौन सा हार?" मेरी ने चकित होकर पूछा.

"जब यही प्रश्न मैंने उसकी मां से किया तो उसने भी चकित होकर उल्टे प्रश्न किया, "कैसा सोने का हार, साहब! हम गरीब आदमियों के पास सोने का हार कहां से आया?" सारी बातें सुनकर मेरी ने कहा, "रोज़ी जब आयी थी, साहब, तब उसके पास साड़ियां थी ही नहीं. फिर, उनके चोरी होने का सवाल ही कहां उठता है?"

मैंने फिर पूछा, "कपड़े औ जेवर कहां हैं?"

"हमें क्या मालूम? हमसे क्यों पूछ रहे हैं?" दोनों ने एक साथ कहा.

"जोसेफ कहां है?" मैंने पूछा.

"हमें नहीं मालूम."

आल्मारी व चोरी-स्थल का पंचनामाकर तथा मेरी और सिल्वर अम्मा को पकड़कर मैं थाने पर आया. वहां आकर मैंने वायरलैस गाड़ी पर काम करने वालों तथा डिटेक्शन स्टाफ को जोसेफ का हुलिया बयान कर उसे, वह जहां भी मिले, गिरफ्तार करने को कहा. सहायक पुलिस उपनिरीक्षक श्री चव्हाण आदि अधिकारी पार्कसाइट क्षेत्र में अपनी वायरलैस गाड़ी में जोसेफदास को ढूंढने लगे. सौभाग्य से वह जल्दी ही मिल गया. उसे देखते ही मैंने कहा, "देख जोसेफ, यदि तूने अपना गुनाह कबूल कर लिया तो मैं तुम तीनों को छोड़ दूंगा क्योंकि तेरा अच्छा दोस्त संथुमेअर तुझे परेशानी में नहीं देखना चाहता और अपनी शिकायत वापस लेने को तैयार है."

पहले तो वह काफ़ी देर तक यही कहता रहा कि उसका और उसके परिवार के लोगों का किसी चोरी से कोई लेना-देना नहीं है, मगर डराने-धमकाने और समझाने पर उसने सब कुछ उगल दिया. बोला, "साहब! चोरी मैंने और जगदीश पांडे ने मिलकर की थी. मेरी मां व मेरी का उससे कोई संबंध नहीं है. कृपया उन्हें छोड़ दीजिये. वे दोनों बेकसूर हैं."

मित्र-प्रेम हो तो ऐसा! संथुमेअर सब-इंस्पैक्टर से कह रहा था, "यदि जोसेफराज ही गुनहगार साबित होता है, तो भी मैं उसके खिलाफ कोई कार्यवाही नहीं करना चाहता. वह मेरा मित्र है." लेकिन पुलिस ने उस मित्र-द्रोही के विरुद्ध कार्यवाही की.

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जगदीश के बारे में उसने बताया, ''[illegible] मित्र है और पार्कसाइट में ही रहता है.'' उसका पता लेकर मैंने हवलदार को उसे पकड़कर लाने को कहा. फिर मैंने जोसेफ से कहा, ''मैं तेरी मां और बहन को छोड़ दूंगा मगर तभी जब तू उस चोरी के बारे में सब कुछ बता देगा, बिना कुछ छिपाये.'' यह सुनकर जोसेफ ने कहा, ''साड़ियां मैंने सब चोर बाज़ार में बेच दीं. जेवरों में से, सोने के एक हार को छोड़कर जो मैंने अपने एक परिचित को बेचा है, सभी अलग-अलग मारवाड़ियों को बेचे हैं.''

''क्या तुम हमें उन सब मारवाड़ियों की दूकानें दिखा सकते हो?'' मैंने पूछा.

''हां,'' जोसेफ ने उदास स्वर में कहा. वह तब से उदास बैठा था, जब से संथुमेअर ने उससे कहा था, ''अरे जोसेफ, इतनी खटपट करने की क्या जरूरत थी? तू कहता तो मैं सारे जेवर, सारी साड़ियां तुझे यूं ही दे देता.''

सबसे पहले मैंने जोसेफ के साथ जाकर सोने का हार यशवंत मारुति नाम के व्यक्ति से प्राप्त किया. लाल बहादुर शास्त्री मार्ग पर स्थित मदनलाल गौरीशंकर जैन की दूकान से हमें संथुमेअर के कई ज़ेवर मिले. अर्जुलाल कजोरीमल जैन नामक जौहरी की दूकान पर सोने के बने दो 'क्रास' मिले जो जोसेफ ने वहां बेचे थे. हमें सारे ज़ेवर प्राप्त करने का यश मिला.

मैंने सिल्वरअम्मा व कुमारी मेरी को पहले ही छोड़ दिया था. मैंने जोसेफ और जगदीश शंकर पांडे नामक उसके मित्र के ऊपर मुकद्दमा चलाने के उद्देश्य से उन दोनों के विरुद्ध अदालत में आरोप-पत्र दाखिल किये.

अदालत से जोसेफ एंथोनी स्वामी को तीन महीने का सश्रम कारावास-दंड मिला. उस पर दो सौ रुपये जुर्माना भी किया गया. जगदीश पांडे को प्रमाणों के अभाव में अदालत ने निर्दोष पाया और छोड़ दिया.

जोसेफ ने मित्र के प्रति विश्वासघात किया, मित्र-द्रोह किया और इसकी सज़ा, उसके मित्र की सज़ा दिलाने की इच्छा न होने पर भी, उसे भुगतनी पड़ी. □

महाराष्ट्र राज्य पुलिस मुख्यालय की विशेष अनुमति से 'दक्षता' के दिसंबर 1987 के अंक में प्रकाशित रचना का अनुवाद

प्रस्तुति : हरि

अपराध कथा : दो

लेफ्टिनेंट से ले. कर्नल तक

अशोक सालवकर

एक ऐसे धोखेबाज की सच्ची कहानी जो अपने को सेना का एक उच्च अधिकारी बताकर लोगों को ठगता फिरता था. कई बार जेल जाने के बावजूद, उसका यह धंधा चालू रहा.

टाइम्स ऑफ इंडिया में 24 सितंबर, 1987 को प्रकाशित एक छोटे से समाचार ने एक अवकाश-प्राप्त वरिष्ठ पुलिस-अधिकारी श्री अरविंद पटवर्धन का ध्यान बरबस अपनी ओर आकर्षित कर लिया. श्री पटवर्धन जब तक सेवारत रहे, अपराधियों के घोर शत्रु बने रहे और अब अवकाश ग्रहण करने के बाद भी वे मौका मिलने पर, अपराधी को न्याय के सिपुर्द करके ही संतोष प्राप्त करते थे. बिना किसी स्वार्थपूर्ति की अपेक्षा के, कितने लोग ऐसी समाजसेवा करते हैं!

जिस समाचार ने श्री पटवर्धन का ध्यान आकर्षित किया था, उसका आशय यह था कि वासिम उज्जाफर नाम के ले. कर्नल ने 4 सितंबर, 1987 को 20 रुपये जमाकर, नागपुर में देना बैंक की एक शाखा में अपना खाता खोला था. दूसरे ही दिन, उसने बैंक की इलाहाबाद शाखा के एक खाते से जारी किया. 20,000 का एक चेक जमा किया और बैंक के मैनेजर से प्रार्थना की कि चूंकि चेक की रकम उसके खाते में जमा होने में 10-12 दिन लगेंगे और उसे 5000 की सख्त जरूरत है तो उसे वह यह रकम दे दे और चैक के 'क्लीअर' होने पर उसकी रकम में से काट ले. मैनेजर ने उसके पद के प्रभावित होकर उस पर विश्वास कर लिया और उसे 5000 दे दिये. दो-तीन दिन बाद ले. कर्नल ने फिर 2000 का चेक मैनेजर के गले मढ़ दिया और उसकी रकम भी रकम भी अगाऊ ले ली. कुछ दिन बाद दोनों चेक वापस आ गये और मैनेजर ने महसूस किया कि उस पर 7000 की चपत लग गयी है.

बैंक को धोखा देकर वासिम फरार हो गया. और श्री पटवर्धन, जो वासिम की गतिविधियों पर बर्षों से बारीक निगाह रखते चले आ रहे थे, जानते थे कि 1960 से उसने न जाने कितनों को फंसाया है. उसका पहला मामला भी श्री पटवर्धन को याद आ गया. 15 मार्च, 1960 को उसने सुबह ही एक टैक्सी ली थी और उसमें कई घंटों तक बंबई की सैर करता रहा था. अंतः में उसने टैक्सी वाले को बंबई के पुलिस कमिश्नर के कार्यालय के बाहर चलने को कहा. वहां आकर वह टैक्सी से उतरा और टैक्सी वाले से कहा, ''मैं डी.सी.पी. पठाण से, जो मेरे रिश्तेदार हैं, मिलकर अभी आता हूं.'' कुछ मिनट बाद बाहर आकर उसने टैक्सी वाले से नाज़ सिनेमा चलने को कहा. वहां नाज बिल्डिंग में 'नाडियाडवाला फिल्म्स' का ऑफिस है. वहां पहुंचकर उसने कहा, ''डिप्टी पलिस कमीश्नर पठाण मेरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

– १९७९ में 'मेजर' वसीमउज़्ज़ाफर

– १९८७ में 'लेफ्टनंट कर्नल' वसीमउज़्ज़ाफर

रिश्तेदार हैं. उन्होंने आपकी नयी फिल्म के छह टिकट मंगाये हैं. इसके बाद वह टैक्सी से जे. जे. स्कूल ऑफ आर्ट के सामने आया, और वहां 'अभी आया' कहकर ऐसा गायब हुआ कि टैक्सीवाले की समझ में नहीं आया कि वह गया कहां.

बेचारा टैक्सी ड्राइवर डी. एस. पी. पठाण के पास पहुंचा और उस पर जो बीती थी, वह सुनायी. पठाण साहब ने पूरी जांच करने के बाद मामला पुलिस की 'जनरल ब्रांच' के सुपुर्द कर दिया.

बंबई में अपनी सफलताओं के झंडे गाड़कर, वासिम साहब नयी दिल्ली पहुंचे. वहां कनॉट प्लेस पर रहने वाले श्री विश्वामित्र रुक्कर नाम के एक सज्जन को फोन करके उनसे कहा, "मैं उत्तर प्रदेश के डी.आई.जी.एफ.बी. मुहम्मद का बेटा हूं और सेना में अफसर हूं. बदली पर पठानकोट से खड़कवासला जा रहा था कि सामान चोरी हो गया. कुछ पैसों की सहायता करें." थोड़ी देर बाद, एक और फोन एफ. बी. मुहम्मद की ओर से किया कि "मेरे बेटे की थोड़ी मदद करने की मेहरबानी करें." श्री रुक्कर ने कोई जांच-पड़ताल नहीं की, और अस्सी रुपये उसे दे दिये.

लेकिन, जब उसने ऐसी ही 'ट्रिक' दिल्ली के नवाबज़ादा अली खां के साथ की तो वह पुलिस के चक्कर में आ गया और तीन मूर्ति पुलिस स्टेशन ने इस बोगस सेनाधिकारी को गिरफ्तार किया. समाचारपत्रों में प्रकाशित समाचारों के अनुसार से 13 सितंबर, 1960 को उसे तीन महीने की सज़ा मिली. सज़ा भुगतकर वह 27 मार्च, 1961 को बंबई 'जनरल ब्रांच' के एक सिपाही ने जो किसी काम से लेमिंग्टन रोड पुलिस स्टेशन आया हुआ था, उसे देखकर टैक्सी ड्राइवर और नाडियाडवाला फिल्म्स के मामले में गिरफ्तार कर लिया. 2 मई, 1961 को उसे फिर जेल जाना पड़ा.

12 जुलाई, 1961 को हम वासिम को हैदराबाद में पाते हैं. वहां उसने नसरुद्दीन नाम के एक अधिकारी को फांसकर, उससे दो सौ रुपये वसूल किये और इस रकम से सेनाधिकारी की यूनीफार्म, बैजेज आदि खरीदकर, उन्हें धारण कर, अपना नाम कैप्टन अब्बासी रखा. इस रूप में उसने हैदराबाद के मिलिट्री कैंप को फांसने का प्रयास किया और इस प्रयास में पकड़ा गया. 6 अगस्त, 1966 को उसे तीन साल की सज़ा मिली. इसके बाद, सोलापुर के किसी मामले में वह 5 मार्च, 1970 को दो साल के लिए फिर जेल में गया. जेल अब उसका दूसरा घर ही बन गया था.

नासिक जेल में वह इतना बीमार हो गया कि उसे खास इलाज के लिए बंबई के जे. जे. अस्पताल में भेजा गया. वहां 'प्रिजनर्स वार्ड' से वह अभिनेता दिलीप कुमार, उर्दू शायर अली सरदार जाफरी, साहिर लुधियानवी और मजरूह सुल्तानपुरी आदि को फोन करता रहता था. फोन पर वह अपना नाम मेजर हसन बताता था. मिसेज जाफरी से वह कुछ रकम ऐंठने में भी सफल हुआ. 1972 में जेल से बाहर आने पर वह मजरूह सुल्तानपुरी को अपने चक्कर में लाने में भी कामयाब हुआ.

4 सितंबर, 1987 को 'टाइम्स ऑफ इंडिया' में वासिम द्वारा नागपुर के देना बैंक को धोखा देने का समाचार पढ़कर श्री अरविंद पटवर्धन ने बैंक की सहायता करने का निश्चय किया. उन्होंने 25 सितंबर को 'मोडस ऑपरेंडी ब्यूरो' के अधिकारी श्री ग्रोवर से मिलकर उनसे वासिम के बारे में विस्तृत सूचना प्राप्त कर उसे नागपुर के बैंक अधिकारियों को भेजा.

4 अक्टूबर, 1987 को बंबई के माता रमाबाई आंबेडकर मार्ग (पुराना पलटण मार्ग) के पुलिस थाने पर एक फोन आया. "मैं ले. कर्नल वासिम जाफर बोल रहा हूं. आपके पास में जो रूपम् होटल है, वहां लड़ाई-झगड़ा हो रहा है. आप फ़ौरन पुलिस भेजिये." फ़ौरन एक पुलिस-अधिकारी श्री घोरपडे दो कांसटेबुलों को लेकर जीप में बैठकर, रूपम् होटल की ओर रवाना हो गया. वहां 'ले. कर्नल' वासिम को सपरिवार बैठा देखकर पुलिस-अधिकारी को लगा कि इस आदमी को पहले कहीं देखा है. फिर उन्हें याद आया कि 1980 में उन्होंने वासिम उज्जफ़र नाम के इस आदमी को गिरफ्तार किया था. उन्हें यह भी याद आया कि नागपुर पुलिस को इस आदमी की जरूरत है, देना बैंक को धोखा देने के मामले में. 'ले. कर्नल' वासिम को फ़ौरन गिरफ्तार कर लिया गया. □

(महाराष्ट्र राज्य पुलिस मुख्यालय द्वारा प्रकाशित 'दक्षता' से पुलिस विभाग की विशेष अनुमति से प्रकाशित यह सत्यकथा 'दक्षता' के दिसंबर, 1987 में छपी एक सत्यकथा पर आधारित है).

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

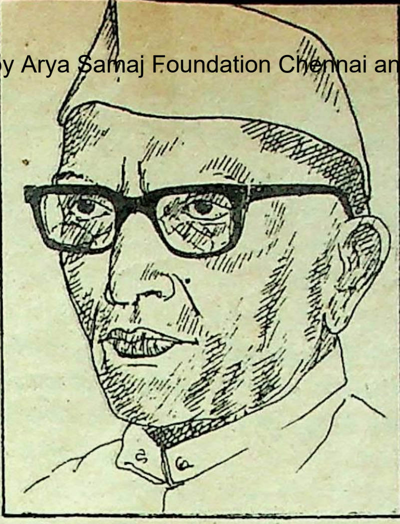

श्री देसाई बाल-बाल बचे!

□ जॉन लोबे

(अवकाशप्राप्त संचालक केंद्रीय अन्वेषण विभाग)

प्रत्येक वर्ष नवंबर के पहले शुक्रवार को मुझे उस विमान-दुर्घटना की याद अनायास आ जाती है और मन व शरीर स्तब्ध हो जाते हैं. यह अविस्मरणीय घटना 4 नवंबर 1977 को मेरी आंखों के सामने घटी थी, इसलिए मैं उसका पूरा तथा यथातथ्य विवरण प्रस्तुत कर सकता हूं.

4 नवंबर, 1977 को प्रधानमंत्री वायुसेना के एक विमान द्वारा इन राज्यों के दौरे पर जाने वाले थे. शाम के पांच बजे उनकी सुरक्षा-व्यवस्था से जुड़े हम लोग तथा विमान कर्मचारी पालम हवाई अड्डे पर जमा हुए. प्रधान मंत्री जोरहत जा रहे थे.

जिस विमान से प्रधानमंत्री यात्रा करने वाले थे, उसके चालन, प्रबंधन तथा देखरेख से संबंधित सभी अधिकारी, जिसमें प्रमुख थे विंग कमांडर क्लरंस जोसेफ डिलिमा, अनुभवी, कुशल तथा विश्वसनीय व्यक्ति थे. उनके संचालन में विमान ने पांच बजे अपनी उड़ान आरंभ की. उस समय हवा शांत थी. विमान में प्रधानमंत्री के साथ अरुणाचल प्रदेश के तत्कालीन मुख्य मंत्री श्री धुमोन, वहीं के एक सांसद श्री रिवम, सर्वोदय नेता श्री नारायण देसाई, उनके सुपुत्र श्री कांतिभाई देसाई, दो पत्रकार, एक फोटोग्राफर, गृह मंत्रालय के सहायक सचिव श्री कंपानी व प्रधानमंत्री कार्यालय के तेरह कर्मचारी थे. मुझे एक बार लगा था कि 13 का यह अंक कहीं अशुभ सिद्ध न हो जाये?

हमारा विमान-जोरहत पर पौने आठ बजे उतरने लगा था. मगर उसके निकट पहुंचकर हमने पाया कि वहां सचमुच जोरदार बारिश हो रही थी और तेज़ हवा चल रही है. कॉफी देने वाले सार्जेंट ने हंसते-हंसते घोषणा की, ''जोरहत की तेज वर्षा व वर्षा के कारण हमें संभवतः तेजपुर जाना पड़े.'' मैंने कैप्टन से जाकर स्वयं यह जानने का प्रयास किया कि कार्यक्रम में कोई परिवर्तन तो नहीं होगा. कैप्टेन तक पहुंचने के लिए मैंने पैसेज से जुड़ा दरवाजा खोलने का प्रयास किया, पर यह खुला नहीं. यह अच्छा ही हुआ, नहीं तो आज यह कहानी सुनाने के लिए मैं जीवित न होता.

बाहर घुप्प अंधेरा था. इस अंधेरे में भी विमान 300 मील की गति से जा रहा था. इंजन से जो धरधर आवाज आ रही थी, वह लगातार बढ़ती जा रही थी और धीरे-धीरे इतनी ज्यादा बढ़ गयी कि उसके आघात से मैं अपनी कुर्सी से नीचे आ गिरा. विमान का सामान भी फर्श पर बिखरने लगा. विमान के पंख आसपास के झाड़ों को ऐसे काट रहे थे, जैसे छुरी मक्खन को काटती है. विमान की सब बत्तियां गुल हो गयी थीं और उसके अंदर पूर्ण अंधकार छाया था. मुझे अपने से अधिक प्रधानमंत्री की सुरक्षा की चिंता थी. वे विमान में हमसे आगे बैठे थे. हम सब, जो उनके पीछे के भाग में थे, एक प्रकार से अपने कक्ष में बंदी हो गये थे. डर लग रहा थ कि कहीं विमान में विस्फोट न हो जाये.

इस बीच, विमान का एक पंख टूट गया

> प्रधानमंत्री का हवाई जहाज तेज़ हवा में थरथर कांप रहा था. जब वह जोरहत के पास गिरा तो पांच विमान-कर्मचारियों के प्राण ले चुका था, लेकिन सौभाग्य से प्रधानमंत्री श्री मोरारजी देसाई बाल-बाल बच गये थे.

[illegible] एक और कूद इस बीच, विमान का एक पंख टूट गया था और वह एक ओर झूल कर रुक गया था. हम सब, बिना सीढ़ी की मदद के कूदकर बाहर आये. बाहर आकर हमने देखा कि विमान में से तेल की दुर्गंध आ रही है. तभी, मैंने पाया कि श्री कांतिभाई देसाई कहीं दिखाई नहीं दे रहे हैं. विमान के एक भाग में आग लगनी शुरू हो गयी थी. मैं अपनी जान की कोई परवाह न करके विमान के अंदर श्री कांतिभाई को देखने के लिए घुसा. वे एक कुर्सी पर बैठे थे, मगर कष्ट के कारण उठ नहीं सकते थे. मैं उन्हें कंधों पर लेकर बाहर आया.

सौभाग्य से, इस समय तक विमान में लगी आग बुझ गयी थी. फिर सब लोग घबराये हुए थे. मैं तथा प्रधानमंत्री कार्यालय के श्री हसमुख शाह ने जख्मी लोगों का प्रारंभिक इलाज शुरू किया तथा घबराये हुए लोगों को सांत्वना दी. उसके बाद मैंने श्री कंपानी की सहायता से विमान के कर्मचारियों की खोज शुरू की. यह खोज करते-करते मैंने पाया कि विमान का आगे का भाग करीब-करीब नष्ट हो गया है. मैंने विमान के कर्मचारियों के नाम लेकर उन्हें पुकारा, मगर कोई उत्तर नहीं मिला. मैंने अनुमान लगाया कि या तो वे विमान से बाहर फेंक दिये गये या उन्होंने विमान से खुद कूद लगायी है. वे जीवित हैं या नहीं, यह चिंता हमें सताने लगी.

तभी मैंने देखा कि पास के गांव के लोग हाथ में मशाल लिये हमारे विमान की ओर बढ़े चले आ रहे हैं. उन्होंने अपनी भाषा में हमसे विमान-दुर्घटना के बारे में पूछा. हमारे दल में से सिर्फ श्री कंपानी ऐसे थे जो उनकी भाषा समझते थे और बोल भी सकते थे. उन्होंने उन लोगों को बताया कि उन्हें किन वस्तुओं की तत्काल आवश्यकता है, जिनकी सहायता से जख्मियों को फ़ौरन अस्पताल पहुंचाया जा सके. वे बेचारे वापस गांव में गये और जो कुछ बन पड़ा, वे सामान लेकर आये.

मुझे मृतप्रायः कप्तान श्री डि लिमा दिखाई दिये, जिन्होंने मेरे सामने ही एक विचित्र आवाज़ निकालते हुए अपने प्राण त्यागे.

इस विमान-दुर्घटना में जो लोग काम आये वे सब विमान कर्मचारी थे. उन्होंने जिस कर्तव्य-परायणता, निष्ठा का परिचय दिया, उसके प्रति मेरा आज भी आदर से झुक जाता है. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूपांतर : वीरेंद्र सिंह

फ्योदोर दास्तोएव्स्की

"देखा तुमने! तुम्हें पहले ही मुझसे कतराना न था. अगर मैं तुम्हारे साथ होता तो यहां तक नौबत ही न आती."

"लेकिन मैं तुम्हें जानती जो न थी. मैंने सोचा, तुम भी उसी की तरह..."

"और अब तो जान गयीं न मुझे तुम?"

"थोड़ा ही. अच्छा, पहले यह तो बताओ जरा कि तुम कांप क्यों रहे हो?"

"ओह तुमने जान ही लिया. तुम बड़ी जल्दी समझ गयीं कि किस तरह के आदमी से तुम बात कर रही हो!" मैंने अपनी साथिन की बुद्धिमानी पर आनंदित होते हुए कहा. सुंदर स्त्री अगर बुद्धिमान भी हो तो उसे बड़ा लाभ होता है. "यह सही है कि मैं स्त्रियों से लजाता हूं. मैं यह भी स्वीकार करता हूं कि जैसे अभी-अभी उस व्यक्ति के डर से तुम उत्तेजित हो गयी थीं, वैसा ही मैं इस समय

"तुम तो, लगता है, मेरी सारी लाज-शरम अभी दूर कर दोगी," मैंने हर्षातिरेक से गद्गद् होकर कहा, "और तब-तब मुझे अपने इस एकमात्र अस्त्र से विदा लेनी पड़ेगी!"

"अस्त्र? कैसा अस्त्र? तुम्हारे मुंह से यह बात अच्छी नहीं लगती."

"माफ करना, दोबारा ऐसी बात मेरे मुंह से तुम न सुनोगी. वह तो मेरी जबान फिसल गयी थी. लेकिन जरा सोचो, क्या ऐसे क्षण में यह संभव नहीं कि इस बात के लिए उत्सुक हो उठूं कि..."

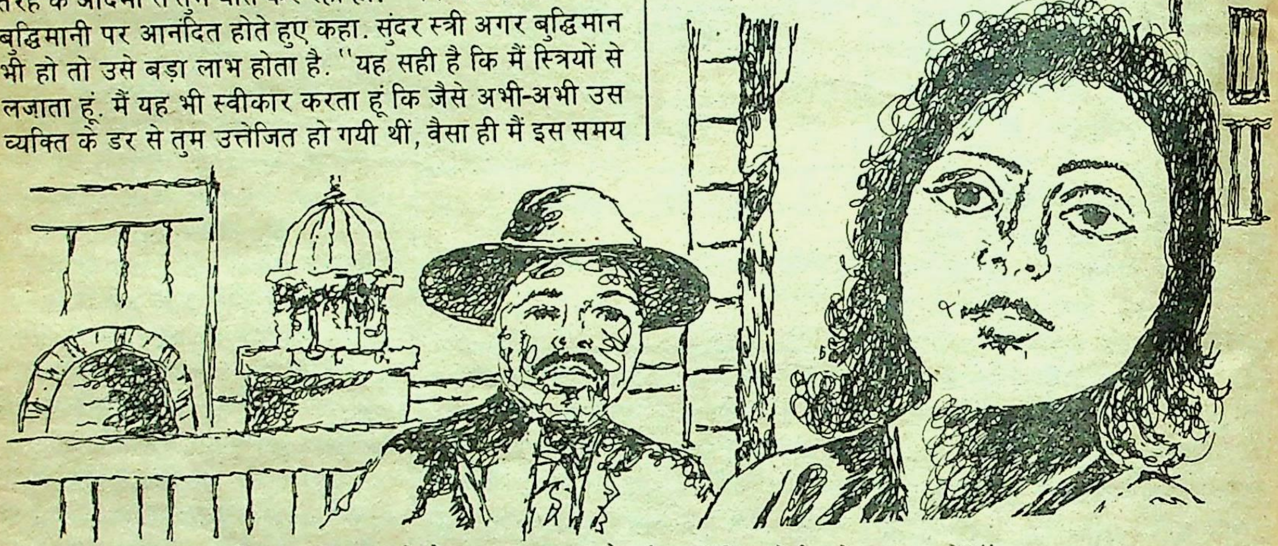

अनुभव कर रहा हूं... मुझे इस समय न जाने कैसा भय लग रहा है. यह सब बिल्कुल स्वप्न जैसी घटना है, और मैंने तो कभी सपने में भी न सोचा था कि मैं कभी किसी लड़की से बात कर सकूंगा."

"अरे नहीं? क्या सचमुच?"

"हां, बिल्कुल यही बात है. अगर मेरा हाथ इस समय कांप रहा है तो इसका कारण यही है कि आज तक तुम्हारे इस नन्हें-मुन्ने कपोत जैसे हाथ ने इसे कभी नहीं पकड़ा. मैं स्त्रियों से संपर्क में कभी नहीं आया, मैं उनके संसर्ग से बिल्कुल अपरिचित हूं. जानती हो, मैं सर्वथा एकाकी हूं. मुझे मालूम नहीं कि उनसे कैसे बात करना चाहिए. इस क्षण भी मैं यह निश्चित नहीं कह सकता कि मैंने कोई ऊल-जलूल बात तुमसे न कही होगी. अगर कही हो तो मुझे स्पष्ट बताओ, मैं विश्वास दिलाता हूं कि मैं जरा भी बुरा न मानूंगा...."

"अरे नहीं, नहीं! बात इससे ठीक उल्टी है. लेकिन अगर तुम मुझसे साफ-साफ कहलवाना ही चाहते हो तो मैं तुम्हें बताती हूं कि स्त्रियों को शर्मीले पुरुष अच्छे लगते हैं और अगर तुम और ज्यादा जानना चाहते हो तो मैं कहूंगी—मुझे भी वे अच्छे लगते हैं, और जब तक मेरा घर नहीं आ जाता मैं तुम्हें विदा भी नहीं करूंगी."

"कि कोई मुझे पसंद करे?"

"हां, बिल्कुल यही. ईश्वर के लिए मुझ पर रहम करो, तरस खाओ. जरा यह भी सोचो कि मैं किस दशा में हूं. छब्बीस साल का मैं होने को आया और अभी तक किसी स्त्री से मेरा परिचय तक नहीं! ऐसी हालत में यह कैसे उम्मीद की जा सकती है कि मैं तुमसे बुद्धिमत्तापूर्ण या बेझिझक बातचीत कर सकता हूं? यदि मैं तुम्हें सारा हाल सुना दूं तो तुम खुद इसे स्वाभाविक समझोगी. जब मेरे हृदय में एक तूफान-सा उठ रहा हो, मैं कैसे चुप रह सकता हूं. खैर, इसे जाने दो. लेकिन क्या तुम विश्वास करोगी कि, एक भी स्त्री से आज तक, यानी आज तक मेरी कभी कोई इस तरह की बातचीत नहीं हुई! ना ही किसी से दोस्ती! बस, मुझसे केवल इतना ही होता है कि स्वप्न देखा करता हूं कि किसी दिन, किसी जगह, किसी से मेरी मुलाकात होगी. आह, काश! कि तुम जान पातीं, मैंने कितनी बार इसी तरह प्यार किया है."

"लेकिन सो कैसे? और किससे?"

"ओह, किसी से भी नहीं, बस कल्पना में, जो भी मुझे सपनों में दिख गया. मैं अपने सपनों में पूरी की पूरी प्रेम-गाथायें रच डाली हैं. ओह, असल में तुम मुझे जानती नहीं! यह सही है कि मैं दो-तीन स्त्रियों से मिला भी हूं, लेकिन भला वे किस तरह की स्त्रियां थीं?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बस इतनी, कि वे खासी घरैतिन छोड़कर और कुछ न हो पातीं... लेकिन ठहरो, मैं तुम्हें-एक बात बताता हूं जिस पर तुम्हें जरूर हंसी आयेगी! मैं सदा किसी संभ्रांत-कुलीन स्त्री से सड़क पर टकराते हुए बातचीत करने की योजनाएं बनाया करता था, बशर्ते कि वैसी स्त्री मुझे मिल भर जाये. मैं सोचता कि मैं उससे नम्रता से, विनीत और भावुक होकर बातचीत करूंगा. मैं उससे याचना करूंगा कि मेरा एकाकीपन मुझे मृत्यु की ओर लिये जा रहा है, और वह मुझे अपने से दूर न हटाये, मैं कहूंगा कि मुझे किसी स्त्री से मित्रता जोड़ना जरा भी नहीं आता, मैं उसे ध्यान दिलाऊंगा कि नारी होने के नाते ही सही, वह मुझ दुखियारे की करुण पुकार सुन ले. और इन सब बातों से कोई प्रभाव न पड़ने पर मैं उससे केवल इतना ही मांगूंगा कि वह मुझे झटक कर अलग न करे बल्कि केवल बहिन की तरह स्नेहसिक्त दो शब्द ही बोल दे. अगर वह चाहे तो मुझ पर हंस भी सकती है, लेकिन बस मुझे थोड़ी-सी आशा दे दे, आशा के केवल दो शब्द, बस दो शब्द बोलकर चाहे हम फिर कभी एक दूसरे से न मिलें. लेकिन मैं देखता हूं तुम मुस्करा रही हो... जो भी हो, मैं तुम्हें यह सब इसलिए बता रहा हूं कि..."

पिछले अंश में आपने पढ़ा कि कथा नायक अपने सपनों में किस तरह पूरी की पूरी प्रेम-गाथाएं रचता रहा और फिर एक क्षण ऐसा आया कि जीवन में पहली बार उसकी बातचीत किसी युवती से हुई.... कैसा था यह विरल अनुभव कि नायक अपने साथ घटी चमत्कारी घटना से आत्मविश्वास की ओर लौट आया... आइए देखें, कैसी रही दूसरी रात की शुरूआत...?

"उत्तेजित न हो! मैं तो बस यह सोचकर मुस्करा रही हूं कि अपने दुश्मन को तुम स्वयं ही हो. और अगर तुमने, भले ही सड़क पर सही, कभी ऐसा करने का साहस किया होता तो तुम जरूर सफल होते. तम जितने ही सीधे-सादे ढंग से बोलोगे उतना ही अच्छा होगा... कोई भी कोमल हृदय नारी इतनी विनय से मांगे गये दो शब्दों का वरदान देने से कभी न इन्कार करती, हां यह बात अलग है कि वह मूर्ख हो या पहले ही से किसी बात पर उसका पारा चढ़ा हुआ हो... लेकिन यह मैं क्या कह रही हूं! असल में वह तुम्हें पागल तो जरूर ही समझ बैठती! स्वयं अपने दिल में उठने वाले विचारों के कारण यह बात जानती हूं. लेकिन यह भी एक सत्य है कि मैं इस जग की रीति-नीति से बहुत थोड़ी परिचित हूं."

"ओह, धन्यवाद!" मैं चीख पड़ा, "तुम नहीं जानतीं तुमने मेरे लिए कितना कुछ कर दिया है."

"ऊंह, हो चुका बस! अच्छा, लेकिन यह तो बताओ, तुमने यह अनुमान कैसे लगाया कि मैं उसी प्रकार की स्त्री हूं... यानी कि जिसे तुम अपनी मित्रता और घरेलू किस्म की न हो. आखिर, तुमने मुझ तक पहुंचने का निर्णय कैसे किया?"

"क्यों, इसमें कौन-सी बात है? तुम अकेली जो थीं, वह आदमी भी कुछ दुस्साहसी था और रात का समय, तुम मानोगी कि ऐसी हालत में हर पुरुष का कर्त्तव्य हो जाता है कि वह..."

"नहीं, नहीं, उससे पहले, जब तुम सड़क के उस पार दूसरी पटरी पर मेरे समानांतर चल रहे थे. तब तुम-मेरे पास आने के उत्सुक थे, बोलो नहीं थे?"

'अच्छा, वो उस पटरी पर? लेकिन मुझे डर लगता है. मैं नहीं जानता कैसे यह बात कहूं कि... जानती हो, आज मैं बड़ी प्रसन्नता का अनुभव कर रहा था. सड़क पर चलते हुए मैं गीत गुनगुना रहा था... इससे पहले मैं शहर के बाहर जा निकला था, और वहां पर मुझे इतना अच्छा लगा, मैं इतना आह्लादित हुआ कि आज तक कभी न हुआ था. तुम... लेकिन हो सकता है यह मेरी कल्पना मात्र रही हो... मुझे क्षमा करना यदि मैं तुम्हें फिर से याद दिलाऊं कि... मेरा मतलब है, मुझे उस समय ऐसा लगा कि तुम रो रही हो, और मैं... मैं यह सहन नहीं कर पाया... मेरा हृदय सिहर उठा... ईश्वर से मैंने कहा कि प्रभु इसका दुख मुझे दे दो. सच, तुम्हीं बताओ कि अगर मेरे दिल में उस समय एक मानवीय स्नेह उमड़ आया तो क्या यह पाप था? मुझे क्षमा करना, मैंने स्नहे कहा था. एक शब्द में क्या मैंने तुम्हारे निकट आने की अभिलाषा संजोकर पीड़ा पहुंचायी?"

"बस, बस करो, बस आगे न बोलना," उसने मेरे हाथ पर अपने हाथ के बंधन को कसते हुए कहा, "इसका भार मुझ पर है, मैं स्वयं तुम्हारे निकट आयी हूं. लेकिन मुझे संतोष है कि मैंने तुम्हें परखने में गलती नहीं की... अच्छा, अब इस कहानी को यहीं छोड़ें, इसी गली में मुड़कर दो-चार कदम पर मेरा घर है. अलविदा, और तुमको धन्यवाद!"

"क्या इसका, क्या इसका यही अर्थ है कि हम अब कभी न मिलेंगे? क्या इतने पर ही पटाक्षेप होना था?"

"देखा तुमने," लड़की खिलखिला पड़ी, "पहले तो तुम केवल दो शब्द चाहते थे, और अब... फिर भी, मैं कुछ न कहूंगी. शायद हमारी फिर भेंट हो."

"मैं कल यहां पर जाऊंगा," मैंने कहा, "मुझे माफ करो, मैं जानता हूं कि मैं काफी आगे बढ़ता जा रहा हूं."

"हां, तुम उतावले हो, और बड़े आग्रही भी!"

"मैं प्रार्थना करता हूं सुनो, जरा सुनो," मैं फूट पड़ा. "मैं क्षमा चाहता हूं अगर मैं कोई ऐसी बात कहूं जो कि... लेकिन मेरी हालत ये है कि ... मेरा कल यहां आना बिल्कुल अटल है. मैं स्वप्नदर्शी हूं. यथार्थ जीवन मैंने बहुत थोड़ा जाना है. और ऐसे क्षण मेरे जीवन में इतने कम आये हैं कि मैं बार-बार उन्हें सपनों में जिये बिना नहीं रह सकता. मैं सारी रात तुम्हारे सपने देखता रहूंगा और रात ही क्यों, हफ्तों, महीनों और बरसों तक मैं तुम्हारे बारे में सपने देखूंगा. कल मैं यहां इसी सपने और इसी स्थान पर जरूर आऊंगा और फिर आज के दिन की इन घड़ियों की याद करूंगा. यह स्थान मुझे पहले ही से बहुत पसंद है. पीटर्सबर्ग में इसी तरह से दो-तीन स्थान और हैं जो मुझे प्रिय हैं. एक बार तो मेरी इन स्मृतियों ने मुझे रोने को विवश कर दिया, बिल्कुल तुम्हारी तरह – और कौन जानता है, शायद तुम भी कुछ देर पहले अपनी स्मृतियों के लिए ही आंसू बहा रही हो. लेकिन मैं फिर बहक गया, देखो, मुझे कृपा करके क्षमा करना इस घृष्टता के लिए. शायद एक समय तुम इस स्थान पर आकर बहुत प्रसन्न होती थीं."

"बहुत अच्छा," लड़की ने कहा, "मैं सोचती हूं कल दस बजे मैं यहां पर आ पाऊंगी. मुझे यह भी लग रहा है तुम्हें कुछ फासले पर रखना अब अधिक देर संभव न होगा. बस, बात इतनी ही है कि मुझे यहां पर आना है. यह न सोचना कि मैं तुम्हारे साहचर्य का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आनंद उठाने आऊंगी. यह बात समझ लो कि कुछ निजी कारणों से कल मुझे यहां पर आना है. केवल यही एक बात है बस... और यह भी मैं स्पष्ट कर दूं कि अगर तुम भी आओ तो मुझे कुछ एतराज न होगा. इसका एक कारण तो यह है कि कहीं आज रात की तरह कोई दुर्घटना न हो जाये. पर यह तो अलग बात है. संक्षेप में यही कि मैं बस तुमसे यहां पर मिलना चाहती हूं... किंतु तुमसे दो-चार बातें कर सकूं. लेकिन अब तो मेरे बारे में कोई कठोर राय न बनाओगे, कि बनाओगे? तुमने कहीं यह तो नहीं सोचा कि मैं बड़ी जलदी घनिष्ट हो जाती हूं? मैं तुमसे मिलने का वादा कभी न करती, अगर... परंतु इसे अभी अप्रकट ही रहने दो. हां, लेकिन मेरी एक शर्त भी है."

"एक शर्त! बताओ, मुझे तुरंत बताओ, तुम कहो तो मैं तुम्हारी हर शर्त मानने को तैयार हूं. तुम कहो तो मैं कुछ भी कर सकता हूं." मैं व्याकुल होकर चीख पड़ा, "मैं अपने पर काबू रखूंगा, मैं तुम्हारा कहना मानूंगा, तुम्हारे साथ सम्मानजनक व्यवहार करूंगा... तुम मुझे जानती हो."

"मैं तुम्हें जानती हूं इसीलिए तो कल आने का निमंत्रण दे रही हूं." लड़की ने हंसकर कहा, "मैं तुम्हें अच्छी तरह समझ गयी हूं. लेकिन ध्यान रखना कि तुम एक ही शर्त पर जाओगे. मेरी विनती है कि तुम उसे जरूर निभाना – तुम देखते हो मैं कितनी स्पष्टवादी हूं? बस मेरी शर्त केवल इतनी-सी है कि कहीं तुम मुझसे प्यार न करने लगना... तुम्हें ऐसा नहीं करना चाहिए, मैं फिर तुमसे कह देती हूं. मैं तुम्हारी मित्र बनने को जरूर तैयार हूं, बढ़ाओ अपना हाथ और मेरे हाथ पर रखो... लेकिन मेरी बस यही विनती है कि तुम अपने दिल को मेरे प्यार से पीड़ित न करना!"

"मैं कसम खाता हूं!" मैंने उसका हाथ पकड़ते हुए भावावेश में कहा.

"बस रहने दो, कसम खाने की जरूरत नहीं. मैं जानती हूं तुम बारूद की तरह तुरंत फट पड़ते हो. मेरी इस चेतावनी का ध्यान रखना. काश! तुम जानते होते कि मुझसे भी कोई बात करने वाला नहीं, कोई सलाह देने वाला नहीं. यह सच है कि सड़क चलते किसी को मददगार नहीं मिला करते, किंतु तुम अपवाद हो. मैं तुम्हें इतनी अच्छी तरह समझ गयी हूं जैसे बीसों साल से हम-तुम एक दूसरे के मित्र है. अच्छा तुम अपना वादा तो न तोड़ोगे, बताओ?"

"यह तो तुम स्वयं देख लोगी... लेकिन अब मेरी ये समझ में नहीं आता कि यह बीच का समय कैसे कटेगा."

"बस जाकर गहरी नींद में सो जाना, यही एक उपाय है. शुभ-रात्रि! और याद रखना मैंने तुम्हारे वादे पर भरोसा किया है. तुमने कितनी गहराई से कहा था कि सचमुच भाई का स्नेह भी तुमसे किसी ने न मांगा! जानते हो, तुमने यह बात इतने मार्मिक, इतने प्रभावशाली ढंग से कही थी कि मैंने तत्काल तुम पर विश्वास करने का निश्चय कर लिया."

"है भगवान! लेकिन कैसे, और किस बात का विश्वास?"

"कल तक रुको! तब तक इस रहस्य को गुप्त ही रहने दो. तुम्हारे लिए भी यह अच्छा साबित होगा. क्योंकि कल्पना में ही सही, तुम्हारी स्वप्नीली प्रवृत्ति को यह सब एक रोमानी कथानक जैसा लगेगा. हो सकता है, जो रहस्य मैं आज तुमसे छिपा रही हूं, कल बता दूं, या कुछ भी न बताऊं. पहले मैं तुमसे और बहुत-सी बातें करूंगी जिससे हम लोग एक दूसरे को और अच्छी तरह से जान लें."

पांचवां तलाक

एक प्रसिद्ध अभिनेत्री चार बार तलाक ले चुकी थी और अब उसके पांचवे विवाह की चर्चा सारे देश में फैली हुई थी. इस बात का उसे बहुत गर्व था.

एक बार वह एक ऐसी अभिनेत्री से मिली, जो उससे कम प्रसिद्ध थी और दो तलाक ले चुकी थी.

बातचीत के दौरान दूसरी अभिनेत्री ने उसकी दिन प्रति दिन बढ़ती हुई मशहूरी का जिक्र कुछ व्यंग से किया, तो पहली अभिनेत्री ने गर्व से कहा, "मेरी मशहूरी की बुनियादें हैं—चार तलाक. और अब मैं पांचवें तलाक के लिए तैयारी कर रही हूं!"

"हां, हां, बिल्कुल ठीक. मैं कल तुम्हें अपने बारे में सब कुछ बता दूंगा. लेकिन, यह सब हो क्या रहा है? लगता है मेरे साथ कोई चमत्कारी घटना घट गयी है. हे ईश्वर, मैं कहां पहुंच गया हूं? अच्छा सच-सच बताना, कहीं तुम्हें इस बात के लिए मन ही मन पछतावा तो नहीं हो रहा है कि तुमने और सभी लड़कियों की तरह मुझे पहले ही क्यों न चलता कर दिया? दो मिनट के इस समय में तुमने मुझे सदा-सदा के लिए सुखी बना दिया. हां, सुखी बना दिया! कौन जानता है, तुम्हारे ही साहचर्य के प्रभाव से अब मैं अपने आत्मविश्वास को लौटता हुआ महसूस कर रहा हूं और मेरी सारी आशंकाएं समाप्त हो गयी हैं. काश! इसी तरह के क्षण मेरे जीवन में बार-बार आते! अच्छा तो बस, कल मैं तुम्हें सब कुछ बता दूंगा अपने बारे में. कल तुम मेरे बारे में सभी कुछ जान लोगी. सभी कुछ."

"अच्छी बात, ऐसा ही करेंगे. लेकिन शुरूआत तुम्हें ही करनी होगी."

"जैसा तुम कहो."

"अलविदा!"

"अलविदा."

हम अलग हुए. मेरे हर्ष का ज्वार थम नहीं रहा था. मैं घर न जा सका और रात भर घूमता रहा... ओह! कल ही तक की बात है...!

"देख लिया न? आखिर तुम जिंदा बच ही गये!" उसने हंसकर अपने हाथों में मेरे हाथ लेते हुए कहा.

"मैं तो दो घंटे से यहां पर आया हूं. तुम कल्पना नहीं कर सकतीं कि आज का दिन मैंने कैसे गुजारा था"

"मुझे मालूम है, मुझे अनुमान है—लेकिन हमें अब मतलब की बात पर आ जाना चाहिए. जानते हो मैं यहां पर क्यों आयी हूं? आज मैं कल की तरह तुमसे फिजूल की गपशप नहीं करूंगी. अच्छा तो अब! देखो भविष्य में हमें अपने व्यवहार में जरा समझदारी से काम लेना चाहिए. कल रात मैं इन सब बातों पर बड़ा विचार करती रही."

"लेकिन यह तो बताओ कि किस बात में हमें समझदारी दिखाने की जरूरत है? जहां तक मेरा सवाल है, मैं तुम्हारी हर बात मानने को तैयार हूं. लेकिन सच तो यह है कि मेरे जीवन में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समझदारी की बात तो बस यही हुई है कि हम और तुम मिल सके."

"सचमुच? सबसे पहले तो मेरा अनुरोध यह है कि मेरे हाथ इतने जोर से मत दबाओ और दूसरी बात यह कि आज दिन में बहुत देर तक मैं तुम्हारे विषय में सोचती रही.

"अच्छा! और किस नतीजे पर पहुंची?"

"मैंने निश्चय किया कि सारी बातों की शुरूआत फिर से की जाये. क्योंकि आज सुबह मैंने यह पाया कि मैं तुमसे अच्छी तरह परिचित ही नहीं और कल रात का मेरा व्यवहार बिल्कुल बचकाना था. एक बेवकूफ लड़की जैसा. और इसमें गलती मेरे कोमल हृदय की थी. दूसरे, मैंने जो अपनी ढेर-सी प्रशंसा कर डाली,वह बिल्कुल उसी तरह थी कि जिस तरह अपनी छोटी-छोटी उपलब्धियों का मूल्यांकन करते समय हर मूर्ख व्यक्ति करता है. इसीलिए, मैंने अपनी गलती सुधारने के लिए निश्चय किया कि पहले मुझे तुम्हारे बारे में हर छोटी से छोटी, और बड़ी से बड़ी बात मालूम करना चाहिए. लेकिन चूंकि और किसी से पूछताछ करके मैं यह पता लगा नहीं सकती इसलिए अब तुम्हीं मुझे अपने विषय में सारी बातें बता डालो. गुप्त से गुप्त बात भी. अरे! तुम कैसे आदमी हो? जल्दी शुरू हो जाओ और मेरी बात का जवाब दो. हां, तो फिर सुनाओ अपनी जीवन-कथा."

"अपनी जीवन-कथा?" मैं चकराकर चीख पड़ा, "मेरी कथा कैसी! लेकिन तुम्हें बताया किसने कि मेरी भी कोई कहानी है? मेरी कोई कथा-वथा नहीं है."

"अगर तुम्हारी कोई कहानी नहीं है तो तुम भला जीवित कैसे हो?" उसने हंसते हुए मेरी बात काटी.

"मेरे जीवन में कोई कहानी है ही नहीं. मैंने तो अभी तक बस घटनाहीन एकाकी जीवन बिताया है, सबसे अलग. बिल्कुल अकेले. तुम जानती हो एकाकी का अर्थ क्या होता है?"

"एकाकी—लेकिन यह कैसे? क्या तुम्हारा मतलब है; तुम कभी किसी से मिले ही नहीं."

"ओह नहीं, यूं तो लोगों से अक्सर ही मिला करता हूं. फिर भी, हूं मैं एकाकी ही."

"क्या तुम कभी किसी से बात नहीं करते?"

"अगर इस शब्द को संकुचित अर्थ में न लिया जाये तो मैं कहूंगा—नहीं!"

"लेकिन तुम हो किस तरह के आदमी, जरा बताओ. एक पल रुको, शायद मैं समझ गयी. लगता है, मुझे जैसी तुम्हारी भी कोई नानी है. वह बेचारी है तो अंधी. जमाना बीत गया, उसने मुझे कहीं आने-जाने ही नहीं दिया. इसीलिए बातचीत करने की आदत भी मेरे अंदर से लुप्त होती जा रही है. दो साल पहले मैंने कोई शरारत की थी. उसने तुरंत सोचा कि मुझ पर कोई अंकुश नहीं रह गया है. बस, उसने मुझे बुलाया और मेरे कपड़ों को अपने कपड़ों के साथ सेफ्टी-पिन से टांक लिया—और तब से रोज दिन भर में उसके साथ सेफ्टीपिन से बंधी बैठी रहती हूं. नानी है तो अंधी, लेकिन मौजे बुन लेती है. बस वह दिन भर मौजे बुना करती है और मुझे उसके बगल में बैठे रहना पड़ता है. बैठे-बैठे या तो मैं भी कोई सिलाई-कढ़ाई का काम किया करती हूं या किसी पुस्तक को पढ़कर नानी को सुनाया करती हूं. किसी को दो साल तक इसी तरह से बांधकर रखना है बड़ी बेहदा बात."

"हे भगवान्! कितने दुर्भाग्य की बात है यह! लेकिन मैं बताऊं—मेरे कोई नाना-नानी या दादा-दादी नहीं हैं."

"लेकिन अगर यह बात नहीं है तो तुम घर पर कैसे बंधे रहते हो?"

"देखो, क्या तुम जानना ही चाहती हो कि मैं किस तरह का प्राणी हूं."

"जरूर जानना चाहती हूं."

"बिल्कुल सही-सही?"

"बिल्कुल सही."

"अच्छा तो फिर सुनो. मैं आत्मार्थी हूं."

"आत्मार्थी? कैसा आत्मार्थी?" लड़की ने विस्मित होकर कहा और इस तरह खिलखिलाकर हंसी जैसे बरसों से उसे हंसने का मौका ही न मिला हो. तुम तो बड़े मजेदार आदमी हो जी. देखो, वहां पर एक बैंच पड़ी है, जिस पर पहले हम बैठ जायें, तब आगे बात हो. इस तरफ कभी कोई नहीं आता. न यहां पर कोई हमारी बात सुन लेगा, ऐसी कोई आशंका है. अच्छा, तो अब तुम अपनी कहानी शुरू करो. यह तो प्रकट हो ही गया कि कहानी तो हमारे पास है. लेकिन तुम जो भी कहते हो उसे रहस्यमय बनाते जाते हो. सबसे पहले यह बताओ कि 'आत्मार्थी' किसे कहते हैं?"

"आत्मार्थी? आत्मार्थी एक सनकी किस्म का और उपहासास्पद प्राणी होता है," मैंने उसकी बच्चों जैसी हंसी का साथ देते हुए कहा, "यह उसका स्वभाव होता है. सुनो, तुम जानती हो स्वप्नदर्शी किसे कहते हैं?"

"स्वप्नदर्शी? अरे वाह, यह कौन नहीं जानता? मैं स्वयं स्वप्नदर्शी हूं. जब मैं नानी के बगल में बैठी होती हूं तो मेरा मन जाने कहां उड़ा करता है. और तब मैं सपनों के जाल बुनना शुरू कर देती हूं और वे मुझे यहां तक बहकर ले जाते हैं कि मैं कल्पना में देखती हूं कि एक चीनी राजकुमार के साथ मेरा ब्याह हो गया है. तुम जानते हो, स्वप्नदर्शी होना कभी-कभी बड़ा अच्छा होता है. लेकिन नहीं, शायद ऐसा नहीं है. मुझे नहीं मालूम, हो सकता है इस बारे में तुम्हारी कुछ और धारणा हो," लड़की ने अंतिम वाक्य कुछ गंभीरता से कहा.

"बहुत सुंदर! जब तुमने स्वयं की चीनी राजकुमार से ब्याह रचाये हुए कल्पना की है तो तुम मुझे पूरी तरह समझ लोगी. अच्छा तो अब सुनो. लेकिन जरा ठहरो, मुझे अभी तक तुम्हारा नाम भी नहीं मालूम!"

"आखिरकार तुम्हें ध्यान आ ही गया. इससे पहले यह बात तुम्हें नहीं सूझी थी? हे ईश्वर! मेरे दिमाग में तो यह बात कभी आयी ही नहीं. मैं इसके बिना ही काफी खुश था."

"मुझे नास्तेंका कहते हैं."

"नास्तेंका-बस, इतना ही है?"

"हां इतना ही. लोभी आदमी, क्या इतना तुम्हारे लिए पर्याप्त न होगा?"

"पर्याप्त? उल्टे, यह तो पर्याप्त से भी अधिक है, बहुत बहुत अधिक. नास्तेंका तुम निश्चय ही बड़ी कोमल हृदय लड़की हो, जो तुम मुझे अपने नाम से पुकारने की अनुमति दे रही हो."

"मेरी भी यही धारणा है कि मैं कोमल-हृदय हूं. अच्छा, अब आगे बढ़ो."

"ठीक. तो नास्तेंका, यह मजेदार कहानी मैं अब शुरू करता हूं." □

अगले अंक में

कितनी मजेदार थी यह कहानी... कितने सुखों और दुखों को लपेटे लपेटे आगे बढ़ रही थी यह...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनोहर लाल ने अपनी बेटी के हाथ तो पीले कर दिए... लेकिन उनकी फूल जैसी बच्ची मुरझा गई।

मनोहर लाल ने अपनी बेटी को बड़े लाड़ प्यार से पाला पोसा। अभी वह सोलह साल की भी नहीं हुई थी कि तुरन्त उसकी शादी कर दी। वर तो अच्छा ढूंढ़ा लेकिन मनोहर लाल ने यह नहीं सोचा कि शान्ता ख़ुद अभी बच्ची ही तो है। घर गृहस्थी और गर्भवती होने का भार कैसे सह सकेगी! कुछ ही महीनों में शान्ता गर्भवती हुई लेकिन वह मां ना बन सकी। कच्ची उम्र होने के कारण बच्चा ठहर न सका। डाक्टरों ने शान्ता की जान तो बचा ली लेकिन उसका स्वास्थ्य दुबारा न बन सका।

मनोहर लाल को अपनी जल्दबाज़ी पर रोना आ रहा है। काश, वे दो-तीन साल तक रुक जाते और अपनी बेटी को फलने-फूलने और बढ़ने का मौका देते।

याद रखिए लड़की की शादी अठारह वर्ष और लड़के की इक्कीस वर्ष से पहले करना उन पर अत्याचार करना है। उन्हें ज़िंदगी की जिम्मेदारियों का सामना करने लायक बनने का समय दें।

डाक्टर की सलाह मानिए :

डाक्टरों का कहना है कि लड़की के शरीर का विकास 18 वर्ष की आयु तक होता रहता है। वह 15-16 साल में जवान ज़रूर दिखती है लेकिन गर्भाशय और डिम्ब ग्रन्थियों का विकास 18 वर्ष तक होता रहता है। अगर लड़की 18 वर्ष से कम आयु में माँ बने तो ये मुश्किलें सामने आती हैं :

1. **लड़की के शरीर का विकास रुक जाता है।**
2. **18 वर्ष से कम उम्र माँ की सन्तान कमज़ोर और कम वज़न की पैदा होती है।**
3. **ऐसी कमज़ोर या कम वज़न संतान की बहुधा मृत्यु हो जाती है।**
4. **क्योंकि 18 वर्ष से कम उम्र में कुछ प्रजनन अंगों जैसे गर्भाशय और डिंब ग्रंथियों का विकास पूर्ण नहीं होता इसलिए अक्सर गर्भपात हो जाता है। माँ बनने में भी कठिनाइयाँ आती हैं।**
5. **पैलविस का पूर्ण विकास 18 साल से पहले नहीं हो पाता। इसलिए बच्चे का सिर उसकी तुलना में बड़ा पड़ सकता है। प्रसव में बाधा से अन्दरूनी अंगों को नुकसान पहुंच सकता है, जिससे मूत्राशय या मलाशय में कमजोरी पैदा हो जाती है।**
6. **कम उम्र में यौन-सम्बन्ध से गर्भाशय-मुख में कैंसर होने की संभावनाएं बहुत अधिक बढ़ जाती हैं। यह भारतीय महिलाओं में कैंसर का मुख्य कारण है।**

याद रखिए: बच्ची के बच्चा होना उसके साथ घोर अन्याय है।
अठारह वर्ष से पहले लड़की और इक्कीस वर्ष से कम लड़के की शादी क़ानूनन अपराध है।

और जानकारी और मुफ़्त पत्रिका के लिए इस पते पर लिखिए: पोस्ट बाक्स नं. 5420 नई दिल्ली 110011

davp 88/209

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तकनीकी-युग के अंधकार से लड़ने का संकल्प

हिंदी के नये कथाकारों पर तकनीकी युग की वैज्ञानिक चेतना ने इधर यह असर जरूरी तौर पर डाला है कि वे महत्वपूर्ण प्रश्नों, समस्याओं, जीवन की जटिलताओं को लघु आकार में सुश्लिष्ट अनुभवों से रचने लगे हैं. यंत्र युग की मन:स्थितियों, विभीषिकाओं ने मानवीय संवेदना की केंद्रीय स्थिति में हलचल पैदा कर दी है. आदमी के भीतर का आदमी यंत्र दानव के प्रति चौकन्ना है, भयभीत है. त्रस्त है. शस्त्र शक्ति के उमड़ते हुए ज्वार में भी आप अपनी मानवीय संवेदना को नष्ट नहीं होने देना चाहते हैं और मां-चेतना का सृजन ममता-करुणा से आबद्ध रहना चाहता है. यंत्र प्रलय में मानव को डूबने से मां-चेतना ही बचा सकती है. गिरिराज किशोर का उपन्यास, 'असलाह' इसी विचार-मंथन की अभिव्यक्ति है. अपने छोटे आकार में यह उपन्यास बहुत कुछ लंबी कहानी का ही विस्तार लगता हैं. उपन्यास का संपूर्ण रूप तंत्र पांच हिस्सों और अनके चिंतनात्मक शीर्षकों के रोलों को थामे हुए है. किंतु इसकी समग्र प्रभावान्विति में बिखराव नहीं है. एक भीतरी कलात्मक कसावट इस उपन्यास को एक नये कथा-प्रयोग में बदल देती है. कथा ने आज के इंसान की हालत के जिन बुनियादी सवालों का सामना किया है—वे विचार के स्तर पर महत्वपूर्ण सार्थकता रखते हैं.

दरअसल यह उपन्यास उस आदमी की भीतरी तकलीफ का मनोमंथन है जो शस्त्रों की शक्तिशाली दौड़ में भी आदमी की आंतरिक लय करुणा को हर कीमत पर बचाना चाहता है. हथियार-प्रेम से मां-चेतना का प्रेम ज्यादा बड़ा और अर्थवान है और यहां अंततः इसी मां-प्रेम की जीत भी होती है. नायक अमरी की पूरी आवाज उसकी घरवाली की मूल चिंता के सामने पराजित हो जाती है और अकेली आवाज हथियारों के शक्ति प्रवाह को सोख जाती है. उपन्यास के आरंभ में अमरी अपने पिता दरोगा से पिटता है. पिता की पिस्तौल के प्रति उसका जन्मजात आकर्षण बढ़ता ही रहता है—यह हथियार आकर्षण इतना प्रबल है कि इससे तंग आकर उसकी प्रेमिका चंदा भी उसे छोड़ जाती है. अमरी के मन में पिस्तौल की काली भुजंग नाल उंगली की तरह आंखों में घुसी हुई है. वह पापा के जूतों के तरह हथियारों की लाइन लगाना चाहता है. पिता द्वारा दी गई नकली पिस्तौल भी बच्चे को मार-पीट कर दर्द भुला देती है. और नकली से असली की ओर बढ़ने की संकल्पबंद्ध हैं. यही कथा उपन्यास का पूरा ढांचा पा लेती है. इस पर कहानी के कई स्तर हैं कई मोड़दार, घुमावदार हैं—तनाव हैं. अमरी की दोस्ती का एक मोड़ असलाह घर के इंचार्ज के लड़के से शुरू होता है. वह शस्त्रागार में वह रिवाल्वर देखता है जिसकी मूठ घूमी हुई है—मूठ हाथी दांत से बनी है—यह सिराजुद्दौला रिवाल्वर है—नये जमाने के हथियारों की तुलना में यह कुछ नहीं है. किंतु बच्चे के लिए इसका महत्व है. बाल मन में ललक का अतीत संसार है वह उसे जीना चाहता है. असलाह घर के नए अधिकारी के आ जाने पर फिर मोड़ हैं—बच्चा चानमारी देखने में तन्मय हो जाता है. चानमारी का संगीत उसे प्रेमिका के संगीत से ज्यादा मोहक लगता है. यह चानमारी प्रेम एक दिन कर्नल से दोस्ती करा देता है. उसकी इच्छा उमड़ती है—"मुगल बादशाहों के पास बेगमों का हरम होता है. उसके पास हथियारों का हरम होता है." (पृ.33) यही हथियार-प्रेम-बढ़ता जाता है. इतना किसी अमरी नवविवाहिता पत्नी से भी उतना प्यार नहीं करता है—जितना हथियारों से. उसने पत्नी से पहली ही रात कहा, "मेरे पिता ने मेरी शादी जबरदस्ती की है. मैं आदमियों को कम हथियारों को ज्यादा प्यार करता हूं." (पृ. 43) हालत यहां तक आ पहुंची कि पत्नी घबरा गयी. यहां विशेष ध्यान देने की बात यह है कि गिरिराज किशोर का पुरुषमन औरत के मनोविश्लेषण में बेहद रमता है उन्हें मौका भर मिले वे नारी के मन का विश्लेषण एक मनोविश्लेषणा शास्त्री की मुद्रा में करने लगते हैं. वे नारी मन के विश्लेषण की भी तमन्ना रखते हैं—उसमें गोता पर गोता खाते हैं—एक अतृप्त अंतर्मन की घुमड़न उनका पीछा करती है.

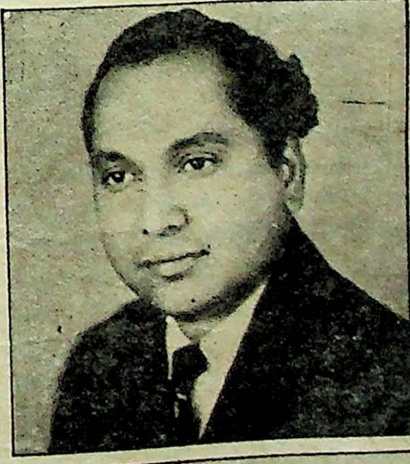

असलाह : गिरिराज किशोर
प्रकाशक : वाणी प्रकाशन, दिल्ली.
मूल्य : तीस रुपये

अमरीकी पत्नी बच्चे पर बच्चे पैदा करती है और वह हथियारों का व्यापारी बन जाता है. अमरी हथियारों के कदरदान के रूप में प्रसिद्ध हो जाता है. टेक्नालाजी के विकास और वैज्ञानिक दृष्टि के प्रतीक हैं. वह स्वयं उधर बढ़ता है बच्चों के नामकरण पर हथियारों का नामकरण करता है. यही उसकी विज्ञान आधुनिकता-संस्कृति का प्यार है. सभी उससे थरथराते हैं हथियारों का शक्ति पुरुष. डेमोक्लीज की नई तलवार उसके हाथ में है. पर पत्नी नहीं डरती है—मां-चेतना, नहीं डरती है, वह बराबर अपने बच्चों को पिता अमरी के चिंतन विरोध के लिए तैयार करती है और कहती है, "मेरी इस कोख को कोख ही रहना देना मेरे बच्चे मशीन में न बदल देना". उपन्यासकार की कथा का यह विशेष विचार बिंदु है. मशीनी संस्था के प्रतीक और मानव संवेदना का सृजन प्रतीक द्वंद्व ग्रस्त है. आदिम शस्त्र प्रेम और आदिम ममता के आदिम बिंबों के द्वंद्व चल रहा है. नयी तकनीकी युग की छाया में पलता थर्राता मानव, विश्वयुद्धों की विज्ञान मार से मरा मानव पूरा दृश्य झांकने लगता है.

कृष्ण दत्त पालीवाल

avp 88/209

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विलक्षण चारित्रिक सामर्थ्य

द्रौपदी का चरित्र अब तक के स्त्री पात्रों में शायद सबसे अनोखा है क्योंकि एक ओर तो उसे स्मरणीय कन्याओं में स्थान देकर दीप्तिसंपन्ना माना है तो दूसरी ओर पांच पुरुषों की भोग्या होने से उसे दलिता भी स्वीकारा है. द्रौपदी के इसी अनोखेपन और जटिलता को लेकर अनेक कवि-कथाकार और नाटककारों ने उसे अपनी कृतियों की नायिका बनाया है, पर द्रौपदी के स्त्री-मन में निरंतर चलते इस महाभारत को प्रतिभा राय ने जिस तरह अपनी कृति 'याज्ञसेनी' में महारत से अंकित किया है, वह चिरस्मरणीय स्वीकारा जायेगा. प्रतिभा राय ओड़िया की प्रसिद्ध लेखिका हैं, सोलह उपन्यास सहित्य-संसार में अपना स्थान बना चुके हैं, पर इनका याज्ञसेनी (द्रौपदी) इन सबमें विशिष्ट है. द्रौपदी के मन के भीतर का महाभारत तो सभी शुरू हो गया था जब उसकी सास कुंती ने अनजाने में ही अपने पांचों पुत्रों की पत्नी बनने का आदेश उसे दे दिया था. द्रौपदी के पिता कुंती मां के इस आदेश के मंतव्य को बूझकर आश्चर्य से भर गये. विचलित होकर कह उठे, "कैसी बात कर रही हैं? एक पुरुष से बहुनारी विवाह का तो विधान है, पर एक नारी का बहु पुरुष से विवाह करने से स्त्रीधर्म नष्ट हो जाएगा."

पांचों भाइयों को एकसूत्रता में निबद्ध करने का गुरुतर भार द्रौपदी को उठाना है, "राजा द्रुपद! मुक्ता हों, पुष्प हों, देवता के गले में शोभाने के लिए ही उन्हें माला में ग्रंथित करना होता है. सूक्ष्म सूत्र को छोड़ पुष्प या मुक्ता को एकत्र करना संभव नहीं. आज वैसे ही आर्यावर्त में धर्म की रक्षा के लिए पांचों पांडवों का माला सदृश एकत्र ग्रंथित होना आवश्यक है. पुष्पहार देवता के गले में शोभा पाता है, पर पुष्पों में छिपे सूत्र की गहनीयता कौन अस्वीकार करेगा? वैसे ही पंच पांडव आर्यावर्त में धर्म की प्रतिष्ठा करेंगे तो भी कृष्णा (द्रौपदी) की महती भूमिका इतिहास के पवित्र अक्षरों में लिपिबद्ध होगी."

और, द्रौपदी के भीतर की औरत आर्त स्वर में कह रही है, "मैं हुई पंचपुष्पों को एकत्र बांध रखने का सूक्ष्म सूत्र, जिसे कोई नहीं देखेगा. उसका दुख-दर्द कोई नहीं पहचानेगा. उसकी यंत्रणा की टेर किसी को नहीं मिलेगी." सूत्र स्वरूपा द्रौपदी की नियति सबमें अनस्यूत होते हुए भी ओझल रहना है. उसका मन हाहाकार कर उठता है, "कैसी विडंबनापूर्ण स्थिति है. एक-एक करके पांच बार अग्नि को साक्षी रखकर मैंने पंचपति वरण किया. पांच बार प्रतिक्षा की-काय मनोवाक् से मैं तुम्हारी हूं, नितांत तुम्हारी! पर क्या ऐसा संभव है? यह सत्य है या आत्म प्रवंचना?"

पांडवों में सबसे बड़े युधिष्ठिर द्रौपदी के प्रति आकर्षण की स्वीकृति देते हुए उसे बताते हैं, "याज्ञसेनी! तुम्हारा जन्म-वृतांत सुना तब से तुम्हारी ओर आकृष्ट था. मैं जानता था कि तुम्हारे बिना धर्म की रक्षा संभव नहीं. अतः तुम्हें अपनी करना पड़ा. अग्नि की साक्षी में तुमने मुझसे विवाह किया, इतना ही यथेष्ट है. मुझे कुछ और नहीं चाहिए. तुम अर्जुन को प्राप्य हो. उसी ने स्वयंवर में जय पायी है, अतः उसे तुम्हारे साथ संसार बसाने में आपत्ति नहीं. हमारे बीच यही पवित्र संबंध रहें."

युधिष्ठिर के वचनों को सुनकर द्रौपदी क्रोधाभिभूत होकर बोल उठी, "आप धर्मराज कहा कर पूजा पाते रहेंगे और मेरा सारा जीवन असत्य में बिताकर पाप अर्जित करती रहूं? अग्नि को साक्षी रखकर पति बनाने के बाद सिर्फ एक के प्रति स्त्री का कर्तव्य पालन करूं? मुझे दुनिया असती कहे, लेकिन पतियों के पास जीवन भर असत्य और अविश्वासनीय जीवन व्यतीत करने की ग्लानि क्यों भोगूं?"

द्रौपदी को शांत करने को युधिष्ठिर का कहना था, "तुम्हारे लिए किसमें प्रलोभन नहीं है? परंतु हम पांचों को संतुष्ट करना सहज नहीं है. हम पांचों की पांच प्रकार की रुचि और पच्चीस प्रवृत्तियां हैं....... तुम्हें इसमें कष्ट होगा. पुरुष की प्रकृति से तुम परिचित नहीं. तुम तो वैसे ही पांचों की प्रियतमा हो. हम में से कोई तुम्हें पल भर भी अपने निकट से अंतर नहीं करना चाहेगा. किसी को जरा-सा भी उपेक्षा सहन नहीं होगी."

द्रौपदी मन ही मन जैसे चीख उठी, "पंचपति के साथ एक-एक कर विवाह संपन्न होने तक मुझे अपने कुमारीत्व को अक्षुण्ण रखना होगा.

पंचपतियों की पत्नी होने पर भी द्रौपदी कैसे हरेक पति के प्रति एकनिष्ठ रह पाती है? द्रौपदी का मानना है, 'जिस दिन जिस पति के कक्ष में रहती हूं उस दिन दूसरे पतियों को लेकर कोई दुर्बलता नहीं होती. तब समझ लेती हूं कि मेरे पति एक ही हैं. अपना सारा प्रेम, निष्ठा उनके चरणों में उड़ेल देती हूं. तब कोई पुरुष मेरे अवचेतन में नहीं होता, कृष्ण को छोड़कर.' पर कृष्ण से तो द्रौपदी के देहातीत आत्मिक संबंध हैं और कृष्ण तो उसके पतियों के भी परम हितैषी और आत्मीय सखा हैं. तभी तो द्रौपदी का सोचना है, 'कृष्ण को चाहने में मेरा सतीत्व या पतिव्रत क्षुण्ण नहीं होता. कृष्ण-प्रेम पवित्र है, अनाविल है, आशा-प्रत्याशा से बहुत ऊपर है. अतः अपने सतीत्व और पातिव्रत्य पर कभी-कभी मुझसमें भी अहंकार हो जाता है!'

देह से परे हार्दिक या आत्मिक तौर पर किसी पर पुरुष के प्रति आकृष्ट हो जाना आज की स्त्री के लिए परम स्वाभाविक स्थिति है. 'द्रौपदी' में कथा-लेखिका डॉ. प्रतिभा राय ने द्रौपदीकी चरित्र-सृष्टि द्वारा इन प्रश्नों के समाधान देने चाहे हैं. "पृथ्वी की अधिकांश स्त्रियां शरीर से न सही, मन से असती कही जाएंगी. देह को रखने पर भी मन ही मन वे पर पुरुष के साथ मधुशय्या की रचना कर लेती हैं. पर मुझमें वैसा कुछ नहीं होता. युधिष्ठिर के साथ एकत्र रहते समय मैं कभी भीम की कामना नहीं करती. भीम के साथ कभी अर्जुन को नहीं बिसूरती." अपने संयमित और श्रृंखलित जीवन के लिए वह अपने संपूर्ण जीवन को साधना के कठोर मार्ग पर तपाती है. द्रौपदी के चरित्र की इस दीप्ति को प्रतिभा जी ने अपनी प्रतिभा से इस औपन्यासिक कृति में बड़ी मार्मिकता से उजागर किया है. द्रौपदी के पांच पतियों के प्रति एकनिष्ठ भाव की विलक्षण चारित्रिक सामर्थ्य को समझ पाने के लिए इस उपन्यास का पढ़ना अपरिहार्य है. ☐

प्रो. विश्वंभर 'अरुण'

द्रौपदी (उपन्यास)
रचनाकार : प्रतिभा राय
प्रकाशक : राजपाल एंड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली-6
मूल्य : साठ रुपये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुरुष प्रधान समाज की विसंगति पर सार्थक टिप्पणी

'और कब तक' उपन्यास में उपन्यासकार प्रदीप पंत 'भारतीय समाज में औरत की स्थिति' पर विस्तार से बात कर लेना चाहते हैं. इसके लिए उन्होंने उपन्यास के प्रमुख पात्र का नाम दिया है 'सुमति', जिसके चारों ओर कथा का तानाबाना बुना गया है. इसीलिए अगर उपन्यास का कोई पात्र अपनी निजी समस्या लेकर किसी दिशा में दूर निकल जाना चाहता है तो लेखक का अपनी कोठी बेचने के लिए अखबार में विज्ञापन देना और सुमति का अपनी संस्था के लिए कोठी खरीदना. शिल्प के इस कौशल को कथा की बनावट में एक कदम आगे बढ़ना कहा जा सकता है. लेखक ने यह कदम बहुत सोच-समझ कर किंतु स्वाभाविक ढंग से उठाया है.

जाने-अनजाने सुमति के जीवन में आए उतार-चढ़ाव ने उसे भीग कर सूख जाने के बाद कागज में आए कड़ेपन जैसा कर दिया. वह आज की एक आभ भारतीय नारी से जुड़े अनेक सवालों से जूझती है और साथ ही उसका अपने प्रति विश्वास उसे स्वयं तन कर खड़े होने में सहारा भी देता है. यानी वह व्यापक समाज की समस्याओं को लेकर भी चलती है और व्यक्तिगत प्रश्नों से भी संघर्ष करती है. इसी क्रम में वह शुभा और बसंती जैसी नारियों को भी अपने पैरों पर खड़ा होना सिखाती है. यह उसके व्यक्तित्व की दृढ़ता का ही परिणाम है कि वह शरद मेहता से टूट कर अलग होने के बावजूद बिखरने से बच गयी.

इस बात की सराहना की जाएगी कि सुमति के बड़े व्यक्तित्व को कृतिकार ने अपनी इच्छा या अपनी कल्पना से आगे-पीछे करने की कोशिश नहीं की, बल्कि उसे बड़े स्वाभाविक रूप में समाज के प्रति प्रतिबद्ध बनाया. सुमति के भारतीय उत्तरा को शरद मेहता को सौंपने बंबई जाती है, यह जानते हुए भी कि वहां उसकी सौत बैठी है. सुमति का यह तर्क भारतीय परिस्थितियों में सही है कि उत्तरा का बचपन तो कहीं भी कट सकता है, पर उसका विवाह पिता के नाम और सामीप्य से ही संभव होगा. सुमति पति के रूप में शरद को स्वीकार नहीं करती. अपने नाम के साथ जुड़ा 'मेहता' शब्द भी हटा देती है. पर उत्तरा के पिता के रूप में शरद को मान्यता देने पर बाध्य हो जाती है. सुमति अपनी इस विवशता पर कोई प्रश्न चिन्ह नहीं लगाती. उत्तरा को बंबई में छोड़कर वह वापस दिल्ली लौट आती है. अपने पीछे हवा में आती "मम्मी...मम्मी..." की आवाज पर वह मुड़कर नहीं देखती और न ही यह पूछती है कि 'और कब तक' ऐसी सामाजिक व्यवस्था चलेगी, जिसमें पति के रूप में भले ही पुरुष को त्याग दिया जाए, पिता के रूप में उसके अस्तित्व से इंकार नहीं किया जा सकता. वास्तव में ऐसा न पूछ कर वह मानो इस सवाल को परोक्ष रूप से ज्यादा गहराई से उठा देती है. यह लेखक की सफलता है.

उपन्यास के दो महत्वपूर्ण पात्र हैं—शैलेन और पारितोष. वास्तव में शैलेन और पारितोष के रूप में पूर्व और पश्चिम आमने-सामने खड़े हैं. संवादों के बीच दोनों में टकराहट होती है, जिसमें पछतावे का स्वर दोनों ही दिशाओं से उठता है. अंतर बस इतना है कि जहां शैलेन अपने अभावों को बीड़ी के कश में एक ओर हटा देता है, वहीं जिनेवा में संपन्न जीवन का सुख भोगता पारितोष अपने भारतीय संस्कारों की जड़ों से उखड़ा हुआ कराह उठता है.

नेल्सन, लोतिका, और रुक्मा... यह तीन पात्र भी भारत से जुड़े हैं. नेल्सन इसलिए कि उन्होंने एक सुंदर भारतीय स्त्री लोतिका से विवाह कर लिया. लोतिका ने भले ही एक योरोपियन से विवाह कर लिया, जिनेवा में रहती है, लेकिन साड़ी पहनना और माथे पर बिंदी लगाना नहीं छोड़ा. रुक्मा नौकरानी है. पैसा कमाने के लिए जिनेवा पहुंच गई, पर हर समय वापस भारत जाने के लिए आंखों में आंसू भरे रहती है. ये पात्र उपन्यास में बहुत थोड़ी-सी जगह घेरते हैं, लेकिन सवाल बड़े-बड़े उठा देते हैं. सारी भौतिक सुख-सुविधाओं और प्राकृतिक सौंदर्य से भरपूर जिनेवा रुक्मा के लिए खाली-खाली सा हो जाता है. क्योंकि वहां वह आत्मीयता नहीं मिलती जो भारतीय परिवेश में आज भी उपलब्ध है. गरिमा की बात दूसरी है. उसने पारितोष से विवाह अवश्य किया है. उसके पूर्वज भारतीय रहे हैं. पर इस सब से क्या, उसका जन्म तो जिनेवा में हुआ है. वह पारितोष के पक्ष को कैसे स्वीकार कर ले? गरिमा जब-तब पारितोष के भारतीय संस्कारों से टकराती रहती है. भारत में बसने की बात तो वह स्वप्न में भी नहीं सोच सकती. पारितोष को गरिमा इतनी दूर तक बदलने में कामयाब हो जाती है कि पारितोष एक झटके में भारत से संबंध तोड़ देता है.

उपन्यास में खलनायक से प्रतीत होते दो पात्र हैं—राम बाबू और शरद मेहता. पर सही अर्थ में रामबाबू को खलनायक का खिताब नहीं दिया जा सकता. वह वर्षों तक प्रापर्टी डीलर रहे और शेयर बाजार में दलाली की. अब रिटायर्ड जिंदगी में भी अच्छे-बुरे माल को इधर-उधर करके कमीशन खाना चाहते हैं, भले ही यह अच्छा-बुरा माल आदमी की शक्ल में ही क्यों न हो. खलनायक शरद मेहता को भी नहीं कहा जा सकता, क्योंकि वह तो शुरू से ही सैडिस्ट टाइप के चरित्र के रूप में एक्सपोज हो जाता है. परपीड़न में सुख पाने वाले और केवल अपने स्वार्थ के लिए जीने वाले शरद मेहता के चरित्र के प्रति पाठक के मन में लेखक बड़ी सफलता से गहरी नफरत भर देता है. उपन्यास के अंत में परिस्थितियां सुमति के पक्ष में बदल जाती हैं. शोषित-दलित नारी-समाज का अपनत्व ही सुमति से नहीं जुड़ता, बल्कि वह पुत्री व दामाद के रूप में उत्तरा-सौरभ, और साथी के रूप में डा. दवे को भी पा जाती है. यहां से सुमति के जीवन की दूसरी ही कहानी शुरू होती है—ऐसी कहानी जिसे सुख, संतोष और पूर्णता का वरदान प्राप्त है.

अतः कहा जा सकता है कि 'और कब तक' उपन्यास के 267 पृष्ठ तो सुमति के जीवन का पूर्वार्द्ध हैं और अभी सुमति के जीवन का उत्तरार्द्ध लिखा जाना बाकी है. बहरहाल 267 पृष्ठ तक आते आते सुमति के आगे एक विशाल संसार फैल गया है, और संसार शदर मेहता की दी झूठी गृहस्थी को छलना से एकदम भिन्न है और सामाजिक प्रश्नों और चनौतियों से भरा है.

धर्मेंद्र गुप्त

और कब तक : प्रदीप पंत
प्रकाशक : सामायिक प्रकाशन जटवाड़ा, दरियागंज नई दिल्ली-2
मूल्य : पचपन रुपए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाषा : अस्मिता की पहचान

☐ डा. नारायण दत्त पालीवाल

विविधता में एकता वाले हमारे देश में अनेक भाषाएं, उप भाषाएं, बोलियां, उप बोलियां हैं. जहां तक हिंदी का प्रश्न है यह भाषा सारे देश को जोड़ती चली आयी है और भाषा के स्तर पर भावनात्मक एकता के लिए हिंदी की भूमिका महत्वपूर्ण रही है. हिंदी के प्रति आदर की इस भावना के पीछे महात्मा गांधी की प्रेरणा ने संजीवनी शक्ति का काम किया. उनका स्पष्ट मत था– ''अगर स्वराज्य करोड़ों भूखे मरने वालों, करोड़ों निरक्षरों, निरक्षर बहनों, दलितों आदि का हो और इन सबके लिए होने वाला हो तो हिन्दी ही एक मात्र राष्ट्रभाषा हो सकती है.'' गांधी की इस वाणी ने उस समय जन-जन के मन में भाषायी स्वाभिमान कूट-कूट कर भर दिया था और सभी अंग्रेजी शासन से मुक्ति के साथ-साथ अंग्रेजी भाषा से भी मुक्ति चाहते थे. ऐसे ही वातावरण में स्वामी दयानंद सरस्वती ने कहा था- ''हिंदी द्वारा भारत को एक सूत्र में पिरोया जा सकता है.'' सुप्रसिद्ध विद्वान डा. सुनीति कुमार चटर्जी ने भी एकीकृत भारत के लिए एक भारतीय भाषा की आवश्यकता पर बल दिया. हिंदी हीं एक ऐसी भाषा है जो इस देश में एकता की ज्वलंत प्रतीक हो सकती है. इसी तरह के विचार के काका कालेलकर और विनोबा भावे देश में हिंदी का समुचित आदर न होने पर अत्यंत दुःखी थे.

हिंदी ने पूरे देश को एक सूत्र में जोड़ते हुए पारस्परिक स्नेह और भावनात्मक एकता के लिए आधार भूमि तैयार की. इस भाषायी तालमेल में संस्कृत, हिंदी, उर्दू तथा भारत की सभी क्षेत्रीय भाषाओं का भी महत्वपूर्ण सहयोग रहा. उस समय महत्वपूर्ण बात यह थी कि देश के सामने स्वतंत्रता का लक्ष्य था और सभी एक डोर में बंधे हुए इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए एकजुट होकर संकल्प लिए हुए थे. न भाषाओं का झगड़ा था और न प्रांतों का. इसीलिए जब देश स्वतंत्र हुआ तो भारतीय संविधान में राष्ट्रभाषा हिंदी को गौरवपूर्ण स्थान मिला और अनुच्छेद 343 के अनुसार राजभाषा के रूप में हिंदी को सरकारी कामकाज तथा पारस्परिक आदान-प्रदान की भाषा को स्वीकार किया गया. संविधान में भारत की सामासिक संस्कृति के विकास और भाषायी तालमेल के लिए क्षेत्रीय भाषाओं को भी मान्यता दी गयी और यह स्पष्ट कर दिया गया कि देवनागरी लिपि में लिखी गई हिंदी भाषा भारत की राजभाषा होगी, जिसके लिए शब्दावली प्रमुख रूप से संस्कृत से और उसके पश्चात भारत की क्षेत्रीय भाषाओं से ली जायेगी. यह निर्णय ठीक भी था क्योंकि माध्यम परिवर्तन की स्थिति में अभिव्यक्ति के लिए विभिन्न भाषाओं की शब्दावली, शैली, अलंकार आदि की सहायता अंततः हिंदी के विकास के लिए नितांत आवश्यक हैं. भारतीय भाषाओं का साहित्य समृद्ध है, अतः ज्ञान और विज्ञान के इस युग में जब विभिन्न क्षेत्रों का अंग्रेजी के स्थान पर हिंदी का प्रयोग किया जायेगा तो भारतीय भाषाओं के रूप शैली, पदावली और शब्द भंडार हिंदी को और भी सक्षम बनाने की दिशा में सहायक सिद्ध होगा. कार्यालयों, न्यायालयों, विद्यालयों, कार्यशालाओं, निजी उद्योगों या प्रशासनिक संस्थानों में जब हिंदी के प्रयोग की बात आती है तो हमें प्रसाद, पंत, निराला ने जिस भाषा में हिंदी साहित्य को सजाया है उसके स्थान पर पारस्परिक आदान-प्रदान के लिए सहज और बोधगम्य भाषा की आवश्यकता होती है. इसीलिए स्वतंत्रता के पश्चात सरकारी और गैर सरकारी स्तर पर विभिन्न भारतीय शब्दकोश, शब्द संग्रह, संकलन और नियमों, कानूनों, अधिनियमों आदि का हिंदी रूपांतर सुलभ किया गया. हिंदी के प्रयोग के लिए साधन जुटाये गये. नियम, अधिनियम तथा कानून बनाये गये. मंत्रालयों, कार्यालयों में हिंदी के कक्ष स्थापित किये गये. निजी संस्थानों ने भी हिंदी के प्रचार और प्रसार की दिशा में कदम उठाये. सभी ओर अंग्रेजी को हटाकर हिंदी अपना लेने की बात चल पड़ी, किंतु 40 वर्ष बीत जाने पर भी हिंदी को वह गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त नहीं हो सका जो संविधान द्वारा अपेक्षित था और अंग्रेजी का प्रचलन बराबर बना रहा. यह बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण है कि हमें अभी भी विदेशी भाषा से चिपके हुए हैं और वे भाषाएं जिनसे इस देश की संस्कृति की महत्ता की महक आती है, अभी भी उपेक्षित ही हैं.

हिंदी और भारतीय भाषाओं की उपेक्षा के पीछे जहां हमारा मनोवैज्ञानिक संकोच है वहीं अंग्रेजी से जुड़ी हुई झूठी प्रतिष्ठा भी इसके लिए उत्तरदायी है. जब तक हमारी मानसिकता नहीं बदलेगी और हम भाषायी स्वाभिमान के प्रति जागरूक नहीं होंगे तब तक अंग्रेजी से पीछा छूटना कठिन प्रतीत होता है. ऐसा लगता है कि हमारी कुछ परिस्थितिजन्य विवशताएं हैं जिनके कारण अंग्रेजी का मोह बना हुआ है और अंगीकार नहीं हो पा रहा है. हिंदी ही नहीं अन्य सभी भाषाओं का यही हाल है. हिंदी का विरोध किसी भारतीय भाषा से नहीं, अंग्रेजी से है. अतः हमें भारतीय भाषाओं को समुचित सम्मान देते हुए उन्हें कार्य व्यवहार की भाषा के रूप में अपनाना चाहिए. हमें हिंदी को और अन्य भारतीय भाषाओं को जन-जन की आवश्यकताओं और आकांक्षाओं को अभिव्यक्ति का माध्यम बनाना है. परिस्थिति यह है कि कहीं अंग्रेजी से जुड़े रहना राजनीतिक कारण है तो कहीं अन्य विवशताएं. हमारी मानसिकता तो यह गयी है कि हम जोरदार रूप में अंग्रेजी पढ़ने वाला या अंग्रेजी का प्रयोग करने वाले को ही पढ़ा-लिखा, प्रतिष्ठित एवं सुसंस्कृत मानते हैं. हीन भावना के कारण हिंदी को पिछड़े हुए लोगों की या दोयम दर्जे के नागरिकों की भाषा मानने वाली मनोवृत्ति भी इसका एक कारण है. हम अपने बच्चों को भी ऐसी शिक्षा देने में संकोच करते हैं जिससे उनके मन में अपनी भाषाओं के प्रति लगाव पैदा हो और वे उन्हें दिल लगाकर सीखें, उनका सम्मान करें. ☐

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कथा पहेली : जुलाई, 1988 के पुरस्कार विजेता तथा सर्वशुद्ध हल

इस बार 5000 प्रतियोगियों में चार प्रतियोगी ही सर्वशुद्ध हल भेज सके हैं. अन्य 100 प्रतियोगियों के भी प्रयास प्रशंसनीय रहे. सर्वशुद्ध हल भेजने वाले चार प्रतियोगियों में पुरस्कार राशि बराबर-बराबर वितरित की जा रही हैं.

कथा पहेली का सर्वशुद्ध हल

1. हरिमोहन की 'सुकन्या.'
2. 'घर गमला.'
3. 'सर्व और सुंदरी.'
4. सुधीश पचौरी.
5. 'पत्थर की अप्सरा.'
6. रक्तकंठ.
7. गणिकाओं के विभिन्न वर्गों से.
8. शिवप्रसाद सिंह की 'सुनो परीक्षित सुनो'
9. 'घर-गमला' और 'छोटा-सा इंद्रधनुष'.
10. 'सुकन्या'.

...और यह रहे पुरस्कार विजेता

1. केसरी कैलाश नाथ
309 पी.डी. कीटगंज, (श्याम स्टोर्स)
इलाहाबाद (उ.प्र.)

2. राम प्रसाद
अध्यक्ष, नागपुरी विभाग, गोस्सनर कॉलेज, रांची-834001 (बिहार)

3. योगिता सहगल
डा. हजरत जी का मकान, लोहिया बाजार, लश्कर, ग्वालियर (म.प्र.)

4. सरोज सिंह
66 रजनी बाबू रोड, कांचड़ापाड़ा, 24 परगना (प.बं.)

सारिका कथा पहेली

कहानियां गौर से पढ़िये और 200 रुपये के पुरस्कार जीतिए

सारिका कथा-पहेली में भाग लेने के लिए आप सभी आमंत्रित है. प्रतियोगियों को 'सारिका' के इसी पृष्ठ पर पूर्तियां भेजनी होंगी. पूर्तियां सादे कागज पर न भेजें. इस कथा पहेली के सभी प्रश्न सारिका अगस्त, 1988 अंक पर आधारित हैं. कार्यालय में डाक द्वारा हल प्राप्त होने की अंतिम तिथि 20 सितबर, 1988 है. पुरस्कार विजेताओं के नामों की घोषणा नवंबर, 1988 के अंक में दी जायेगी.

प्रतियोगियों के लिए विशेष

दूर-दराज के जिन इलाकों में पाठकों तक 'सारिका' देर से पहुंचती है वे 'सारिका कथा पहेली' में अपनी पूर्तियां 20 तारीख के बाद भी भेज सकते हैं. पूर्तियां भेजते समय यह उल्लेख अवश्य होना चाहिए कि 'सारिका' आप तक देर से पहुंची.

सारिका कथा पहेली : सितंबर 1988

1. विश्वप्रसिद्ध भारतीय कवि की प्रेयसी 'नलिनी' का मूल नाम .... है.
2. नपुंसक क्रोध को देखकर हंसने का संदर्भ .... कहानी में आया है.
3. 'एन एक्स फौर ए रानी' और 'द सौरोज ऑफ बर्बर' पुस्तकों के लेखक हैं क्रमशः .... और ....
4. कुछ समय पहले एक अरब देश ने एक विश्व प्रसिद्ध कृति पर प्रतिबंध लगाने की मांग की थी, किंतु विश्वव्यापी विरोध के चलते उसे अपनी यह मांगवापसी लेनी पड़ी. यह कृति है ....
5. यह पात्र जिन रचनाओं के हैं, उनके नाम कोष्ठक में लिखें.
   1. रघुनाथ (.........................) 2. विश्वकर्माजी (........................)
   3. अन्ना (...........................) 4. शहरयार (.........................)
6. अपनी कहानी के अंत पर टिप्पणी करते हुए ऐसी दूसरी कहानियों के अंत पर पाठकों से सवाल उठाने वाले कथाकार हैं ....
7. ज्ञानपीठ पुरस्कार-नियमावली में इधर हुए परिवर्तन से क्या लाभ होगा?
   ....
   ....
8. "संवेदनशील विषयों को अपने केंद्र में रखकर चलने वाले सीरियल की चुनौती 'तमस' की तरह दुहरी होती है." इस टिप्पणी से सुधीश पचौरी का अभिप्राय है...
   ....
   ....
9. "पता नहीं मुझे क्या हो गया है? सब लोग, सारा नया-नया-सा.... खिला-खिला-सा लगता है! सब मुझे प्यारे लगने लगे हैं और मैं सबकी प्यारी हो गयी हूं." यह संवाद .... का है.
10. इस अंक की सर्वश्रेष्ठ हिंदी कथा-रचना .... द्वारा लिखित .... है.

नाम ....

पता ....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजेंद्र राव

पत्रिकाएं : कुछ सरकारों की, कुछ सरोकारों की

अच्छा और गतिशील प्रशासन जनहित में नये से नया कदम उठाने में नहीं चूकता. पिछले एक दशक में पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओं के मूल्य तेजी से बढ़े हैं. जन सामान्य की पहुंच से बाहर हो रहे साहित्य को सस्ता और सुलभ बनाने की दिशा में उ.प्र., मध्य प्रदेश, राजस्थान, हिमाचल जैसे राज्यों में कम मूल्य की परंतु आकर्षक साहित्यिक पत्रिकाएं प्रकाशित करने को प्राथमिकता दी गयी है. साक्षात्कार, अतएव, मधुमती, विपाशा आदि पत्रिकाओं को लागत मूल्य से कम में उपलब्ध कराने में होने वाला घाटा राजकोष से ही आता होगा. इन पत्रिकाओं की छपाई और सजधज देखते ही बनती है. इसी क्रम मे दिल्ली प्रशासन की हिंदी अकादमी ने एक खूबसूरत दीखने वाली पत्रिका 'इंद्रप्रस्थ भारती' का प्रकाशन आरंभ किया है. यह नहीं कि वहां से पहले कोई सरकारी पत्रिका न निकलती रही, साहित्य अकादमी (या अकादमी) की भारी भरकम पत्रिका तो थी ही.

राज्य सरकारों के साहित्यानुराग और उत्साह के प्रति पूर्ण सराहन भाव रखते हुए भी यह कहे बिना नहीं रहा जा सकता कि अगर सचमुच पाठकों को सस्ता साहित्य उपलब्ध कराना है तो कागज एवम् अन्य मुद्रण सामग्रियों पर कर तथा अधिभार कम करके बेहतर तरीके से किया जा सकता है. सरकार द्वारा प्रकाशित या सहायताप्राप्त पत्र-पत्रिकाओं की चुनौती को स्वीकार करना स्वतंत्र प्रकाशनों के लिये उसी स्थिति में संभव हो सकेगा अन्यथा कम मूल्य की बहु प्रचारित पत्रिकाओं के माध्यम से रचनात्मक साहित्य का अप्रत्यक्ष सरकारीकरण हो जाने का खतरा बना रहेगा.

कतार से बाहर

सरकारी पत्रिकाओं की बेफिक्र कतार से बाहर, गरीब और शोषित जन के प्रति सरोकार के उन्मेष निकाली जा रही परिवर्तनकामी तेवर वाली एक अच्छी पत्रिका है—कतार. यह धनबाद से निकलती है और सबसे तारीफ की बात यह है कि सपादकद्वय-बृज बिहारी शर्मा और श्रीनारायण समीर का नाम किसी भी आपाधायी में सुनायी नहीं देता, वरना लघुपत्रिकाओं के प्रकाशन का पहला उद्देश्य ही अपने नाम की शोहरत मचाना होता है. हम अनेक महानुभावो और देवियों को जानते हैं जिन्हें अपना सिक्का चलवाने के लिये पत्रिका प्रकाशन जैसा द्रविड प्राणायाम करना पड़ा है. 'कतार' जनवादी पत्रिका है परंतु इसके प्रस्तुतिकरण में ताजगी है. वरवर राव की कविताएं और उन पर डा. मैनेजर पांडेय का लेख. वरवर राव के काव्य संकलन 'भविष्यत् चित्रपटम' पर आंध्र प्रदेश मे प्रतिबंध लगा. 1987 में, आज उनकी कविताएं अनूदित होकर हिंदी पत्रिकाओं में छा गयी हैं. कतार में उनकी 5 रचनाएं संकलित हैं. संजीव का नाटक '21 वीं सदी का जादू' और वरुणा धर की कहानी 'बदले हुए रुख' के अलावा सत्यभक्त जी पर दी गई सामग्री पठनीय तथा महत्वपूर्ण है. खटकने वाली पिष्टपेषित रचनाओं में अरविंद कुमार का समकालीन कहानी पर लिखा गया लेख है जिसमें संजीव, विजेन्द्र अनिल, सुरेश कांटक आदि वे संभवतः कमतर मूल्यांकन के लिये किन्हीं गोपेश जी को आड़े हाथों लिया गया है. इसी तर्ज पर सुरेश कांटक की एक तीखी टिप्पणी है. विजेन्द्र अनिल महोदय को लेकर 'नई रचना' के पिछले अंक में भी इसी तरह का एक लंबा पत्र व्यवहार छपा था. बहरहाल आगे के पृष्ठों पर विजेन्द्र अनिल के कथा संग्रह 'विस्फोट' पर लिखी अरविंद कुमार की ही समीक्षा है जिसे पढ़कर हमने इरादा कर लिया है. इस पुस्तक को जरूर पढ़ना है.

सर्वे भवंतु सुखिनः

आधुनिक 'सीकरी' की कुलीन पत्रिका 'इंद्रप्रस्थ भारती' के पहले दो अंक प्रभावशाली लगते हैं.

हां दूसरे अंक में अपेक्षाकृत परिष्कृत सामग्री है. चित्रा मुद्गल, सुरेश उनियाल की कहानियां, मटियानी की जैनेंद्र पर टिप्पणी और डा. सत्यपाल चुध का हिंदी भाषा के प्रथम उपन्यास 'परीक्षा गुरु' पर लेख उल्लेखनीय हैं. अमर गोस्वामी का रेखाचित्र 'समरेश बसु' बहुत सामयिक है. सबसे कमजोर पहलू है समीक्षा—दोनों अंकों में दिल्ली के लेखकों ने दिल्ली के लेखकों पर बड़े दिलखुश अंदाज में लिखा है. रही-सही कसर डा. पुष्पपाल सिंह ने अपने लेख में पूरी कर दी है. दोनो अंकों में कोई भी विवादास्पद या चिंतनीय मुद्दा नहीं उठाया गया है. कविताएं निरापद और स्त्रैण हैं— देश, काल, परिस्थिति की चिंता से दूर. कुल मिला कर लब्बो लुआब यह कि—दिल्ली में सब सुखी हैं. भगवान करे सुखी बनें रहें.

कथा भारती

'कथा भाषा' पत्रिका देखने में भले ही सीधी सादी और अनाकर्षक हो परंतु इरादे बुलंद हैं. एक एक करके भारतीय भाषाओं की प्रतिनिधि कहानियों के संकलन निकाले जा रहे हैं. उर्दू और पंजाबी के बाद हिंदी अंक प्रथम निकाला है. इसके सीमित साधनों को देखते हुए कमला चमोला, प्रेम कुमार, राजेन्द्र लहरिया जैसे युवा हस्ताक्षरों की अच्छी कहानियां इसमें चुनी गयी हैं. आगामी अंक कन्नड़ कहानियां पर होगा. मैं सोचता हूं कि 'कथा भाषा' जैसी पत्रिकाओं को सरकारी अनुदान क्यों नहीं मिलता जबकि राष्ट्रीय एकता के प्रचार के नाम पर संबंधित राज्य सरकार जाने कितना बड़ा बजट बनाती होगी. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चर्चा : हुक्का-पानी बंद कथाकारों के एक सामूहिक आंगन की

पिछले दिनों राजधानी में एक ऐसा साहित्यिक आयोजन देखने को मिला जो कई अर्थों में पारंपरिक आयोजनों से अलग तथा विशिष्ट था. युवा कथाकार महेश दर्पण द्वारा संपादित तथा सचिन प्रकाशन, दिल्ली द्वारा सद्य प्रकाशित 'स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कहानी कोश' (दो भाग) के विमोचन तथा चर्चा का यह महत्वपूर्ण अवसर था. राजधानी के सैकड़ों कथाकारों की संयुक्त उपस्थिति के बीच मंच पर थे-विष्णु प्रभाकर, अमृता प्रीतम, कमलेश्वर, सुरेश उनियाल, महेश दर्पण तथा इस ग्रंथ के प्रकाशक अनिल पालीवाल. डेढ़ सौ से ज्यादा कथाकारों को दो हजार पृष्ठों से अधिक में समाहित किये हुए यह ग्रंथ वास्तव में एक 'शिशु-आश्चर्य' की उत्पत्ति करता है क्योंकि हिंदी में जहां चार कथाकारों का एक साथ बैठना तक एक श्रेष्ठ लतीफा बन चुका दीखता हो, वहां किसी संपादक या प्रकाशक का दिल इतना विशाल कैसे हो सकता है. मगर यह हुआ है. इसीलिए यह आयोजन भी पारंपरिक नहीं रह पाया और लगभग तीन घंटों तक कहानी-कहानी और कहानी पर ही खुले मन, दिमाग से एक उत्तेजक चर्चा हुई.

बहैसियत संचालक सुरेश उनियाल ने चर्चा के प्रारंभ में कहा कि हिंदी कहानी पिछले चालीस वर्षों में अनेक रास्ते तय करके यहां तक पहुंची. इन रास्तों में आदर्श, नारे, आंदोलन, विचारधारा तथा कलागत आग्रहों की अपनी-अपनी भूमिका रही है. आज अवसर है कि हम इस ग्रंथ-चर्चा के माध्यम से इन रास्तों पर दृष्टिपात करें तथा एक ऐसे कथा-क्षेत्र की थाह लेने का प्रयास करें जो कहानी का एक लगभग सर्वमान्य क्षेत्र हो सके. उन्होंने कहा कि विस्तृत अर्थों में यही ग्रंथ संपादक का उद्देश्य रहा है, यही प्रकाशक का और यही इस गोष्ठी का भी उद्देश्य है.

अपने 'अलिखित आलेख' में डा. कृष्णदत्त पालीवाल ने संपादक-प्रकाशक को इस महत्वपूर्ण कार्य के लिए बधाई दी तथा कहा कि पिछले चालीस वर्षों का ही नहीं, इस ग्रंथ के माध्यम से हमें हिंदी कहानी का परिपूर्ण दृश्य मिल जाता है. उन्होंने कहा कि कुछ महत्वपूर्ण कथाकारों की अनुपस्थिति ग्रंथ को भले ही 'अपूर्ण' न बनाती हो, मगर खलती अवश्य है. इस ग्रंथ को 'कोश' घोषित करने पर भी उन्हें एतराज था. उनके हिसाब से यह कोशगत नहीं, संकलनगत कार्य है.

वरिष्ठ साहित्यकार विष्णु प्रभाकर ने कहा कि लेखक को समाज के बदलते प्रगतिशील मूल्यों के साथ स्वयं को भी संवर्द्धित करते रहना चाहिए. उन्होंने कहा कि यदि आज के समय में मैं आसुजन्य-आदर्शों से सनी कहानियां लिखूं तो मुझे कोई क्यों पढ़ेगा! हां, कहानी को उस आंतरिक-ऊर्जा की जरूरत हमेशा से रही है जिसके बल पर वह भाषा, समय, देश और तथाकथित विचारधाराओं की घेराबंदी को नकारती हुई बहुत आगे चली जाती है. यही कारण है कि प्रेमचंद की साढ़े-तीन चार सौ कहानियों में से चंद कहानियां ही ऐसी हैं जो उन्हें प्रेमचंद बनाती हैं. कहानी में आस्था प्रकट करते हुए उन्होंने कहा कि मनुष्य के अस्तित्व में रहने तक कहानी का रहना भी तय है. कुछ लेखकों की इस ग्रंथ में अनुपस्थिति को उन्होंने भी रेखांकित किया.

चर्चा में हस्तक्षेप करते हुए सुरेश उनियाल ने सूचित किया कि निकट भविष्य में कहानी-कोश का एक पूरक खंड भी संकलित तथा प्रकाशित करने की योजना है. इसलिए आगामी वक्ता इस 'कमी' को 'डिलीट' करके ही अपना वक्तव्य दें.

अग्रज कथाकार रमाकांत ने अपने वक्तव्य को पर्याप्त खबरची बनाकर प्रस्तुत किया. हिंदी के साथ-साथ उन्होंने अमरीकी, रूसी कथा-यात्रा की याद दिलाई जहां प्रचार तथा प्रसार की तात्कालिक व्यवस्था के तहत कुछ नामों को उछाला गया तथा कछेक समर्थ नामों को अ-चर्चा के नर्क की ओर धकेलने का असफल प्रयास किया गया. उन्होंने सोदाहरण बताया कि एक बार प्रेमचंद को भी एक श्रेष्ठ संपादित कथा-संकलन में शामिल नहीं करने का प्रयास किया गया था. मगर यह ग्रंथ एक विशाल संपादकीय मन का उत्कृष्ट उदाहरण है जिसे अपने अनूठे सहयोग के लिए बरसों याद किया जायेगा.

चर्चा के अगले वक्ता अवध नारायण मुद्गल ने बहस को पिछले चालीस वर्षों के कथा साहित्य की प्रचालित मान्यताओं की

■ विमोचन के अवसर पर बांये से कथाकार कमलेश्वर, सचिन प्रकाशन के निर्देशक अनिल पालीवाल और विमोचन करते हुए पंजाबी की कवि-कथाकार अमृता प्रीतम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

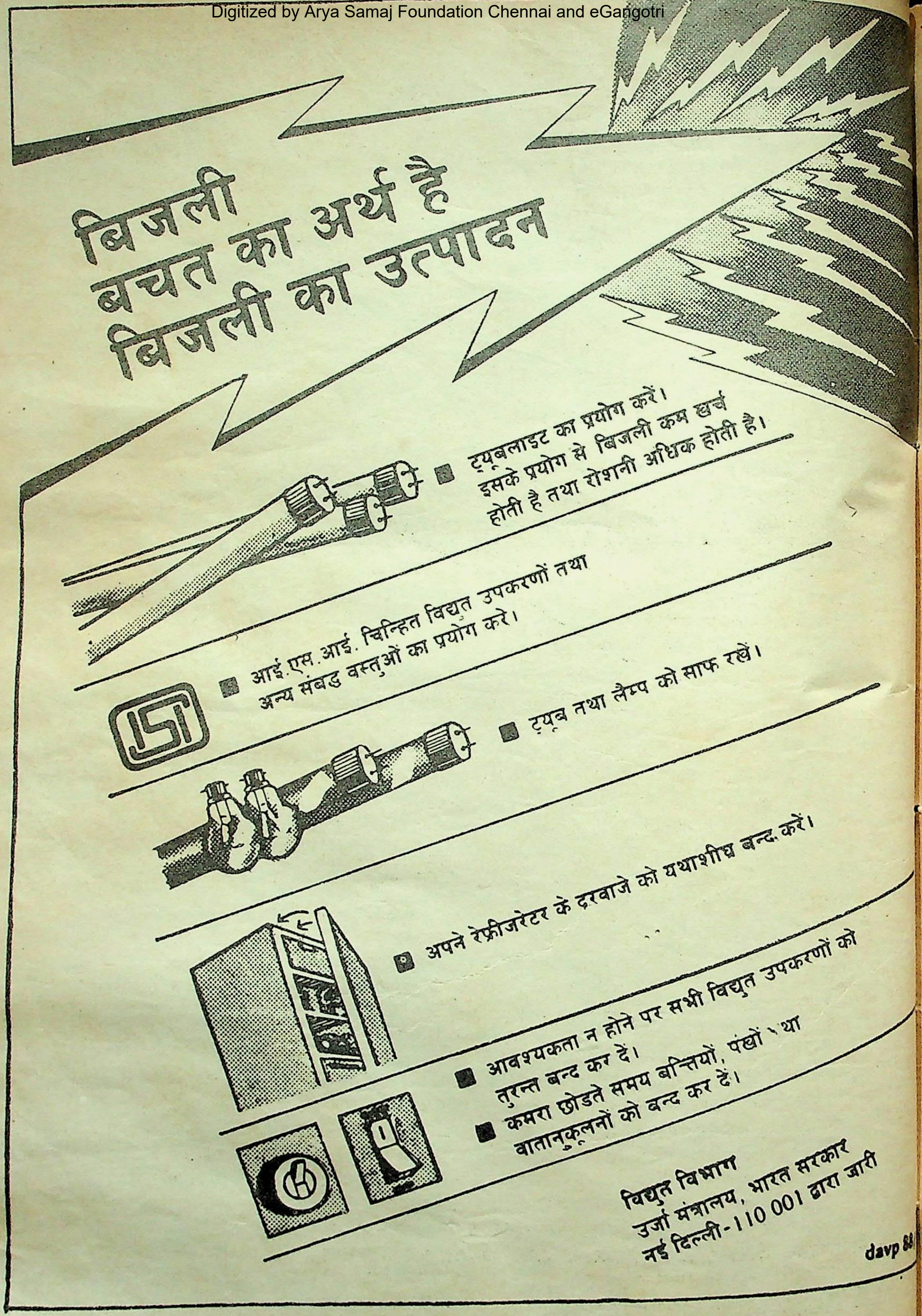

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तरफ मोडा.

हिंदी कथा-साहित्य में अनेकानेक सार्थक प्रयोग हुए हैं जो उसे अंतर्राष्ट्रीय महत्व सौंपने में भी सहायक सिद्ध हो सकते हैं. साठ के बाद मोहभंग ने हिंदी कहानी में प्रयोग की सार्थक भूमिका निबाही, और आगे चलकर यही भूमिका जीवन के विस्तृत आयामों से जुड़ी और महत्वपूर्ण कहानियां हमारे सामने आयीं. इस कोश में संकलित कुछेक कहानियां इस बात का जीता-जागता प्रमाण हैं.

विवादास्पद कथाकार रमेश बक्षी ने हिंदी से जुड़े कुछ महत्वपूर्ण अवसरों की याद को ताजा किया और कहा कि तमाम अवरोधों को पार करके इस कोश का संपादन वास्तव में एक कठिन काम था. एक समय था जबकि कथाकार आपस में लड़ते-झगड़ते थे, बहसें थीं, थुक्का-फजीहत थीं मगर इन सबके साथ-साथ लेखन भी था. ऐसे उत्कृष्ट माहौल को पुनः अवतरित करने के लिए ऐसे अनेकों संकलनों की आज जरूरत है.

प्रदीप पंत ने अपने तेज-तर्रार वक्तव्य में कहा कि आज लिखा बहुत जा रहा है, मगर 'कहानियां' बहुत कम आ रही हैं. इसकी बड़ी वजह यह है कि किसिम-किसिम की विचारधाराओं का बाजार आज गर्म है. उनका मानना था कि कथा-आंदोलनों की आवश्यकता है क्योंकि आंदोलनों से ही उत्कृष्ट कहानियां लिखने की वैचारिक-ऊर्जा किसी लेखक को मिलती है. प्रदीप ने इस बात को भी रेखांकित किया कि आज सामंतवाद या सामंती व्यवस्था के खिलाफ तो प्रचुर मात्रा में लिखा जा रहा है मगर पूंजीदारी के खिलाफ क्यों नहीं लिखा जा रहा है?

ग्रंथ की विमोचनकर्त्ता, प्रसिद्ध कवियत्री अमृता प्रीतम ने अपने विशिष्ट लहजे तथा भाषा में टंके बिंबों के माध्यम से लेखन और जीवन को नाभि-नाल से जुड़ा होने की बात पर जोर दिया. मानवमात्र किसी भी क्षेत्रीयता से ऊपर होता है और इसीलिए इसकी थाह बतानेवाली रचना की कोई वैयक्तिक रूह नहीं होती. उनके अनुसार कहानीकार की भूमिका एक जननी की भूमिका ही होती है जो भावना को अंकुरित करने में मददगार होती है. उन्होंने कहा कि ऐसे संकलन सभी भारतीय भाषाओं में संकलित तथा प्रकाशित होने चाहिए.

अंत में, संचालक सुरेश उनियाल ने गोष्ठी के अध्यक्ष कमलेश्वर को बोलने के लिए आमंत्रित किया. अब तक देर काफी हो चुकी थी, इसलिए कमलेश्वर ने अपने वक्तव्य को अंशतः संक्षिप्त किया और कहा कि इस गोष्ठी में इतने सारे नये-पुराने कथाकारों की बिरादरी मौजूद है कि अपने कुटुंब में बैठकर गिले-शिकवे आसानी से दूर किये जा सकते हैं. उन्होंने कहा कि एक लेखक को इतिहास में जाने के लिए कहानी नहीं लिखनी चाहिए, बल्कि समय सापेक्ष सच्चाई को रेखांकित करते हुए कहानियां लिखनी चाहिए. यदि वह ऐसा कर पाता है तो इतिहास की फिर यह मजाल नहीं होती कि वह उसे छोड़कर चला जाये. उन्होंने कहा कि आज का कथाकार-एक-दूसरे के पूरक की भूमिका निबाहकर ही सार्थक योगदान दे सकता है. कमलेश्वर ने संपादक तथा प्रकाशक को ऐसा भिक्षुक भी बताया जो अपने-अपने कमंडलों में वक्त की सच्चाइयां संकलित कर रहे हैं ताकि आगे आने वाला समय और पीढ़ी इन सच्चाइयों से रू-ब-रू हो सके और लोहा ले सके. □

राजकुमार गौतम

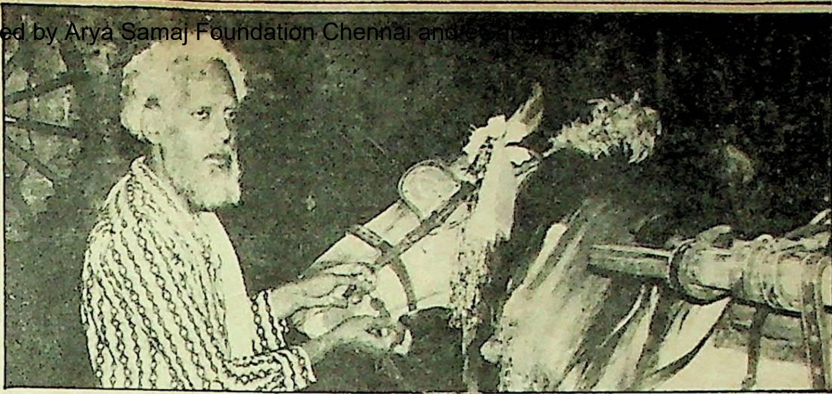

दुखवा मैं कासे कहूं

तेजी से बढ़ती हुई उपभोक्तावादी संस्कृति और औद्योगीकरण के कारण मनुष्य में जो संवेदनहीनता आयी है उसका कोई पैमाना नहीं है. हर आदमी अपने बनाये हुए घेरे में डूब-उतरा रहा है. पिछले दिनों सोवियत कला एवं सांस्कृतिक केंद्र में चेखव की कहानी 'ग्रीफ' पर आधारित टेलीफिल्म 'दुखवा मैं कासे कहूं' देख कर एक बार फिर यह उम्मीद बंधी कि विश्वविख्यात कथाकारों की कृतियों पर टेली फिल्म बनाने की परंपरा जारी है. दरअसल यह निर्देशक कृष्ण राघव और वरिष्ठ फिल्म समीक्षक एवं पटकथा, संवाद लेखक विनोद भारद्वाज की गहरी दृष्टि का ही असर था कि 90 वर्ष पूर्व लिखी गयी इस रूसी कहानी ने परदे पर साकार होकर हाल में उपस्थित खालिस भारतीय दर्शकों को झकझोर दिया.

इस फिल्म के साथ कई खतरे भी जुड़े थे. एक तो यह चेखव की कहानी थी. दूसरे भारतीय पृष्ठभूमि में उसे रूपांतरित करना आसान काम नहीं था. जरा-सा चूक होती तो कहानी ही आत्मा खत्म हो जाती. लेकिन चूंकि इस फिल्म का रूपांतरण सटीक था और संवाद संतुलित थे इसलिए यह खतरा टल गया. यही दोनों चीजें फिल्म के फ्रेम को बनाती हैं. चूंकि विनोद भारद्वाज हिंदी के जाने माने फिल्म समीक्षक भी हैं इसलिए यह और भी महत्वपूर्ण बात थी. निर्देशक कृष्ण राघव भी 'रागदरबारी' के माध्यम से अपनी क्षमता को दिखा चुके हैं.

निर्देशक कृष्ण राघव दूरदर्शन के तंत्र से कुछ-कुछ दुखी लगे. उनका कहना था-'यह व्यवस्था आधा सच और आधा झूठ है. ईश्वर बचाये इससे.'

अशोक पत्की का संगीत बहुत अच्छा है. खास तौर से फिल्म के शुरू और अंत में गायक अजित करकरे का गाया टाइटल गीत–'दुखवा मैं कासे कहूं' भाव विभोर कर देने वाला है. मूल कहानी में 'ग्रीफ' से इतर इस फिल्म में जो घटनाएं जोड़ी गई हैं वे कहानी की मूल आत्मा को कहीं भी नुक्सान नहीं पहुंचातीं. फिल्म के अंत में तांगे वाला अपने घोड़े को ही दुख-दर्द सुनाता है....वीरेंद्र सक्सेना के जीवंत अभिनय ने यह साबित कर दिया हैं □

विनय बिहारी सिंह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

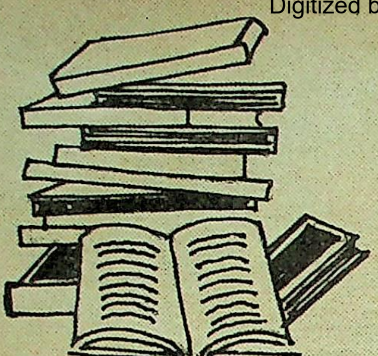

पुस्तक एवं प्रकाशन परिशिष्ट

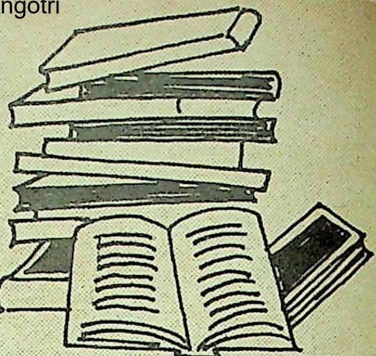

एक आदर्श समाज के निर्माण के लिए यह निहायत जरूरी है कि हम देखें कि हमारा प्रकाशन-जगत किस दिशा की ओर अग्रसर है! यह एक ऐसा विषय है, जिस पर ठहर कर सोचने की गंभीर जरूरत है... आइए, देखें, इस दुनिया की एक झांकी—

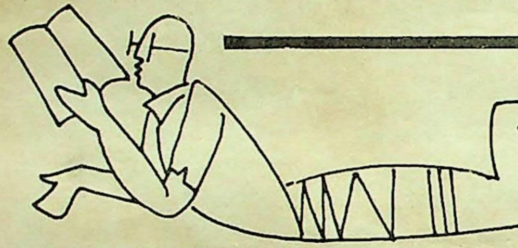

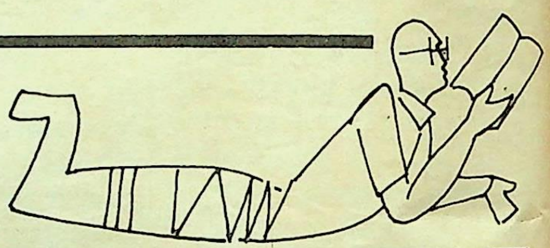

किताबें : आदमी की बेहतर दोस्त

पुस्तकें मनुष्य की सबसे अच्छी साथी होती हैं. यदि मनुष्य पुस्तकें पढ़ने की आदत डाल ले तो इससे ज्ञान-विज्ञान की जानकारी तो बढ़ती ही है एकांत के क्षणों का भी एहसास नहीं रहता. साहित्य एक ऐसे सागर के समान है जिसमें आदमी जितने गोते लगाएगा उतने ही बेशकीमती मोती निकाल कर लाएगा. किसी भी समय और काल की जानकारी वहां के इतिहास और साहित्य से मिलती है. अच्छे सुरुचिपूर्ण साहित्य का महत्व सदा से रहा है... क्योंकि यह हमारी सभ्यता एवम् संस्कृति का दर्पण होता है.

अतः सबसे पहले हमें चाहिए कि अच्छे देश रूपी भवन को सुंदर व मजबूत बनाने के लिए उसके नींव रूपी बच्चों को मजबूत करें.इस दिशा में ड्रीमलैंड पब्लिकेशंस बच्चों को सुरूचिपूर्ण साहित्य उपलब्ध करा कर जहां समाज की सेवा कर रहा है वहीं देश के भविष्य को भी सुरक्षित कर रहा है. ड्रीमलैंड पब्लिकेशंस बच्चों के कामिक्स चित्र कथाओं को सुरुचिपूर्ण ढंग से प्रस्तुत कर बच्चों में उसे पढ़ने की जिज्ञासा पैदा करते हैं. आज अधिकतर बच्चे ड्रीमलैंड पुस्तकों के लिए पागल रहते हैं. बच्चों की पुस्तकों के विषय में बातचीत के दौरान ड्रीमलैंड पब्लिकेशंस के मालिक श्री वेदप्रकाश चावला ने बताया कि वे प्रसिद्ध प्रकाशन संस्थान इंडियन बुक डिपो के मालिकों में से एक रह चुके हैं. परंतु फिर उन्होंने बच्चों के लिए अच्छी पुस्तकों के अभाव को अनुभव कर ड्रीमलैंड प्रकाशन के अभाव को अनुभव कर ड्रीमलैंड प्रकाशन के नाम से अलग प्रकाशन संस्थान शुरू किया जो कि देखते ही देखते लोकप्रियता की नई बुलंदियों को छूने लगा. दो-तीन वर्षों के कम समय में ही आपके 74 टाईटिल प्रकाशित हो चुके हैं तथा आगामी 2-3 महीनों तक 44 टाइटिल और छप जायेंगे.

बच्चों के लिए आपने पुराने पंचतंत्र की कहानियां, सिहांसन बत्तीसी, विक्रम बेताल तथा अन्य धार्मिक कथायें, पौराणिक लोक-कथाओं व परीकथाओं को सुंदर, सुरुचिपूर्ण ढंग से प्रकाशित किया है. इनका रामायण का 12 पुस्तकों का सैट बच्चों में बेहद लोकप्रिय हुआ है. ड्रीमलैंड पब्लिकेशंस द्वारा बच्चों को सत् साहित्य उपलब्ध कराना निसंदेह सराहनीय कार्य है. □

— श्रीमती कैलाश शर्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

1988 के प्रमुख प्रकाशन

अनमोल विरासत (1) (गांधीजी का बचपन और सत्याग्रह के प्रयोग)	श्रीमती सुमित्रा कुलकर्णी	75.00
अनमोल विरासत (2) (कथा गांधी और आजादी की)	श्रीमती सुमित्रा कुलकर्णी	200.00
अनमोल विरासत (3) (गांधी व्यक्तित्व और परिवार)	श्रीमती सुमित्रा कुलकर्णी	75.00
विष्णु प्रभाकर : संपूर्ण नाटक (1)	विष्णु प्रभाकर	150.00
विष्णु प्रभाकर : संपूर्ण नाटक (2)	विष्णु प्रभाकर	150.00
विष्णु प्रभाकर : संपूर्ण नाटक (3)	विष्णु प्रभाकर	150.00
प्रतिनिधि रचनाएं	विष्णु प्रभाकर	150.00
INDIAN LITERATURE	NAGENDRA	300.00
नैरन्तर्य और चुनौती (ललित निबंध)	विद्यानिवास मिश्र	60.00
अंग्रेजी हिंदी मुहावरा लोकोक्ति कोश	भोलानाथ तिवारी	250.00
आदिकालीन हिंदी शब्दकोश	भोलानाथ तिवारी	120.00
स्वराज और घनश्यामदास (जीवनी)	लक्ष्मीनारायण लाल	100.00
प्रारंभिक हिंदी गद्य का स्वरूप	श्रीमती शारदा वेदालंकार	100.00
याद एक यायवर की (संस्मरण)	शंकर दयाल सिंह	60.00
असफल दांपत्य की कहानियां	श्रीमती चित्रा मुद्गल/सुरेंद्र अरोड़ा	50.00
टूटते परिवारों की कहानियां	श्रीमती चित्रा मुद्गल/सुरेंद्र अरोड़ा	50.00
दूसरी औरत की कहानियां	श्रीमती चित्रा मुद्गल	40.00
थाली भर चांद (कहानियां)	श्रीमती सूर्यबाला	50.00
समर शेष है (उपन्यास)	विवेकी राय	150.00
आम रास्ता नहीं है (ललित निबंध)	विवेकी राय	60.00
चित्रकूट के घाट पर (कहानियां)	विवेकी राय	40.00
रत्न विज्ञान (रत्न परिचय)	पं. सूर्यनारायण व्यास	75.00
दूसरा सूरज (संस्मरण)	रामनारायण उपाध्याय	30.00
कातर धूप (उपन्यास)	श्रीमती सुधा	70.00
नवाब साहब (उपन्यास)	सुरेश कांत	60.00
बलिहारी गुरु (व्यंग्य)	सुरेश कांत	50.00
विकल्प (उपन्यास)	रामदेव शुक्ल	65.00
रिसता घाव (उपन्यास)	रामनाथ नीखरा	80.00
श्री अरविंद का साहित्यिक दर्शन	हरिराम जसटा	30.00
दर्पण तुम्हें अर्पण (प्लास्टिक सर्जरी)	अक्षय कुमार वर्मा	35.00
लाजपत राय ने कहा था (विचार-सार)	गिरिराज शरण	35.00

अन्य महत्वपूर्ण पुस्तकों का विस्तृत सूचीपत्र निशुल्क मंगाइये

प्र भा त प्र का श न

205 चावड़ी बाजार, दिल्ली-110006

फोन : 264676

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वप्रसिद्ध श्रृंखला

'विश्व प्रसिद्ध श्रृंखला' पुस्तक महल का एक अनूठा प्रोजेक्ट है. 1985 से इस योजना पर बड़े पैमाने पर काम चल रहा है. ज्ञान एवं चिंतन के धरातल पर एक औसत पाठक को अंतर्राष्ट्रीय जगत से जोड़कर उसकी चेतना को प्रबुद्ध करने की गर्ज से प्रारंभ की गयी यह योजना अपने आप में नितांत महत्वपूर्ण है. खोजें हों या अनसुलझे रहस्य, रोमांक कारनामें हों या युद्ध, व्यक्ति हों या धर्म, मत व संप्रदाय, खेल और खिलाड़ी हों या रिकॉर्डस, वैज्ञानिक हों या विनाश लीलाएं, गुप्तचर संस्थाएं हों या जासूस, खजाने हों या सभ्यताएं, राजनैतिक स्कैंडल हों या खोजी यात्राएं, बैंक डकैतियां हों या अय्याश राजा, प्रेम-प्रसंग हों या क्रांतियां... मतलब यह कि दुनिया भर से इकट्ठा की गयी इंसान की जिज्ञासाओं को शांत करने वाली सामग्री का सुंदर संचयन है यह श्रृंखला. अच्छी बात यह है कि साहित्य जगत के जाने-माने रचनाकार भी इस रचनात्मक आयोजन में सहयोग दे रहे हैं... और इसका ताज़ातरीन उदाहरण है— डा. मस्तराम कपूर द्वारा लिखित पुस्तक 'विश्व-प्रसिद्ध विनाश लीलाएं'. पुस्तक महल का यह एक नया प्रतिमान है हिंदी प्रकाशन जगत में.

सवाल तो धरा रह गया

"लेखक केवल लिखकर रहे या जीवीका के लिए कोई दूसरा काम करे, यह सवाल पुराना है. लेकिन पुराना ही है, यह मरा अभी नहीं है, बल्कि अब कुछ और जटिल रूप से जीवत है. इसी के साथ यह भी जुड़ा हुआ है कि अगर वह लिखकर रहना चाहे तो क्या ऐसा संभव है? और फिर यह कि अगर वह जीविका के लिए कोई दूसरा काम करे तो फिर क्या लिखना संभव है? पिछले दिनों साहित्य अकादमी ने रचनात्मक साहित्य से जीविकोपार्जन नाम देकर इस सवाल को पेश किया-- कहना चाहिए लेखकों की एक भरी सभा के बीच पेश किया और सभा में केवल लेखक ही नहीं थे, बहुत से श्रोता भी थे. ये सभी शायद इसी उम्मीद में इकट्ठा हुए थे कि संभव है इस जटिल हो गये सवाल के कुछ पहलू बातचीत से साफ हों और सोचने के लिए कुछ खुराक मिलें. लेकिन सवाल कुछ इस तरह से पेश हुआ तो माहौल इतना हल्का फुल्का हो गया कि सवाल तो धरा रह गया. हां, कुछ व्यंग्य-विनोद उभर आया......."

दिनमान, 12 मार्च, 1972

साहित्य-जगत और प्रभात प्रकाशन

बहुत कम प्रकाशन संस्थान ऐसे हैं जो व्यावसायिक नैतिकता को निभाते चलते हैं. इस दृष्टि से प्रभात प्रकाशन साहित्य जगत में सम्मानित संस्थान है. अज्ञेय, विष्णु प्रभाकर, विवेकी राय, रामदरश मिश्र, विद्यानिवास मिश्र, रामनारायण उपाध्याय, सूर्यबाला, चित्रा मुद्गल, आबिद सुरती, डा. नगेंद्र सरीखे शीर्षस्थ रचनाकारों की असंख्य पुस्तकों का प्रकाशन इसका एक ज्वलंत प्रमाण है. सुनियोजित और स्तरीय प्रकाशन की दृष्टि से ही नहीं, विषयों से संबद्ध सीरीज-प्रकाशन की दृष्टि से भी इनकी योजनाएं उल्लेखनीय हैं... जैसे महानगरों की कहानियां, नारी उत्पीड़त की कहानियां, कार्यालय जीवन की कहानियां, नारी उत्पीड़न की कहानियां, कार्यालय जीवन की कहानियां, बाल्यावस्था की कहानियां, वृद्धावस्था की कहानियां, असफल दांपत्य की कहानियां, चर्चित महिला कथाकारों, दूसरी औरत की कहानियां आदि. यह श्री श्याम सुंदर (प्रभात प्रकाशन के सत्वधिकारी) की कार्यकुशलता का ही प्रमाण है.

डायमंड प्रकाशन का योगदान

लोकप्रिय साहित्य के प्रकाशन के अतिरिक्त प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद, शरत्, देवकीनंदन खत्री, बंकिम जैसे महान भारतीय साहित्यकारों का संपूर्ण साहित्य प्रकाशिक कर महत्वपूर्ण अल्पमोली योजना सामने रखी है. पुराण साहित्य और भारतीय स्वातंत्र्य-संघर्ष के महान क्रांतिकारियों की जीवनियों का प्रकाशन भी इस संस्थान का ऐतिहासिक कार्य है. हिंदी-भाषा और साहित्य को प्रचारित व प्रसारित करने की दृष्टि से यह संस्था अपने आपमें एक उदाहरण ही बन गई है. हास्य कविता सीरीज, तकनीकी, और हस्तरेखा, तंत्र-मंत्र सीरीज.. भी भी इनकी महत्वाकांक्षाओं से भरी योजनाएं हैं.

सरकारी प्रकाशन संस्थानों में प्रकाशन विभाग डा. श्याम सिंह शशि ने कुशल निर्देशन में जिस तत्परता से काम कर रहा है वह एक सराहनीय स्थिति है. उपनिषद की प्राचीन लोक कथाएं हों या उत्तर प्रदेश की लोक कथाएं, वैदिक काल की कहानियां हों या विश्व की श्रेष्ठ लोक कथाएं, जैन कहानियों हों या हंसी हंसी में, नमक आंदोलन हो या क्रांतिकारिता की कहानियां, भारत छोड़ो आंदोलन हो या वंदे मातरम्, बाल महाभारत हो या प्रवासी क्रांतिकारी... प्रकाशन विभाग की भूमिका देखते ही बनती है. इन संस्थानों के अतिरिक्त हिंदी प्रचारक संस्थान, राजकमल प्रकाशन, वाणी प्रकाशन, सचिन प्रकाशन, राजपाल एंड संस, किताब घर, संभावना प्रकाशन, लोकभारती प्रकाशन, नेशनल बुक ट्रस्ट और साहित्य अकादमी आदि ऐसे संस्थान हैं जो सुरुचि संपन्न साहित्य के प्रकाशन, प्रचार और प्रसार की दृष्टि से उल्लेखनीय काम कर रहे हैं.

यह एक झांकी है हमारे पुस्तक जगत एवं प्रकाशन व्यवसाय की. आने वाला समय इसी पर आधारित होगा. □

— राजेश कालिया

हिन्दी में पत्राचार द्वारा गृह सज्जा सीखिए

इन्टीरियर डेकोरेशन

(सर्टीफिकेट एवं हॉबी कोर्स)

- गृहसज्जा का तकनीकी ज्ञान प्राप्त करें
- सुविधानुसार घर बैठे खाली समय में अध्ययन करें
- आसान भाषा में विशेषज्ञों द्वारा तैयार पाठ्यक्रम
- महंगी पुस्तकें खरीदने की जरूरत नहीं
- कोर्स फीस का आसान किश्तों में भुगतान
- कोई तकनीकी न्यूनतम योग्यता आवश्यक नहीं

विवरण के लिए जवाबी लिफाफा भेजें –

AID एकैडमी ऑफ इन्टीरियर डेकोरेशन
10A/14 शक्ति नगर, दिल्ली-110007

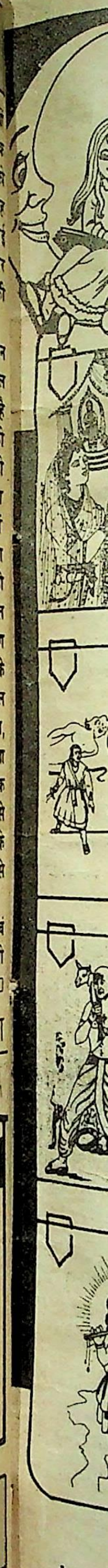

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बच्चों की कहानियों की सुन्दर पुस्तकें

* मनभावन, कल्पनाशील, शिक्षाप्रद, आकर्षक, रंगीन सचित्र पुस्तकें। अब नई साज-सज्जा के साथ। हर उम्र के बच्चों का भरपूर मनोरंजन करती हैं।

रामायण

१२ पुस्तकों का सैट
बढ़िया डिजाइनिंग वाला सैट ऐसा पहले कभी नहीं छपा

ईसप की कहानियां

महान संत ईसप की शिक्षाप्रद प्रेरणादायक कहानियों का संग्रह
१० पुस्तकों का सैट

विक्रम और बेताल

२५ कहानियाँ जो बेताल राजा विक्रमादित्य को सुनाता है शिक्षात्मक और दिलचस्प ५ भागों में प्रकाशित

सिंहासन बत्तीसी

३२ प्रसिद्ध कहानियाँ जो राजा विक्रमादित्य के सिंहासन की पुतलियां राजा भोज को सुनाती हैं। ६ पुस्तकों का सैट

पंचतत्र

पक्षियों और जानवरों की मशहूर पौराणिक, शिक्षात्मक कहानियाँ ६ भागों में प्रकाशित

१२ पुस्तकों का सैट

बाईबल की कहानियाँ

प्रभु ईसामसीह की, शिक्षाप्रद कहानियों का संग्रह

कृष्णलीला

भगवान कृष्ण के बचपन की लीलाओं का सजीव सचित्र वर्णन आकर्षक रंगीन चित्र
४ पुस्तकों का सैट

९५ पुस्तकों का सैट उपलब्ध है।

मूल्य 6/- रुपये प्रत्येक

ड्रीमलैण्ड पब्लिकेशन्स

सूचीपत्र के लिये लिखें।

Rashtriya

अपने निकटतम पुस्तक विक्रेता अथवा समाचार पत्र विक्रेता से खरीदें या लिखें:

ड्रीमलैंड पब्लिकेशन्स, 4425 नई सडक दिल्ली-6 फोन : 2915831

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तक प्रकाश है

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के शहीदों को प्रकाशन विभाग की विनम्र श्रद्धांजलि

महान राष्ट्रीय विभूतियों पर सर्वोत्कृष्ट प्रकाशन

* भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास
  लेखक डा० ताराचन्द्र— खण्ड-2 40.00
  खण्ड-3 35.00
  खण्ड-4 45.00
* भारतीय शहीदों का परिचय—
  खण्ड-1 4500
* भारत में अंग्रेजी राज खण्ड-1 44.00
  ले० सुन्दर लाल खण्ड-2 40.00
* जब्तशुदा गीत 3.00
  (आजादी और एकता के तराने)
  लेखक डा० रामजन्म शर्मा
* प्रवासी क्रांतिकारी
  लेखक जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी 3.00
* क्रांतिकारी महिलाएं
  ले० आशा रानी व्होरा 4.50
* भारत छोड़ो आंदोलन
  ले० शंकर दयाल सिंह 3.00
* स्वतंत्रता संग्राम-युवकों का युद्धघोष-वन्देमातृरम
  ले० जयप्रकाश भारती 3.00
* बिहार में स्वतंत्रता के प्रेरक प्रसंग
  लेखक दिनेश कुमार नारायण
* जवाहर लाल नेहरू (सचित्र जीवनी)
  लेखक बी.आर. नन्दा 25.00
* भारतीय इतिहास के निर्माता 9.00
* "छत्रपति शिवाजी"
  ले० काशीनाथ गोविन्द जोगलेकर
* सन सत्तावन के भूले बिसरे शहीद
  ले० उषा चन्द्रा 20.00
* चुनौती भरे वर्ष
  (प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी के भाषण 1966-69) 15.00
* प्रगति की ओर
  (प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी के भाषण 1969-72) 60.00
* लाल किले के प्राचीर से
  (स्वतंत्रता दिवस के भाषण) 4.00
* नेताजी संपूर्ण वाङ्मय खण्ड-1
  साधारण संस्करण 22.00
* भीमराव अम्बेडकर
  ले० डा. वा.ना. कुबेर 14.00
* बिट्ठल भाई पटेल
  ले० एच.एम. पटेल 17.50
* राजर्षि पुरूषोत्तम दास टंडन
  ले० संत सोनी 8.00
* सरोजनी नायडू
  ले० तारा अली बेग 11.50
* रवीन्द्र नाथ ठाकुर
  ले० हिरण्यमय बनर्जी 10.00
* अमर शहीद गणेश शंकर विद्यार्थी
  ले० मालती शंकर 11.00
* यह गाथा वीर जवाहर की
  ले० कन्हैया लाल मिश्र "प्रभाकर" 7.00
* भारत के नारीरत्न 10.50
* भारत स्वतंत्रता के बाद 16.00
* एकता की बोलती तस्वीरें
  लेखक व्यथित हृदय 7.50

प्रकाशक विभाग द्वारा प्रकाशित सभी पत्रिकाओं में से किसी भी एक पत्रिका का वार्षिक ग्राहक बन जाने पर समस्त पुस्तकों की खरीद पर 10 प्रतिशत की छूट दी जाती है। विभिन्न विषयों पर भारत की सभी भाषाओं में उपयोगी पुस्तकें उपलब्ध हैं।

रु० 40 से कम के आदेश पर पंजीकरण शुल्क (रजिस्ट्रेशन फी) अतिरिक्त भेजना होगा। पुस्तकें स्थानीय पुस्तक विक्रेताओं से लें अथवा सीधे हमें लिखें।

प्रकाशन विभाग
व्यापार व्यवस्थापक
विक्रय केन्द्र
पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110 001

– सुपर बाजार "दूसरी मंजिल" कनाट सर्कस, नई दिल्ली-110 001
– बिहार स्टेट को-आपरेटिव बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, पटना-800 004
– 10बी, स्टेशन रोड, लखनऊ-226019.
– कामर्स हाउस, दूसरी मंजिल, करीम भाई रोड, बालार्ड पीयर बम्बई-400 038
– एल.एल ए आडिटोरियम अन्ना सलै, मद्रास-600 002
– स्टेट आर्कीलाजिकल म्युजियम बिल्डिंग, पब्लिक गार्डन, हैदराबाद-500 004
– प्रैस रोड, त्रिवेन्द्रम-695 002

davp 88/264

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डायमंड पाकेट बुक्स में

पेश करते हैं —
एक महान उपन्यासकार

विक्की आनन्द

का नया जासूसी उपन्यास

घुंघ

(6/-)

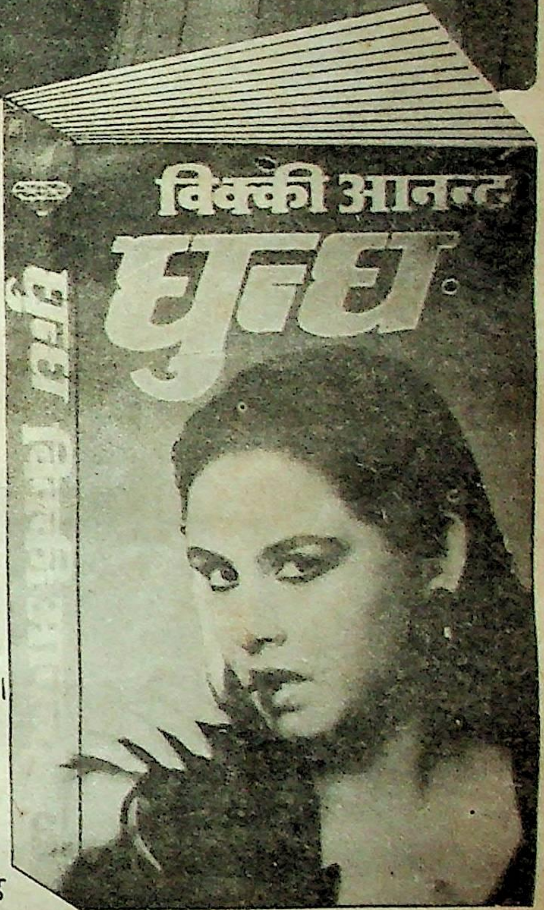

- लेखक का दावा है कि यह घुंघ उपन्यास आपको पसंद आयेगा।
- एक नई किस्म के जासूसी उपन्यासों की परम्परा इस उपन्यास से शुरू होगी।
- विक्की आनन्द के उपन्यासों में रहस्य, रोमांच और इन्वेस्टीगेशन का अनूठा समन्वय है कि आप उपन्यास को एक ही बार में पूरा पढ़े बिना नहीं छोड़ पायेंगे।

लाखों पाठकों के प्रिय उपन्यासकार

समीर

का नया उपन्यास

नकाब

(6/-)

सस्पैंस थ्रिल और एक्शन के जादूगर

राहुल

का नया रोमांचकारी उपन्यास

दोषी कौन

डायमंड पाकेट बुक्स प्रा. लि. 2715, दरियागंज, नई दिल्ली-110002

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अगला अंक

जब भी अपने चेहरे को आईना दिखाता हूं,
कौन है न जाने वो, किससे खौफ खाता हूं.

आत्म स्वीकृति के आइने में
इंसानियत को समझने की
दूसरी कड़ी...

आत्मस्वीकृति विशेषांक : दो

तात्स्तोय, रूसो, सोफिया लॉरेन, रवींद्रनाथ टैगोर, जवाहरलाल नेहरू, चर्चिल, चार्ली चैप्लिन, रामधारी सिंह दिनकर, बलराज साहनी, अमृता प्रीतम, ब्रेख्त, कृश्नचंदर, दुर्गा खोटे, ख्रुश्चेव, सत्यजित राय, और धीरेंद्र अस्थाना के आत्मस्वीकार जिनके बारे में जानकर आप अपने आप से डरने की बजाय खुद को पहचानने लगेंगे.

कामू, काफ्का, विला कॉथर, खादिया बेगम, साला पास्लोविज, बारबरा पास्किन, युकियो मिशिमा, चेग्वारा, फिदेल कास्त्रो जैसे रचनाकारों की संग्रहणीय रचनाएं

... और साथ में

प्रेमचंद की दुर्लभ रचनाएं : दो
रामेश्वर शुक्ल अंचल की लंबी कहानी : 'देहगाथा'.
कथाकार नाटककार लक्ष्मी नारायण लाल की पुण्य तिथि पर...
विशेष कथा-रचना : 'गारुणिक'
दास्ताने अलफ-लैला..., रुपहली रातें और अन्य स्थायी स्तंभ
डा. नामवर सिंह से लंबी बातचीत की तीसरी किस्त में विचारोत्तेजक मुद्दों पर गंभीर चर्चा.
रोचक किस्सा अमीर अली ठग का जो दरअसल नर-कंकालों का सौदागर था.
लंदन के लाश चोर की हैरतअंगेज दास्तान.

नवंबर, 1988

हर महीने पत्रिका की कीमत पर
एक समूची किताब का भरा- पूरा संसार

सारिका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तर प्रदेश

जनकवि बाबा नागार्जुन को उत्तर प्रदेश के भारत भारती पुरस्कार दिये जाने की घोषणा से कविता-जगत में हर्ष की लहर दौड़ गयी. इससे पूर्व यह पुरस्कार कथाकार अमृत लाल नागर को प्रदान किया था. यह पुरस्कार एक लाख रुपये का है.

गोरखपुर से निकलने वाली प्रसिद्ध साहित्यिक त्रैमासिक पत्रिका 'दस्तावेज' को उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान ने 'सरस्वती' पुरस्कार से सम्मानित किया है. यह पुरस्कार पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी से संपादन में निकलने वाली ऐतिहासिक पत्रिका 'सरस्वती' के नाम पर इस वर्ष से शुरू हुआ है और पहली बार इसे प्राप्त करन का श्रेय 'दस्तावेज' को है. पुरस्कार की राशि रु. 7000. है 'दस्तावेज' के संपादक हिंदी के प्रसिद्ध कवि और आलोचक डा. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी हैं.

बिहार

पिछले दिनों राजभाषा विभाग, बिहार सरकार द्वारा आयोजित समारोह में विविध साहित्यकारों को पुरस्कृत किया गया। यह पुरस्कार लगभग साठ हिंदी-सेवियों को प्रदान किये गये. इनमें प्रमुख हैं— जानकी वल्लभ शास्त्री, प्रफुल्ल चंद्र ओझा मुक्त, राजेंद्र अवस्थी, विशंभर नाथ उपाध्याय और कथाकार चित्रा मुद्गल.

दिल्ली

हाल ही में भोपाल के युवा कथाकार मंजूर एहतेशाम को द्वितीय श्रीकांत वर्मा पुरस्कार से सम्मानित किया गया. यह पुरस्कार उन्हें चर्चित उपन्यास— 'सूखा बरगद' के लिए दिया गया है. स्मृति चिन्ह और पांच हजार रुपये का यह पुरस्कार उन्हें सुप्रसिद्ध कथाकार निर्मल वर्मा ने प्रदान किया. इससे पूर्व यह पुरस्कार मध्यप्रदेश के ही कवि-कथाकार राजेश जोशी को प्रदान किया गया था. इस अवसर पर श्रीमती वीणा वर्मा व कवि अशोक बाजपेई भी उपस्थित थे. इसी समारोह में प्रतिष्ठित कथाकार कृष्णा सोबती ने 'पूर्वग्रह' के उस अंक का भी विमोचन किया जिसमें कवि-कथाकार श्रीकांत वर्मा की अनेक रचनाएं प्रकाशित हुई हैं.

मध्य प्रदेश

मध्य प्रदेश शासन द्वारा हाल ही में प्रख्यात कवि-कथाकार नागार्जुन को मैथिलीशरण गुप्त पुरस्कार से सम्मानित करने की घोषणा की गयी है.

इन सभी रचनाकारों को 'सारिका' की ओर से हार्दिक बधाई! □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar